पंजाब से लघुकथाएँ

संपादन

अशोक भाटिया

शाम हो गयी थी। सूरज दूर पश्चिम की तरफ़ डूब चुका था, पर अभी अंधेरा नहीं हुआ था। चारों तरफ़ सलेटी रंग फैला हुआ था, जब सारे काम से थका-हारा एक किसान अपने घर लौटा। उसके सिर पर चारे की गांठ थी और हाथों में परैण। चारे की गांठ टोके के आगे फेंक उसने बैलों के गले से पंजाली उतार कर उन्हें खुरली पर बांधा।

''आज काफ़ी देर कर दी।'' रसोई में बैठी घरवाली ने पूछा।

''वह कीकर वाला खेत जोत रहा था। सोचा अब जोतकर ही चलता हूं सारा...क्या छोड़कर जाना है।'' उसके चेहरे की तरह उसकी आवाज़ से भी थकावट झलक रही थी।

''यह पानी रखा है गर्म...हाथ-पांव धो लेने थे।''

''पशुओं को चारा डाल लूं पहले, जिन्हें सारा दिन जोता है।'' उसको एहसास नहीं था कि पशुओं के साथ वह भी सारा दिन चलता ही रहा है।

उसकी जवान बीवी रोटी बनाने लगी और वह टोका चलाने लगा। चारे की गांठ कुतरकर उसमें तूड़ी मिला बैलों की खुरली में डाली। बैल चारा खाने लगे और वह पानी बर्तन में डाल हाथ-पांव धोने लगा। चार और सात साल के उसके दोनों बच्चे कभी के सो चुके थे।

गहरी रात गए वह रोटी खाकर फ़ारिग हुआ। बैलों को फिर और चारा डाला और पंजाली के रस्से ठीक कर, परैण ठीक जगह पर संभाल वह चारपाई पर लेटते अपनी घरवाली से कहने लगा, ''सुबह जरा जल्दी जगा देना, मुर्गे की बांग के साथ....वह रोटी वाला खेत खत्म करना है।''

सुरमे से भरी पलकों से उसकी बीवी ने उसकी तरफ़ झांका, पर वह करवट लेकर सो चुका था। और खिले तारों की तरफ़ झांकती वह रात जैसी एक आह भरकर रह गई।

— इसी पुस्तक से

अशोक भाटिया—अम्बाला छावनी में जन्म। हिंदी में पीएच.डी। पूर्व एसोसिएट प्रोफेसर। आजकल सामाजिक कार्य और स्वतंत्र लेखन। **लेखन-क्षेत्र :** कविता, लघुकथा, बाल साहित्य, व्यंग्य, आलोचना। **प्रकाशित पुस्तकें :** 12 मौलिक और 12 संपादित पुस्तकें। लघुकथा-संग्रह 'जंगल में आदमी ' और 'अंधेरे में आंख' (तमिल व मराठी में भी)। संपादित पुस्तकों में 'निर्वाचित लघुकथाएं' (हिंदी लघुकथा की संपूर्ण यात्रा), 'नींव के नायक' (1970 तक की हिंदी लघुकथाओं का दस्तावेज़) और आलोचना में 'समकालीन हिंदी लघुकथा' विशेष चर्चित। **संपर्क :** 1882, सेक्टर 13, करनाल-132001 (हरियाणा)। **फोन :** 094161-52100 **ई-मेल :** ashokbhatiahes@gmail.com

© साहित्य उपक्रम

साहित्य उपक्रम
B-7, सरस्वती कॉम्पलैक्स, सुभाष चौक
लक्ष्मी नगर, दिल्ली–110092
E mail : sahitya_upkram@yahoo.co.in
Phone : 91-9818603345, 91-9350809192

ISBN : 81–8235–132–5

प्रथम संस्करण : अक्टूबर 2015

लेजर टाइपसेटिंग
साहित्य उपक्रम

मुद्रक
अर्पित प्रिंटोग्राफर्स, दिल्ली–32
ई–मेल : arpitprinto@yahoo.com

आवरण
संयोजन : सुधीर वत्स

मूल्य : 125 रुपये

पंजाब से लघुकथाएँ

संपादन

अशोक भाटिया

सहयोग

जगदीश राय कुलरियाँ

साहित्य उपक्रम

साहित्य से दोस्ती

अनुक्रम

आज का पंजाब और ये लघुकथाएँ *अशोक भाटिया*		11
	विभाजन की त्रासदी	
इब्न-ए-इंशा	अलग देश	16
कमलेश भारतीय	दुखवा मैं कैसे कहूँ....	17
जंग बहादुर सिंह घुम्मण	अपने ही	18
जगदीश राय कुलरियाँ	उपाय	20
प्रेमसिंह बरनालवी	औरत का मजहब	21
सआदत हसन मंटो	बेखबरी का फ़ायदा	23
	करामात	23
	कसरे-नफसी	24
	पेशबन्दी	24
	हलाल और झटका	24
	मुनासिब कार्रवाई	25
	खाद	25
सेवा सिंह कोहली	गाँव की बेटी	26
हरनाम सिंह	विभाजन की पीड़ा	28
	वर्दी के दाग	29
	नक्सलवाद	
सुरिंदर कैले	नक्सली	32
	आतंकवाद के खिलाफ	
अमरजीत सिंह	आतंकवादी	34
कमल चोपड़ा	छोनू	35
कुलदीप तर्क	नंगा नाच	36
चरन सिंह	सज़ा	37
जगदीश अरमानी	चाकू	38
तलविंदर सिंह	मुकाबला	39
नूर संतोखपुरी	वृक्ष	40

प्रीत नीतपुर	कर्फ़्यू	41
प्रेम विज	अटूट बंधन	42
प्रेमसिंह बरनालवी	दोहरी सवारी	44
	मैं वो नहीं	45
	विभाजन-रेखा	45
विक्रमजीत नूर	डर	47
मित्रसैन मीत	अनिश्चय	48
सिमर सदोष	मुठभेड़	49
सुरिंदर कैले	चक्की के पाटों के बीच	50
हरजिंदर पाल कौर कंग	उजड़े पथ के पथिक	51
हरभजन खेमकरनी	दहलीज़	52
	नशे के खिलाफ	
कमल चोपड़ा	कत्ल में शामिल	54
	अंधेरे कुएं में छलांग	55
कुलविंदर कौशल	पश्चात्ताप	58
जगदीश राय कुलरियाँ	स्वाभिमान	59
दर्शन सिंह बरेटा	खामोशी का दर्द	60
डॉ. श्याम सुन्दर दीप्ति	परेशानी	61
सआदत हसन मंटो	अपनी-अपनी डफली	63
सुखचैन थांदेवाला	तरक्की	64
हरभजन सिंह खेमकरनी	मकरी गंध	65
	तर्कशीलता की ओर	
अवतार सिंह कंवर	मन्नत	68
कुलविंदर कौशल	कुर्बानी	69
	तलाश	69
गुरमेल मडाहड़	चेतना	70
जसबीर बेदर्द लंगेरी	मंदिर	71
जसवीर ढंड	निश्चिन्त	72
दर्शन सिंह बरेटा	टेढ़ी उंगली	74
परमिंदर हुंदल	मन्नत का सफर	76
वरियाम सिंह	सवाल	77
श्याम सुंदर अग्रवाल	चमत्कार	78
सुरिदंर कैले	उपाय	79

पश्चिमी पंजाब की हवाएं

तबस्सुम महताब	तलाक	82
	शादी	82
मोहसिन अराईं	मुट्ठी-भर मिट्टी	83
	उपाय	83
मुहम्मद मुनीर शेरवानी	फूल चोर	84
अख़लाक हैदराबादी	जरूरत	85
ज़मील अहमद पाल	शुक्रगुज़ार	86
लियाक़त आरज़ू	गत्ते के टुकड़े	87
अहमद शाहबाज़ खावर	हमदर्दी	88
अमजद अली शाकिर	कामरेड	89
	हाज़ी	89
सुल्तान खारवी	बाबा बोहड़	90

पंजाब के गली कूचों से

अजमेर सिंह औलख	दोराहे पर	94
अनवंत कौर	क्या....?	95
अमर कोमल	स्टैण्डर्ड	96
अमरजीत सिंह	मंद मंद लौ	98
	ग्राहक	98
अश्वनी खुडाल	जाग	100
अशोक लव	चमेली की चाय	101
आशा शैली	नींद	103
उपेन्द्रनाथ 'अश्क'	केवल जाति के लिए	104
	दो आने की मिठाई	105
कमल चौपड़ा	इतनी दूर	107
कमलेश भारतीय	डर	109
	आइना	110
कर्मजीत सिंह नडाला	बाहर का मोह	111
	भूकम्प	112
	पराली का सेंक	113
कर्मवीर सिंह	स्वेटर	114
कुलविंदर कौशल	मुआवजा	115
	नई सुबह	115
गुरचरण चौहान	ढह रहे बुर्ज	117

गुरमेल मडाहड़	राज़	119
जगदीश अरमानी	आधा आदमी	120
जगदीश राय कुलरियाँ	मुक्ति	121
	एक गदर और	122
	कीमत	122
	साँप	123
	बस और नहीं	124
जसबीर चावला	विधान	125
जसबीर ढंड	छमाहियाँ	126
	छोटे-छोटे ईसा	127
	प्रलय से पहले	128
जोगिन्दर सिंह 'निराला'	कहानी लेखक	130
जोगेन्दर पाल	मनुष्य की महानता	131
	ताल	131
	मशीनें	131
	पेशेवर	131
तरसेम गुजराल	पहाड़ों पर चढ़ने वाली	133
तृपत भट्टी	अच्छा बीजी	134
दर्शन जोगा	जालों वाली छत	135
दर्शन मितवा	कुत्ते का खाना	137
जसबीर बेदर्द लंगेरी	लाल बूटियों वाला सूट	138
दर्शन सिंह बरेटा	प्रतिबिंब	139
	बगावत	140
	जागृति	141
दलीपसिंह वासन	रिश्ते का नामकरण	143
धर्मपाल साहिल	आखिर औरत ही	145
	व्यापार	146
निरंजन बोहा	नये क्षितिज	147
	अपनी मिट्टी	147
	रिश्तों के अर्थ	148
	शीशा	149
प्रताप सिंह सोढ़ी	संरक्षण	151
प्रीत नीतपुर	गरीब की बेटी	153
	गरीबों का गहना	154
प्रीतम बराड़ लंडे	गरीबमार	155

	ऐनकों वाला टिड्डा	156
पृथ्वीराज अरोड़ा	कथा नहीं	157
	दु:ख	158
	पल	159
	प्रेम विज	161
	अनुत्तरित	161
प्रेम सिंह बरनालवी	मुर्दे का धर्म	162
	बापू के बंदर	163
	अमानत	163
पांधी ननकानवी	गिफ्ट	166
	न्याय	167
फूलचन्द मानव	सख्ती	168
बलदेव सिंह खहरा	उलटी गंगा	169
	पीढ़ी का अन्तर	170
बलवीर परवाना	किसान और उसकी बीवी	171
बलवंत कौर चांद	बेगानी रोटी	172
बिक्रमजीत नूर	इस बार	173
	उदारीकरण	174
	लोक लाज	175
	कदर–कीमत	176
भीम सिंह गरचा	अक्ल का काम	177
भुवनेश कुमार	आत्म–परीक्षा	178
	काबुलीवाला	179
भूपिंदर सिंह	पहुँचा हुआ फ़कीर	181
	रोटी का टुकड़ा	181
मंगत कुलजिंद	फ्रीज़	183
मधु संधु	बिगड़ैल औरत	184
महिन्द्र फराग	विज्ञापन	185
मित्र सेन मीत	चालाक लोग	186
रमेश बत्तरा	सूअर	188
	लड़ाई	188
	कहूं कहानी	189
रघबीर सिंह महमी	दीवारें	190
रमेश कुमार सन्तोष	कटौती	191
राजेन्द्र सिंह 'साहिल'	फोका टिपुर	193

	यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते...	194
रामसरूप अणखी	पागल	195
रेनू	प्लास्टिक की गुड़ियां	196
लाल सिंह कलसी	रिटायर्ड आदमी	197
वरियाम सिंह	काली धूप	199
शरन मक्कड़	रिश्वतखोर	201
श्याम सुन्दर अग्रवाल	राह में पड़ता गांव	202
	खून का असर	202
	आदमी	203
	अपना-अपना दर्द	204
	एक पवित्र लड़की	205
श्याम सुन्दर दीप्ति	दिन-रात का फर्क	207
	रिश्ता	208
	हिम्मत	209
	बीज	210
सत्यपाल खुल्लर	कलाकृति	212
	बंधन	213
	विभाजन	214
सतीशराज पुष्करणा	मन के साँप	215
	झूठा अहम्	216
	जमीन से जुड़कर	218
सुखचरण सिंह सिद्धू	होठो के निशान	220
सुखचैन थांदेवाला	प्रताप	221
सुखवंत मरवाहा	शेर और आदमी	223
सिमर सदोष	एक और द्रोपदी	224
	पंजाबी पुत्तर	224
	जाट का बेटा	226
	पांच मर्द	226
	वीनस का बुत	227
सुरिंदर कैले	किराए का मकान	229
	सबक	230
	भयानक बीमारी	231
	मजदूर	232
सुरेन्द्र मंथन	भीड़ में	233
	चोर	234

	सत्ताधीश	235
	ईंट-गारे का मकान	235
सुलक्खन मीत	रिश्ता	237
	पिता	238
सैली बलजीत	बाज़ार	239
हरप्रीत सिंह राणा	खुशी	240
	चौथा महायुद्ध	240
	अधूरी औरत	241
हरभजन खेमकरनी	चिकना घड़ा	243
	फालतू खर्च	244
	उपाय	245
हरमनजीत	दीमक	246
लेखकों के बारे में		247

आज का पंजाब और ये लघुकथाएँ

आदरणीय पाठको!

पीरों-फकीरों की धरती पंजाब सामाजिक आंदोलनों की धरती भी रही है। कभी खेतों और खेलों में देश में पहले पायदान पर रहने वाला पंजाब आज कई तरह के संकटों से जूझ रहा है। सन् 1861 में लाहौर से शिक्षा की जो शुरूआत हुई थी, उसका वर्तमान पंजाब पर कोई असर नज़र नहीं आता।

सन् 2009 में पंजाब सरकार ने हाई कोर्ट में माना कि प्रदेश के तीन चौथाई नौजवान नशे की गिरफ़्त में हैं। अस्सी के दशक में दहशतगर्दी ने पंजाब को पीछे धकेल दिया था। लेकिन अब नशे के आतंक ने नौजवान पीढ़ी को बर्बादी के किनारे ला खड़ा किया है। आज पंजाब मादक पदार्थों के अवैध कारोबार का सबसे बड़ा अड्डा बन गया है।

कन्या भ्रूण-हत्या पंजाब-हरियाणा का एक बड़ा और शर्मनाक सच है। बाहर से सभ्य और समृद्ध लगने वाले इन प्रदेशों की पिछड़ी मानसिकता का परिणाम यह हुआ कि देश में सबसे कम लिंग अनुपात इन्हीं दो प्रदेशों का है। इस मामले में पंजाब का सुनाम (जिला संगरूर) दूसरा निठारी साबित हुआ है।

प्रवास पंजाब का खास शौक रहा है। आर्थिक तंगी के समाधान के रूप में देखा जाने वाला प्रवास अब पंजाब का नासूर बन गया है। लाखों रुपए लेकर एक लड़की को ब्याह ले जाओ, फिर कोई साल भर बाद तलाक देकर छोड़ दो और इसे भला करने का नाम दे दो। फिर भला करने को एक और लड़की पंजाब से ले जाओ...। इसमें कबूतरबाजी, रिश्तों की टूटन, संवेदनहीनता, मजबूरियाँ....कई कुछ है।

पंजाब में एक 'तर्कशील सोसायटी' है, जो 1984-85 से अंधविश्वासों के खिलाफ अंधेरे में आंख की तरह काम कर रही है। वैज्ञानिक मिज़ाज को बढ़ावा देने में जुटी इस संस्था की अपनी पत्रिका है, नेटवर्किंग है। पंजाबी-हिंदी में निकलने वाली 'तर्कशील' द्वैमासिक की करीब 15,000 प्रतियाँ अपनी तार्किकता का असर जरूर डालती होंगी।

हिंदी लघुकथा की तरह पंजाबी की मिन्नी कहानी आकार और फलक में

कहानी से छोटी होती है। कमोबेश यही रूप उर्दू में अफसानचा, मलयालम में चिरूकथा या चेरिया कथा, कन्नड़ में सन्न कथा, तेलुगु में कथानिका, तमिल में कुट्टिकदैकल, असमिया में छिति गल्प, मराठी में कथिका कहलाता है। मिन्नी कहानी की शुरूआत को देखना हो, तो उसके लिए 1972 और 1973 के वर्ष बड़े महत्वपूर्ण रहे। 1972 में रोशन फूलवी और ओमप्रकाश गासो द्वारा 'तरकश' नाम से मिन्नी कहानी संकलन का संपादन सामने आना और इसी वर्ष जुलाई में सुरिंदर कैले द्वारा 'अणु' (त्रैमासिक) पत्रिका की शुरूआत होना जिसमें मिन्नी कहानियां भी शामिल थीं—दोनों घटनाएं बताती हैं कि 1972 से पहले मिन्नी कहानी लिखी जाने लगी थी। वर्ष 1973 में शरन मक्कड़ और अनवंत कौर द्वारा फिर एक मिन्नी कहानी-संकलन का संपादन सामने आता है—'अब जूझन को दाऊं'। कह सकते हैं कि 1970 के आसपास लेखकों का एक वर्ग विभिन्न कारणों से मिन्नी कहानी लेखन में हाथ अजमाने लगा था।

इसी प्रकार सन् 1987 और 1988 भी मिन्नी कहानी की यात्रा के लिए महत्वपूर्ण वर्ष हैं। 1987 में 'अणु' पत्रिका के सिल्वर जुबली अंक में पश्चिमी पंजाब की मिन्नी कहानियों का विशेषांक इसे नया आयाम देता है। अक्टूबर 1988 में डॉ. श्याम सुन्दर दीप्ति और श्याम सुन्दर अग्रवाल द्वारा मिन्नी कहानी पर केंद्रित पत्रिका 'मिन्नी' शुरू की गई, जो मिन्नी कहानी के विकास में ऐतिहासिक घटना साबित हुई। अब तक, 'अणु' 42 वर्ष और 'मिन्नी' 108 अंक पूरे कर चुकी हैं। 2011 से 'छिण' पत्रिका (त्रिपत भट्टी, हरप्रीत सिंह राणा) भी मिन्नी कहानी में योगदान दे रही है।

मिन्नी कहानी की केन्द्रीय पत्रिका 'मिन्नी' के संपादन मंडल में बाद में कथाकार बिक्रमजीत नूर और आलोचक डॉ. अनूप सिंह जुड़ गए। 'मिन्नी' द्वारा निकाले अनेक विशेषांकों में आतंकवाद की समस्या पर 'अक्स पंजाब', वृद्ध जीवन पर दो अंक- पिछले पहर, जीवन सन्ध्या; अंधविश्वासों के खिलाफ 'तर्क के पंख' अंक; बाल मनोविज्ञान अंक और नारी अंक खासतौर से ध्यान खींचते हैं। इन अंकों द्वारा संपादकों ने मिन्नी कहानी लेखन को अपने समय से जोड़ने के प्रयास किए। साथ ही खलील जिब्रान (अरबी), मंटो (उर्दू), प्रेमचंद व हरिशंकर परसाई (हिंदी) की लघुकथाओं पर विशेषांक निकालकर विमर्श की नई आधारभूमि प्रदान की। 'अणु ने भी शहरी नारी और ग्रामीण नारी-दो अंक निकालकर ऐसी भूमिका अदा की। आज अगर 'पंजाबी ट्रिब्यून' (चंडीगढ़), 'नवां जमाना' (जालंधर) और 'अजीत' (जालंधर) पंजाबी में और 'दैनिक ट्रिब्यून' (चंडीगढ़) और 'अजीत समाचार' (जालंधर)

हिंदी समाचार-पत्र तथा 'धरती दा सूरज' (मासिक फगवाड़ा), 'लोरी (मासिक कपूरथला) और मरहम (मासिक नाभा) पंजाबी पत्रिकाएं मिन्नी कहानी को समुचित स्थान दे रही हैं, तो यह मिन्नी कहानी की सामाजिक जरूरत का पुख्ता सुबूत है।

दो बातें इस किताब के बारे। पंजाब से लघुकथाएं' का अर्थ पंजाब में जन्में पले या रह रहे/काम कर रहे लेखकों की लघुकथाओं से है। इनमें पंजाबी के साथ हिन्दी और उर्दू की लघुकथाएं भी शामिल हैं। एक तरह से यह किताब पंजाबियत की किताब है। इसलिए इसमें पश्चिमी पंजाब (अब पाकिस्तान) की मिन्नी कहानियां भी ली गई हैं। भाषाई दृष्टि से यहाँ प्रमुखता पंजाबी लघुकथाओं की है।

इस पुस्तक में पंजाब के आइने में मिन्नी कहानी को देखने की एक कोशिश की गई है, इसीलिए रचनाओं को उपखंडों में रखा गया है। इन रचनाओं में तीन पीढ़ियों की सृजनात्मकता देखी जा सकती है। पहली पीढ़ी में उपेन्द्रनाथ अश्क (हिंदी), मंटो, इब्न-ए-इंशा, जोगेन्दर पाल (उर्दू), पांधी ननकानवी, अनवंत कौर, जगदीश अरमानी, रोशन फूलवी, भूपिंदर सिंह पी.सी.एस. शरन मक्कड़, सुलक्खन मीत (पंजाबी) आदि हैं। दूसरी पीढ़ी ने मिन्नी कहानी को अपने कंधों पर उठाकर पंजाब से बाहर करनाल, डलहौजी, इंदौर, सिरसा, दिल्ली, धर्मशाला तक विमर्श का सफर कराया। इस पीढ़ी में डॉ. श्याम सुन्दर दीप्ति, श्याम सुन्दर अग्रवाल, हरभजन खेमकरनी, सुरिंदर कैले, बिक्रमजीत नूर, सत्यपाल खुल्लर, निरंजन बोहा, अमर कोमल, बलदेव सिंह खहरा आदि आते हैं। तीसरी पीढ़ी में दर्शन सिंह बरेटा , कर्मजीत सिंह नडाला, जगदीश कुलरियां, हरप्रीत सिंह राणा आदि युवा आते हैं। मिन्नी कहानी द्वारा समाज को प्रतिनिधित्व देने का जिम्मा अब इस पीढ़ी पर है।

पंजाबी लघुकथाओं पर हिंदी में पहले भी काम हुआ है। डॉ. श्याम सुन्दर दीप्ति और श्याम सुन्दर अग्रवाल की संपादित पुस्तकों के अलावा भगीरथ और सुभाष नीरव का इस क्षेत्र में काम है। सन् 1990 में मेरी संपादित-अनूदित पुस्तक 'श्रेष्ठ पंजाबी लघुकथाएं' संयोग से किसी दूसरी भाषा से हिंदी में पुस्तक रूप में आने वाली पहली लघुकथा पुस्तक थी। प्रस्तुत पुस्तक उस किताब के सिल्वर जुबली वर्ष (2015) में सामने लाते हुए विशेष हर्ष का होना स्वाभाविक है। विभिन्न स्रोतों से संजोई गई इन लघुकथाओं का अनुवाद प्रस्तुत पंक्तियों के लेखक के अलावा, श्याम सुन्दर अग्रवाल, जगदीश राय कुलरियां और डॉ. श्याम सुन्दर दीप्ति ने किया है।

प्रिय पाठको! इन लघुकथाओं में आपको शासन और प्रशासन, समाज और परिवार के विभिन्न रंग देखने को मिलेंगे। लगातार गहराते सांस्कृतिक संकट में आपको यहां टूटते हुए रिश्ते भी मिलेंगे, निभाए जा रहे रिश्ते भी; अंधविश्वास भी और उनकी तर्कपूर्ण रचनात्मक खिलाफ़त भी, दहशतगर्दी भी और इन्सानियत भी, कुल मिलाकर जिंदगी की धड़कनें हैं ये लघुकथाएं। आपको कैसी लगीं?– जरूर बताइएगा। इनमें पंजाब और भारत का अक्स कितना है?–आप ही बताएं।

अशोक भाटिया
1882, सेक्टर 13
करनाल– 132001 (हरियाणा)
94161–52100
ashokbhatiahes@gmail.com

गांधी जयंती 2015

विभाजन की त्रासदी

इब्न–ए–इंशा	–	अलग देश
कमलेश भारतीय	–	दुखवा में कैसे कहूँ...
जंग बहादुर सिंह घुम्मण	–	अपने ही
जगदीश राय कुलरियां	–	उपाय
प्रेम सिंह बरनालवी	–	औरत का मजहब
सआदत हसन मंटो	–	बेखबरी का फायदा
		करामात
		कसरे–नफसी
		पेशबन्दी
		हलाल और झटका
		मुनासिब कार्रवाई
		खाद
सेवा सिंह कोहली	–	गांव की बेटी
हरनाम सिंह	–	विभाजन की पीड़ा
		वर्दी के दाग

इब्न-ए-इंशा

अलग देश

'ईरान में कौन रहते हैं?'
'ईरान में ईरानी कौम रहती है।'
'इंग्लिस्तान (इंग्लैंड) में कौन रहता है?'
'इंग्लिस्तान में अंग्रेजी कौम रहती है?'
'फ्रांस में कौन रहता है?'
'फ्रांस में फ्रांसीसी कौम रहती है।'
'यह कौन सा मुल्क है?'
'यह पाकिस्तान है!'
'इसमें पाकिस्तानी कौम रहती होगी?'

'नहीं, इसमें पाकिस्तानी कौम नहीं रहती। इसमें सिंधी कौम रहती है। इसमें पंजाबी कौम रहती है। इसमें बंगाली कौम रहती है। इसमें यह कौम रहती है, इसमें वह कौम रहती है।'

'लेकिन पंजाबी तो हिन्दुस्तान में भी रहते हैं! सिंधी भी हिन्दुस्तान में रहते हैं! बंगाली हिन्दुस्तान में रहते हैं! फिर यह अलग देश क्यों बनाया गया था?'

'गलती हुई। माफ कर दीजिए। अब कभी नहीं बनाएंगे।'

कमलेश भारतीय

दुखवा मैं कैसे कहूँ....

घर का बूढ़ा बुजुर्ग आखिरी सांसें ले रहा था, लेकिन कुछ कहने को बैचेन हो रहा था। उसकी आंखें कभी ज़मीन पर, तो कभी अपने आस-पास देख रही थीं। ओंठ कुछ कहने को खुलते, फिर बंद हो जाते।

घर के सभी छोटे-बड़े प्राणी उसकी चारपाई को चारों तरफ से घेरकर खड़े थे। आखिर उसके पोते से उसकी यह हालत नहीं देखी गई। अपने आंसुओं से दादा के पैरों को भिगोता, माथा टेकते हुए कहने लगा, ''बाबाजी कहो, क्या कहना है, जिससे तुम्हारे मन को चैन आए।''

बाबाजी ने कोशिश करके बंद आंखें खोलीं फिर सबकी तरफ देखा और धीमे से कहने लगा—मेरे बच्चो! मेरा जन्म उस पंजाब में हुआ था जिसमें अमृतसर और लाहौर एक-दूसरे की तरफ़ पीठ करके नहीं बैठते थे, बल्कि एक-दूसरे के गले लगकर मिलते थे...हाए...फिर उनका बिछड़ना भी इन आंखों ने देखा...कैसे कहूँ...

''कहो न बाबाजी''...।

''मेरे बच्चो! मेरी जवानी उस पंजाब के खेतों को हरा-भरा करने में चली गई, जिसे इन्सान के खून से नहलाया गया...आह...आगे की कहानी...कैसे बताऊँ....कितना खतरनाक वक्त आ गया...बँटवारे की धुँधली तस्वीर सामने आ गई....मैं तुम सबको सही-सलामत पंजाब से निकाल लाया....तुम मुझे पंजाब से अनजान धरती पर ले जाए....अब

''दुख कहो न बाबाजी।''

''अब उस धरती पर मैं अपने प्राण छोड़ रहा हूँ, जहाँ... न मैंने बचपन बिताया, न जवानी भोगी....तुमने मिलकर मेरा बुढ़ापा खराब कर दिया है। हे भगवान! कुछ और देखने से पहले...तू मुझे इस धरती से उठा ले....उठा ले।''

इतना कहते ही बूढ़े बुजुर्ग की गर्दन एक तरफ लुढ़क गई—एक प्रश्न-चिह्न बनती हुई।

जंग बहादुर सिंह घुम्मण

अपने ही

1971 की हिन्द पाक जंग के समय 618 इंजीनियर इलैक्ट्रीकल एंड मकैनिकल कम्पनी, जम्मू कश्मीर की छंब जोड़ियां की सरहद पर तैनात थी। जरूरत के ठिकानों पर माइनिंग कर इस के कुछ जवान दुश्मन फौज पर निगाह रखने के लिए दोपहर के समय गश्त कर रहे थे। पाकिस्तान की और से दो जवान उनकी तरफ ही आ रहे थे। अपनी किसी कंपनी के लिए डाक ले जा रहे शायद वे रास्ता भटक गए थे।

''रुको।'' गरजते आदेश से वह रुक गए।

''हैंड्सअप'' इस जोरदार आदेश की पालना में उन्होंने हाथ ऊपर उठा दिए। राइफलों के साथ।

'चलो' और वह भारतीय जवानों के आगे-चलने लगे। उनकी राइफलें कब्जे में कर ली गईं।

कुछ ही समय के पश्चात् वह सूबेदार खुशहाल सिंह के समक्ष पेश किए गए।

'' साब ये हमारे इलाके में घुस आए थे।''

समय और स्थिति के अनुसार गोली ही एक मात्र सजा थी उनके लिए।

'' क्या नाम है तेरा? स्वभाव के मालिक के सूबेदार ने उनमें से एक को ऐसे ही पूछा लिया।''

''मुहम्मद इकबाल पुन्नू।''

''अच्छा।'' यह सुनते ही सूबेदार की आंखों में चमक आ गई। वह खुद भी तो पुन्नू था और विभाजन के समय परिवार सहित बेघर होकर भारत आया था। उस समय मात्र बारह वर्ष का था वो।

''तुम्हारा बई?''

''मुख्त्यार अलो घुम्मण।''

''वाह।''

''इकबाल स्यालकोट गाँव बासू-पुन्नू''

''किसका बेटा है?''

‘‘लंबरदार बसीर अहमद पुन्नू का।’’

‘‘हैं!’’ दंग रहा गए सूबेदार के मुख से सिर्फ इतना ही निकला।

‘‘तू भी बता जवाना।’’

‘‘जिला स्यालकोट गाँव लद्धड़ वलद जावेद अली घुम्मण।’’ सूबेदार के चेहरे पर जैसे कुछ श्रद्धा उभरी।’’

‘‘बैठो जवानो।’’ उस ने कुर्सियों की तरफ इशारा करते हुए कहा ‘‘क्या खाओगे?’’

‘‘हाँ, भूख लगी होगी। रोटी लाओ बई...’’ नर्म पड़ चुके सूबेदार ने अपने जवानों को नर्म बोल से आदेश देते हुए बात जारी रखी ‘‘तुम्हारे लिए मैं गोली का आदेश कैसे दे सकता हूँ? विभाजन के समय हमारे काफले को साथ के गाँव के मुसलमान काट कर ही छोड़ते, परन्तु बशीर अहमद ने उन्हें रोका और अपने साथियों की सहायता से हमें सुरक्षित स्थान पर पहुँचाया। मुख्त्यार मैं भी तुम्हारे गाँव का ही हूँ।’’

सूबेदार इस से अधिक और कुछ न बोल सका था। आदर के साथ उन दोनों को खाना खिलाया और इससे पहले कि रात उतरती, अपने जवानों को साथ लेकर वह खुद उन्हें सुरक्षित सरहद पार करवा कर आया, बिल्कुल वैसे ही जैसे विभाजन के समय बशीर अहमद और जावेद अली ने किया था।

जगदीश राय कुलरियाँ

उपाय

विभाजन की खबरें दिल में छेद कर रही थी। चारों तरफ खून खराबा शुरू हो गया था। जब यह सुना कि उनका गाँव तो पाकिस्तान के हिस्से आ गया है तो हिन्दू-सिक्ख अपने हिस्से के देश में जाने के लिए बेचैन होने लगे। शुरू हुए दंगों के कारण प्रीतम कौर की चिंता की लकीरें और गहरी हो गईं। उसने अपने पति से कहा हम तो चले जाएंगे, यदि मर भी गए तो भी क्या है ? पर यह दो जवान बेटियों को लेकर कहाँ जाएंगे....।''

''यही बात तो मुझे भी बहुत परेशान कर रही है...सुनने में आ रहा है कि दंगाकारी जवान बहू-बेटियों की बहुत परेशान और उनकी इज्जत पर हाथ डाल रहे हैं....'' पति ने कहा।

''यही तो बात है....तुम अकेले किस किस के साथ लड़ोगे....।''

''जब तक मेरे शरीर में जान है....तब तक मेरी बेटियों की तरफ कोई आँख उठाकर भी नहीं देख सकता।''

'पर अक्कों के बापू....यदि आप को कुछ हो गया तो हमारा क्या बनेगा.... ?'

'फिर.... ?'

'मैं तो कहती हूँ अपने हाथ से ही ज़हर दे दो दोनों को....'

'नहीं....'

'आप मानो तो सही....' कम से कम इज्जत तो बच जाएगी... कहाँ बेइज्जत होकर ठोकरें खाती फिरेंगी...साथ में अपना डर भी खत्म हो जाएगा।'

पत्नी की बात से सहमत होते हुए उसने पीड़ादायक सहमति में सिर हिला दिया था।

प्रेमसिंह बरनालवी

औरत का मजहब

नाम था उसका चंद कौर पर बचपन से ही सब प्यार से उसे चन्नी कहने लगे थे। जैसा प्यारा नाम वैसा ही चांद-सा चेहरा।

विभाजन के समय वह पति व परिवार से बिछड़ गयी। सुलेमान नामक आदमी ने उसे घर बिठा लिया। जैसा सीधा-सादा आदमी वैसी ही सपाट बात की, 'चन्नी, हालात पर किसी का वश नहीं। मरे के साथ मरा तो नहीं जाता। जो मजहब आदमी का, वही औरत का। तू अब हमारे समाज का हिस्सा बन गयी है। अब तू मेरी चंदा है, चांद बीबी।'

विवश उसने परिस्थितियों से समझौता कर लिया।

हिंसा-प्रतिहिंसा का गुबार जब शांत हुआ तो दोनों देशों के लोग अपने सबन्धियों को खोजने एक-दूसरे देश जाने लगे।

एक दिन चंदा की भेंट हिन्दुस्तान से आये सूरज प्रकाश से हुई जो उसके शहर शेखपुरा का रहने वाला था। सूरज ने बताया कि चंदा का पति हजूरा सिंह जीवित है और अब दिल्ली शरणार्थी कैंप में ठहरा हुआ है।

औरत सब कुछ भूल सकती है पर प्रथम प्रेम और प्रणय नहीं। भावना के प्रबल वेग में बह वह उसके साथ हो ली। दिल्ली पहुँचने पर सूरज ने सब उगल दिया कि उसका पति दंगों में मारा जा चुका है। खुद उसकी (सूरज की) पत्नी भी हिंसा की भेंट चढ़ गयी। अब वह अकेला है और चांदनी चौक में रेहड़ी लगाता है। काम जम गया है। वह उसे हर तरह से सुखी रखेगा।

एक बार तो उसके जी में आया, इस आदमी का मुंह नोंच डाले। पर नई जगह अनजाने लोगों के बीच बड़ी विकट परिस्थितियों में आ फंसी थी।

वह चाहकर भी मर न सकी।

सूरज ने कहा, 'चन्नी, आओ हम नई जिंदगी शुरू करें। तू पिछला सब कुछ भूल जा। तू अब नये देश और नये समाज में आ गयी है। मैं तुझे अपना छोटा-सा प्यारा नाम देता हूं, शशि यानी चांद।'

वह मूर्तिवत बैठी रही। वह चीख-चीख कर कहना चाहती थी, ''मुझे कोई नाम न दो...'' पर वाणी ने साथ न दिया।

सूरज ने उसकी चुप्पी को मौन स्वीकृति समझ माथा चूम लिया। आसमान में चांद बादलों में अठखेलियां कर रहा था। शरणार्थी कैंप में लोग नमक, आटा, दाल, कैरोसिन आदि के लिए लड़-झगड़ रहे थे।

सआदत हसन मंटो

बेखबरी का फ़ायदा

लिबलिबी दबी पिस्तौल से झुँझालकर गोली बाहर निकली। खिड़की में से बाहर झाँकने वाला आदमी उसी जगह दोहरा हो गया।

लिबलिबी थोड़ी देर बाद फिर दबी—दूसरी गोली, भिनभिनाती हुई बाहर निकली। सड़क पर माशकी की मशक फटी। औंधे मुँह गिरा और उसका लहू मशक के पानी में हल होकर बहने लगा।

लिबलिबी तीसरी बार दबी—निशाना चूक गया। गोली एक गीली दीवार में जज्ब हो गई। चौथी गोली एक बूढ़ी औरत की पीठ में लगी। वह चीख भी न सकी, और वहीं ढेर हो गई। पाँचवी और छठी गोली बेकार गई। कोई हलाक हुआ न जख्मी।

गोलियाँ चलाने वाला भन्ना गया। दफअतन सड़क पर एक छोटा-सा बच्चा दौड़ता दिखाई दिया। गोलियाँ चलाने वाले ने पिस्तौल का मुँह उस तरफ मोड़ा।

उसके साथी ने कहा, ''यह क्या करते हो?''

गोलियाँ चलाने वाले ने पूछा, ''क्यों?''

''गोलियाँ तो खत्म हो चुकी हैं।''

''तुम खामोश रहो। इतने से बच्चे को क्या मालूम?''

करामात

लूटा हुआ माल बरामद करने के लिए पुलिस ने छापे मारने शुरू किए। लोग लूटा हुआ माल डर के मारे रात के अन्धेरे में बाहर फेंकने लगे। कुछ ऐसे भी थे जिन्होंने अपना माल भी मौका पाकर अपने से अलहदा कर दिया ताकि कानूनी गिरफ्त से बचे रहें। एक आदमी को बहुत दिक्कत पेश आई। उसके पास शक्कर की दो बोरियाँ थीं, जो उसने पंसारी की दुकान से लूटी थीं। उनको एक तो वह जो वो रात के अंधेरे में पास वाले कुएँ में फेंक आया। लेकिन दूसरी उठाकर उसमें डालने लगा तो खुद भी साथ चला गया। शोर सुनकर

लोग इकट्ठा हो गये। कुएँ में रस्सियाँ डाली गईं। दो जवान नीचे उतरे और उस आदमी को बाहर निकाल लिया। लेकिन चन्द घंटों के बाद वो मर गया।

दूसरे दिन जब लोगों ने इस्तेमाल के लिए उस कुएँ में से पानी निकाल कर देखा तो वो मीठा था। उसी रात उस आदमी की कब्र पर दिए जल रहे थे।

कसरे–नफसी

चलती गाड़ी रोक ली गई। जो दूसरे मजहब के थे उनको निकाल–निकालकर गोलियों से हलाल कर दिया गया।

इससे फारिग होकर गाड़ी के बाकी मुसाफिरों को हलवे, दूध और फलों से तवाजो करने वालों के मुन्तजिम ने मुसाफिरों को मुखातिब करके कहा, ''भाइयो और बहनो! हमें गाड़ी की आमद की इत्तला बहुत देर में मिली, यही वजह है कि हम जिस तरह चाहते थे उस तरह आपकी खिदमत न कर सके।''

पेशबन्दी

पहली वारदात नाके के होटल के पास हुई। फौरन ही वहाँ एक सिपाही का पहरा लगा दिया गया।

दूसरी वारदात दूसरे ही रोज शाम को स्टोर के सामने हुई। सिपाही को पहली जगह से हटाकर दूसरी वारदात के मुकाम पर मुतअइयन कर दिया गया। तीसरा केस रात के बारह बजे लॉण्ड्री के पास हुआ।

जब इन्पेक्टर ने सिपाही को उस नई जगह पहरा देने का हुक्म दिया तो उसने कुछ देर गौर करने के बाद कहा, 'मुझे वहाँ खड़ा कीजिये जहाँ नई वारदात होने वाली है।'

हलाल और झटका

उसकी शहे–रग पर छुरी रखी, हौले–हौले फेरी और उसको हलाल कर दिया।
''यह तुमने क्या किया?''

''क्यों!''

''इसको हलाल क्यों?''

''मजा आता है इस तरह!''

''मजा आता है के बच्चे झटका करना चाहिए या इस तरह।''

और हलाल करने वाले का झटका हो गया।

मुनासिब कार्रवाई

जब हमला हुआ तो मुहल्ले में से अकलियत के कुछ आदमी तो कत्ल हो गये। जो बाकी थे जानें बचाकर भाग निकले। एक आदमी और उसकी बीवी अलबत्ता अपने घर के तहखाने में छुप गये। दो-दिन और रातें पनाहयाफ़्ता मियाँ बीवी ने कातिलों की मुतवक्के आमद में गुजार दीं , मगर कोई न आया।

दो दिन और गुजर गये। मौत का डर कम होने लगा। भूख और प्यास ने ज्यादा सताना शुरू किया।

चार-दिन और बीत गये। मियाँ बीवी को जिन्दगी और मौत से कोई दिलचस्पी न रही। दोनों जाये-पनाह से बाहर निकल आये। खाविन्द ने बड़ी नहीफ आवाज़ में लोगों को अपनी तरफ मुतवज्जह किया और कहा–

''हम दोनों अपना-आप तुम्हारे हवाले करते हैं, हमें मार डालो।''

जिनको मुतवज्जह किया था वो सोच में पड़ गये। हमारे धर्म में तो जीव-हत्या पाप है।

वे सब जैनी थे। लेकिन उन्होंने आपस में मशविरा किया और मियाँ बीवी को मुनासिब कार्रवाई के लिए दूसरे मुहल्ले के आदमियों के सुपुर्द कर दिया।

खाद

उसकी खुदकुशी पर उसके एक दोस्त ने कहा, 'बहुत ही बेवकूफ़ था जी! मैंने लाख समझाया कि देख अगर तुम्हारे केस काट दिये हैं और तुम्हारी दाढ़ी मूँड दी है तो उसका यह मतलब नहीं कि तुम्हारा धर्म खत्म हो गया है। रोज दही इस्तेमाल करो। वाह गुरु ने चाहा तो एक ही बरस में तुम फिर वैसे हो जाओगे।'

सेवा सिंह कोहली

गाँव की बेटी

इस बार मैंने जब पाकिस्तान के गुरद्वारों की यात्रा के लिए जत्था बनाया तो प्रीतम सिंह मेरे साथ था। पंजा साहब, ननकाना साहब और पाकिस्तान के और गुरुधामों की यात्रा कर जब हम लाहौर पहुँचे तो प्रीतम सिंह ने मुझे एक साइड पर ले जाकर कहा, ''कोहली साहब, मेरी यात्रा तो अभी अधूरी है, यह तो तभी पूरी होगी, यदि आप मुझे मेरा गाँव कोटला सुजान सिंह दिखला दो।''

निवेदन, खुशामद कर हमने पुलिस से इजाजत ली। सड़कों का नक्शा ले हम ने रास्ता तय किया और अगली सुबह और भी जो भी जत्थे में से जाने को तैयार हुआ, उनके साथ जाने का प्रोग्राम बनाया।

सुबह दस बजे के करीब जब वहाँ पहुँचे तो गाँव में दाखिल होते ही एक युवक मिला। पहले तो वह काफी सारे पगड़ी बांधे हुए सिक्खों को देखकर ठिठक गया, पर जब हमारे पाकिस्तानी ड्राइवर ने उसको तसल्ली दी तो हमने नंबरदार का घर पूछा।

एक चौबारे की तरफ इशारा करते हुए उसने बताया कि वह सीमे नंबरदार का घर है। सीमा प्रीतम सिंह का पुराना यार था और वह उस समय घर पर ही था। एक दूसरे को देखते ही उन्होंने पहचान लिया और गले लगकर मिले। पुरानी यादें ताज़ा कीं, लीडरों को खूब कोसा, जिन्होंने अपनी गद्दियों की वजह से देश का विभाजन किया।

हमारे आने की खबर गाँव में जंगल की आग की तरह फैल गई। सारा गाँव इकट्ठा हो गया और उलाहना दिया कि हमने आने की पहले सूचना क्यों न दी। उनकी तमन्ना थी कि वे फूलों के हारों से हमारा स्वागत करते।

विदा होने से पहले, प्रीतम सिंह ने जत्थे के साथ और आए व्यक्तियों की जान पहचान करवानी शुरू की। एक लड़की की तरफ़ इशरा करते हुए उसने कहा, ''यह जोड़े कुएँ वाले सरदारों की बेटी है। विभाजन से दो दिन पहले इसकी शादी हुई थी, इस की डोली चली और फसाद शुरू हो गए। समझो यह शादी के बाद आज पहली बार ही गाँव में आई है।''

सीमे की आँखों में प्यार भरा जलाल आया। उसने अपने बड़े बेटे के कंधे

पर हाथ रखते हुए कहा, ''बेटा जा एक गुड़ की भेली, दो किलो मसर और एक नई-चुनरी लेकर आ। यह ही नहीं सकता कि गाँव की बेटी शादी के बाद पहली दफा गाँव में आए और खाली लौट जाए।''

सीमे के इन बोलों ने सबकी आँखें नम कर डालीं। प्रीतम सिंह ने मुझे झंझोड़ते हुए कहा, ''कोहली यारा, मेरी यात्रा अब पूरी हुई है।''

और मुझे लगा जैसे पल-भर में पंजाब के विभाजन की लकीर हवा में कहीं उड़ गई हो।

हरनाम सिंह

विभाजन की पीड़ा

सैंतालीस की हलचल के समय एक बड़ी हवेली में इकट्ठा हुए हिन्दू सिक्खों को दंगाइयों ने घेरा डाला हुआ था। बाहर पुलिस भी थी। थानेदार और सभी सिपाही मुसलमान थे, इसी बात की अंदर के लोगों को शंका थी।

थानेदार अली मुहम्मद की मंशा थी कि हवेली के अंदर के सभी हथियार पुलिस के पास जमा करवा दिए जाएं। हवेली के अंदर के लोगों का मुखिया चाहता था कि पहले दंगाइयों को भगाया जाए। थानेदार ने बातचीत के बहाने मुखिया को बुलाया और धोखे से गोली मार दी।

गोली चलने व मुखिया की चीख को सुनते ही हवेली के लोग रोष में आ गए और उन्होंने फायरिंग शुरू कर दी। गोलियों से डरती पुलिस और दंगाकारी तितर–बितर हो गए।

उसी समय मिलटरी की दो जीपें वहाँ आ धमकीं। अंग्रेज कप्तान ने जायज़ा लेते हुए हवेली का दरवाजा खुलवाया।

''हमें सुरक्षित बाहर निकालो साहब।'' अन्दर की पंचायत ने निवेदन किया।

''चलो, काफला बना कर चलो।'' कप्तान ने कहा।

''साहब, काफले को तो दंगाई बच कर नहीं जाने देंगे। यहाँ की पुलिस उन के साथ है। पुलिस ने हमारे मुखिया को मार डाला। हमारे लिए मिलटरी ट्रक मंगवाइए...''डरे हुए लोग बोले।

इस के लिए अंग्रेज कप्तान तैयार नहीं था। उसके आगे हाथ पैर जोड़ना सब व्यर्थ थे। कुछ तेज तर्रार लोगों ने स्कीम लगाई। अपने जेवर, पैसे वगैरा सब कुछ एक पोटली में बांधकर उस कप्तान को पकड़ा दिये। स्कीम काम कर गई। मिलटरी ट्रक मंगवा लिए गए। लोगों को असबाब के साथ सरगोधा कैंप की तरफ भेज दिया।

वर्दी के दाग

रंगपुर में दिलावर खान की बड़ी हवेली बिकती बिकती गुरबख्श सिंह ठेकेदार के हाथ लग चुकी थी। यह 1947 की हलचल के समय हिन्दू-सिक्खों के लिए एक बड़ा सहारा बनी थी। फसादियों से बचने के लिए ठेकेदार के भाई प्यारा सिंह निहंग ने आस-पास के हिन्दू-सिक्खों को वहाँ पर इकट्ठा कर लिया। रंगपुर के थानेदार अल्लाह बख्श और गुरुबख्श सिंह की साँठगाँठ भी चलती रही और हरनौली के हथियार बनाने वाले कारीगरों तक भी पहुँचाई गई थी। गैरलाईसेंसी हथियार हवेली में जमा कर लिए गए थे। इस की खबर लगते ही एक दिन फसादियों की एक टोली ने हवेली को आ घेरा। दो-तीन गाँवों में लूट-मार कर चुके दंगाई ललकारने लगे।

''निकलो काफिरों बाहर, हमारे खान साहब की हवेली छोड़ो।'' अंदर से 'जो बोले सो निहाल' का जयकारा गूंजा और जवाब मिला, ''ओए तुरको, भागो नहीं तो जला देंगे-जला।''

तनाव की खबर सुनते ही, अल्लाहबख्श सिपाहियों को लेकर आ धमका। उसने घेरा डाले हुए हजूम के अपने नेता लोगों को पहचान लिया था। उसकी खुशी का कोई ठिकाना नहीं था। उसने हवेली के अंदर के लोगों को रौब से कहा, ''सरकार के सख्त आदेश हैं। अमन चैन बनाए रखना है। तुम सभी सारे हथियार जमा करवा दो। तुम्हें कोई कुछ नहीं कहेगा।''

भीतर सलाह मशविरा हुआ। गुरबख्श सिंह के जरिए जवाब मिला, ''थानेदार साहेब! पहले घेरा तुड़वाओ।''

''पहले हथियार डालो।''

बात फंस गई। थानेदार की चिंता थी कि यदि बात मिलटरी तक चली गई तो उसकी सारी स्कीम धरी रह जाएगी। उसने गुरबख्श सिंह को दोस्ती का वास्ता दिया, कुरान की कसम खाई, सभी की रक्षा का वचन दिया पर अन्दर वालों को यकीन न हुआ।

थानेदार फिर गरजा, ''आखिरी दफा कहता हूँ, नहीं तो फौज बुलवा कर सारी हवेली को उड़ा दूँगा।''

अल्लाहबख्श नर्म पड़ गया। तभी एक सिपाही ने उसके कान में कहा कि ''बख्शे ने डाली भेजने को भी मना कर दिया है जनाब। कहता है—कौन सी डालियाँ, हमें तो जान की फ्रिक है।''

''अच्छा तो यह बात है, अब देख कैसे फिजूल में ही जाता है,'' उसने

दाँव खेला। बातचीत के लिए गुरबख्श सिंह को बाहर आने को कहा। सलाह मशविरे के पश्चात् बातचीत के लिए ठेकेदार बाहर आ गया। गुस्साए थानेदार ने उसे टीले के पीछे ले जाकर भून डाला।

अनुवादः जगदीश राय कुलरियां

नक्सलवाद

सुरिंदर कैले – नक्सली

सुरिंदर कैले

नक्सली

पुलिस दस्ते ने गुरदयाल सिंह को बड़े थानेदार के सामने पेश किया, क्योंकि उसने रात मजदूर की बेतों के साथ जबरदस्ती करने लगे शराबी सिपाही की जमकर पिटाई कर दी थी।

'साले हरामखोर! तुझे पता है, सिपाहियों पर हाथ उठाने वाले की हम मां की....थानेदार की गर्जन बीच में ही रह गई, जब उसने मास्टर की आग बरसाती आंखों की तरफ देखा।

उसने बाहर आकर सिपाहियों को हुक्म दिया–

'डरा–धमकाकर छोड़ दो, साला नक्सली लगता है।'

आतंकवाद के खिलाफ

अमरजीत सिंह	–	आतंकवादी
कमल चोपड़ा	–	छोनू
कुलदीप तर्क	–	नंगा नाच
चरन सिंह	–	सजा
जगदीश अरमानी	–	चाकू
तलविंदर सिंह	–	मुकाबला
नूर संतोखपुरी	–	वृक्ष
प्रीत नीतपुर	–	कर्फ्यू
प्रेम विज	–	अटूट बंधन
प्रेम सिंह बरनालवी	–	दोहरी सवारी, मैं वो नहीं, विभाजन-रेखा
बिक्रमजीत नूर	–	डर
मित्रसेन मीत	–	मुठभेड़
सुरिंदर कैले	–	चक्की के पाटों के बीच
हरजिंदर पाल कौर कंग	–	उजड़े पथ के पथिक
हरभजन खेमकरनी	–	दहलीज

अमरजीत सिंह

आतंकवादी

एक बहुत बड़ा हाल लोगों से खचामच भरा था। शायद कोई त्योहार मनाया जा रहा था। सभी प्रसन्न नज़र आ रहे थे। अचानक तीन-चार आतंकवादी वहां घुस आए अंधाधुंध गोलियां चलाने लगे। कुछ ही मिनटों में वहाँ जिंदगी लाशों में बदल गई। भगदड़ मच गई। कोई विरला ही बच पाया। गोलियां चलाकर आतंकवादी तेज़ी से हाल से बाहर निकलने लगे। एक आतंकवादी ठोकर खाकर एक लाश के ऊपर गिर पड़ा। वह बड़ी मुश्किल उठा और ज़ार-ज़ार रोने लगा। उसका एक साथी तेज़ी से उसकी तरफ़ बढ़ा– ''क्या हो गया तुझे। जल्दी कर, हमारे पास इतना वक्त नहीं है।''

उसने रोते हुए कहा–ठोकर खाकर मैं जिस लाश पर जा गिरा हूँ, वह मेरे चचेरे भाई की है।''

उसके साथी ने कहा – चल-चल जल्दी भाग। उसको तूने थोड़ी मारा है, उसको तो आतंकवादी ने मारा है।'

कमल चोपड़ा

छोनू

रोजी–रोटी की चिंता लिए हुए गुरमुख सिंह घर से निकला ही था कि दंगाई–दरिन्दों ने उसे घेर लिया। लाठियों की तड़ातड़ मार में वह खून, मांस और हड्डियों का ढेर बनता जा रहा था। हैवानियत और दरिंदगी के ठहाके जोर पकड़ रहे थे।

मांस और हड्डियों के खून–सने उस लोथड़े की हलचल रुक गई।

हा....हा....मर गया साला।

अचानक उस सिख का छोटा–सा लड़का कहीं से दौड़ता हुआ आया–''को माल ले ओ मेले डैडी को?''

हैवानियत और दरिंदगी हंसने लगी–मारो इस साले को भी ....ये भी साला सिख का बीज है।

''मैं छिक्ख–छुक्ख नहीं हूँ....मैं बीज–ऊज नहीं हूँ....मैं तू छोनू हूँ!''

कुलदीप तर्क

नंगा नाच

पुलिस-मुखिया के दफ़्तर के बाहर बैठी एक औरत ने अपने साथ बैठी दूसरी औरत से पूछा–''बहन तू इतनी उदास क्यों है?''

''क्या बताऊँ बहन! मेरे बेटे को दहशतगर्द उठाकर ले गए हैं। अब उसे छोड़ने का पचास हजार मांगते हैं।....लेकिन तू क्यों उदास है?''

''मेरे बेटे को पुलिस पकड़ लाई है और छोड़ने का पचास हजार मांग रही है।'' पहली औरत ने आंसू पोंछते हुए कहा।

चरन सिंह

सज़ा

तीन मेहनतकशों को सज़ा इस तरह सुनाई गई।

पहला–तूने दाढ़ी–केश रखे हैं। तू सांप्रदायिक है। चल अंदर।

दूसरा–तेरी दाढ़ी कटी है और केश रखे हैं। तुझे देखकर धोखा लगता है। चल अंदर।

तीसरा– तूने दाढ़ी–केश काटकर भेस बदला है। चल अंदर।

जगदीश अरमानी

चाकू

शहर की हवा बड़ी खराब थी। इतनी खराब कि किसी भी वक्त कोई भी घटना घट सकती थी। आगज़नी, खून–खराबे और लूटमार की घटनाएं आम घटती थीं।

वह जब भी घर से निकलता, उसकी पत्नी उसके घर लौटने की सौ–सौ मन्नतें मानती। जब तक वह घर न लौट आता, उसकी पत्नी को चैन न पड़ता। उसका एक पैर घर के भीतर और दूसरा बाहर होता।

वह भी अब घर से बाहर निकलते हुए अपनी जेब में कमानीदार चाकू रखता और सोचता–अगर मेरे काबू कोई बुरा आदमी आ गया तो एक बार तो उसकी आँत निकालकर रख दूँगा।

वह सोचता–सोचता जा रहा था कि अचानक बाज़ार का एक मोड़ आने पर उसका स्कूटर किर–किच करता सड़क पर से फिसल गया।

दूसरे संप्रदाय के दो अधखड़ उमर के आदमी उसकी तरफ़ दौड़े–दौड़े आये। वह डर गया, पर हिम्मत करके फ़ौरन उठा। शरीर पर कई जगह आयी खरोंचों की परवाह किए बिना उसने तेज़ी से अपना हाथ अपनी जेब में डाला, पर वहाँ कुछ नहीं था।

'बेटा, चोट तो नहीं लगी!' एक ने उससे पूछा।

'नहीं।' उसने धीरे–से कहा और स्कूटर को खड़ा करके स्टार्ट करने लगा।

'बेटा, तेरा चाकू!' दूसरे आदमी ने कुछ दूरी पर उसका गिरा चाकू उठाकर उसे पकड़ाते हुए कहा।

उसने एक नज़र दोनों आदमियों की तरफ़ देखा और नज़रें झुकाकर चाकू पकड़ लिया और तेज़ी से स्कूटर स्टार्ट करके चला गया।

तलविंदर सिंह

मुकाबला

कर्फ्यू में दो घंटे की ढील की खबर देती हुई लोक संपर्क विभाग की जीप आगे निकल गई। रात से भूख से मुरझाए हुए उसके घर के प्राणियों के चेहरों पर पतली-सी खुशी और फीकी-सी उम्मीद की लकीर उभर आई। जल्दी से उसने रंदा, आरी, हथौड़ा,पेंचकस और छोटे-मोटे औजार बोरी में डाले और काम की खोज में निकल पड़ा। शहर की तंग गलियों में जाकर उसने चारपाई ठीक करवाने, दरवाजे-खिड़की को चिटखनी लगवाने, किसी कुर्सी मेज चौकी तिपाई को कील-कांटा लगवाने बारे हाँक लगाई।

लेकिन कर्फ्यू में ढील के कारण लोगों में अफरा-तफरी मची थी। किसी ने उसकी हाँक नहीं सुनी। वह गली-गली, मुहल्ला-दर-मुहल्ला घूमता रहा। हाँक दे-देकर उसका गला सूख गया। आंखों में न-उम्मीदी झलकने लगी।

जीप फिर से कर्फ्यू खत्म होने का ऐलान करती गुज़र गयी। आवाज़ उसके कानों में भी पड़ी। वह घर से कितनी दूर निकल आया था। उसने फिर हाँक लगानी चाही, लेकिन डर की वजह से उसकी आवाज़ टूट गई। टांगों में कंपन की लहरें उठने लगीं। काम मिलने की बजाए घर पहुँचने की फिकर ज्यादा हो गयी।

देखते-देखते शहर खाली हो गया। बाज़ार में जैसे कोई राक्षस घूम गया हो। अब वह अकेला औज़ारों की बोरी कंधे पर डाले तेज़ी से घर को चला जा रहा था।

कहीं से 'हाल्ट' की आवाज़ आई, पर उसे कुछ समझ न आया। उसे घर पहुँचने की जल्दी थी, इसलिए रुकना उसने मुनासिब न समझा।

अचानक 'टींअ' करती एक गोली उसके सीने में जा लगी। खून की धार बहने के साथ ही वह लड़खड़ाकर गिर पड़ा। अगले ही पल वह खामोश हो गया।

नूर संतोखपुरी

वृक्ष

मनोहरलाल के सिवाय, घर के सभी सदस्य पंजाब छोड़कर जाने के लिए तैयार थे। किसी तरह भी मनोहरलाल उनके साथ जाने को तैयार नहीं था।

''वो, यूं ही नहीं धमकियां देते, किसी दिन हमें मार भी सकते हैं।''

उसका बड़ा लड़का रमेश बोला।

''इसे आप भी मरना है, साथ में हमें भी मरवाएगा।'' उसकी पत्नी तारा देवी ने कहा।

''भापा, तुम मानते क्यों नहीं?'' छोटे लड़के बाशी ने खीझकर कहा।

मनोहरलाल ने सभी के चेहरों को गौर से देखा। फिर बोला—''मैं तुम्हारे साथ जाने के लिए तैयार हो सकता हूं। पहले अपने आंगन का पेड़ उखाड़ो।''

''क्यों?'' सभी हैरान होकर उसकी तरफ घूरने लगे।

''मुझे उसे वहां बाहर लगाना है।''

''भापा, तेरा दिमाग तो सही है? इतना बड़ा पेड उखाड़कर दोबारा कैसे लगाया जा सकता है? वह तो सूख जाएगा।'' रमेश ने कहा।

''फिर मुझे भी जाने को मत कहो। मैं वहाँ दोबारा कैसे अपनी जड़ें जमाऊँगा? मुझे नहीं जाना।''

प्रीत नीतपुर

कफ़्र्यू

मेहनत-मजूदरी करके पेट पालने वाली दुखियारी मां के बेटे ने पूछा–''मां, कफ़्र्यू क्या होता है?''

मां ने आंसुओं से भीगी आवाज़ में कहा– गरीबों के रोज़ी रोटी कमाने के रास्ते में कफ़्र्यू कांटों की तरह होता है बेटे।''

तीन दिन से ठंडे पड़े चूल्हे ने मां के उत्तर के सही होने की मुहर लगाई।

मां-बेटे के निःश्वास भुरभुराती दीवारों से टकराकर आत्मघात कर रहे थे।

●

''मम्मी, कफ़्र्यू क्या होता है?''

मम्मी ने खुशी की रौ में लाड़ के साथ कहा, ''आराम करने के लिए, खाली बैठकर खाने के लिए और लोगों के शोर शराबे से कुछ दिन छुटकारा पाने को ही कफ़्र्यू कहते हैं बेटे।''

रसोई से आ रही महक मम्मी के जवाब की पुष्टि कर रही थी।

प्रेम विज

अटूट बंधन

अपनी पत्नी के बहुत समझाने के पश्चात् ही नीरज अपने चाचा के लड़के के विवाह पर पंजाब जाने के लिए तैयार हुआ। पत्नी बहुत हैरान थी कि पहले तो वे कई बार बिना सलाह किए ही चाचा जी को मिलने के लिए प्रोग्राम बना लेते थे, अब इतना समझाया बुझाया, तब कहीं जाने के लिये मना पाई। रात को खाने के समय साहस कर पूछ ही लिया, 'आप चाचा जी के पास जाने से घबराते क्यों हैं? क्या कोई झगड़ा हो गया है? नीरज ने उदास भाव से कहा, ''क्या तुम्हें पता नहीं, चाचा जी पंजाब में रहते हैं और पंजाब में क्या कुछ हो रहा है, यह तो तुम समाचार पत्रों में भी पढ़ते ही हो।''

पत्नी ने झुँझला कर कहा– ''छोड़ो इन बातों को। भला भाई से भाई भी अलग हुए हैं! आप के चाचा जी ने केश रखे हुए हैं। क्या वह आपका कत्ल कर सकते हैं!'' पत्नी की बातों को सुनकर नीरज का कुछ धीरज बंधा और उसने जाने का निश्चय कर लिया।

डर इन्सान की वह कमज़ोरी है जो उसकी आंखों के सामने अविश्वास का पर्दा डाल देती है। नीरज में चाहे हौसला पैदा हो गया था, लेकिन उसके हृदय के किसी कोने में डर अभी भी विद्यमान था। पत्नी से बोला, ''सुबह जल्दी उठा देना, ताकि सूर्य डूबने से पहले घर पहुँच जाऊं।''

वह सूर्य के रहते ही अपने चाचा के शहर होशियारपुर पहुंच भी गया। चाचा होशियारपुर के समीप के एक गाँव में रहते थे। वह पैदल ही चल पड़ा, क्योंकि गाँव जाने का कोई उचित प्रबन्ध नहीं था। वह अभी कुछ ही दूरी पर पहुंचा था कि पीछे एक ट्रैक्टर आता हुआ रुक गया। ट्रैक्टर पर सरदार जी थे, उसे देखकर नीरज एक बार तो अन्दर ही अन्दर काँप गया। सरदार जी ने पंजाबी प्रथा के अनुसार ही कहा, ''बाबूजी तुसी किथे जाना ए।''

नीरज ने दबते हुए होठों से कहा ''यह सामने वाले गांव में।''

''चलो आओ बैठो बाबू जी मैं तुहानं उत्थे उतार देवांगा। मैं भी उधरी हो के जाना है।''

नीरज अभी दुविधा में था कि सरदार जी ने फिर कहा, ''बरखुरदार

इकहरे जिस्म के हो। उत्थे जाँदे-जांदे थक जाओगे। आओ बैठो।''

नीरज सरदार जी की आंखों में क्रोध अथवा घृणा के स्थान पर प्यार को देखकर बहुत प्रसन्न हुआ और ट्रैक्टर पर बैठ गया। नीरज को चुपचाप देख-कर सरदार जी से रहा न गया तो पूछ बैठे, 'की गल ए तुसी बीमार तां नहीं?'

नीरज ने बिना हां, न के सिर हिला दिया। मन ही मन उसके हृदय में पंजाब की भयानक तस्वीर घूम रही थी और इधर सरदार जी का प्यार उसकी आंखों के सामने था।

प्रेमसिंह बरनालवी

दोहरी सवारी

एक लिंक रोड और दूसरा सुबह इतनी ठंड में भला कौन होगा, यह सोच उसने गांव के बूढ़े करतारू को स्कूटर के पीछे बैठा लिया। अभी थोड़ी ही दूर गया था कि दो 'कानून रक्षक' जाने कहां से आ टपके। स्कूटर रुकवा लिया।

एक ने डंडे को बूट की टो पर मारते कहा, ''ओए बंदे देया पुतरा! तुझे पता नहीं कि डबल रैंडिंग मना है। किरपा सिंहा कड्ढ चालान दी कापी ते कर कल्याण।''

उसने सिपाही की मिन्नत की, ''हौलदार साहब, मैं खुद एक डॉक्टर हूं। इसे जरा 'बूटा सिंह वाला' तक जाना था। बूढ़ा आदमी ठहरा....कहें तो अपना डाक्टरी का सामान दिखाऊं!''

''हमें तेरा सामान नहीं सरकार का कानून देखना है।''

उसने स्थिति भांप बीस का एक नोट किरपा सिंह के हाथ में थमा दिया। उसने नोट को जीवन सिद्ध अधिकार समझ जेब के हवाले किया और भले आदमी की तरह कहा, ''ठीक है डॉक्टर साहबजी, जाओ पर आइन्दा....''

जब नीचे उतर आया बूढ़ा बैठने लगा तो सिपाही ने कहा, ''बापू तू इत्थै ही रह!''

''पर मैं अब....''

स्कूटर जाने के बाद कहा, ''बाबा कितने पैसे हैं तेरे खीसे में?'' उसने कांपते हाथों से खीसा टटोला। एक लीर में पांच का नोट और एक अठन्नी बंधी थी।

''ला बाबा नोट इधर!'' कह नोट ऐसे दबोच लिया जैसे पिछले जन्म का कर्ज वजूल रहा हो।

''पर मैं अब घर कैसे जाऊंगा?'' बूढ़े ने भरी आंखों उस सिक्के को लीर में बांधते पूछा।

''तू फिकर न कर बाबा। 'बूटा सिंह वाला' दूर नहीं। कहे तो करतार (भगवान) के पास पहुंचा दें?'' सिपाही ने ठिठोली की।

थोड़ी देर बाद उन्होंने एक स्कूटर को रोक सवार से कहा, ''इस बाबे नू, 'बूटा सिंह वाला' उतार देना।''

मैं वो नहीं

राजधानी को प्रवेश करने वाली मुख्य सड़क को लम्बी लकड़ी से बन्द किया गया था। तेज रफ्तार में एक बुलेट मोटर साइकिल रुकी। सवार का मुंह काले कपड़े से ढका था और खेस ओढ़ा हुआ। तैनात सुरक्षा-बल का जवान कड़का ''कपड़ा हटाओ, कागज दिखाओ!''

उसने खेस थोड़ा सरकाया और स्टेनगन की मैगजीन की ओर इशारा करते तीखे स्वर में कहा, ''लोडेड है (भरी हुई)....बाल-बच्चेदार हो न?''

''ठीक है....ठीक है....'' फिर ऊंची आवाज़ में गेट के पास खड़े साथी से कहा, ''धनपत! गेट ऊपर उठाओ!''

वह तीर हो गया।

कुछ देर बाद दूसरी बुलेट मोटर साइकिल रुकी।

''लाइसेंस, रजिस्ट्रेशन....कहां जाना है?''

''वहीं, जहां थोड़ी देर पहले अपना यार गया है। मेरा ख्याल है उसने तुम्हें सब कुछ दिखा दिया होगा। कहें तो....''

''बस....बस....रहने दो! अरे धनपत! गेट जल्दी ऊपर!''

''सब चेक कर लिया?''

''हां-हां!''

वह भी हवा हो गया।

थोड़ी देर बाद एक थ्री व्हीलर आकर रुका। दोनों ने अपनी पारखी आंखों से बीमार से दीखने वाले ड्राइवर को तौला। फिर एक ने धीमे-से कहा, ''भाई धनपत, यह चलेगा!''

''हां-हां क्यों नहीं!'' धनपत ने कहा। वह आदमी उनके शिकंजे में आ फंसा था।

विभाजन-रेखा

वह थाने में दाखिल हुआ और ढीली खटिया पर बैठे अखबार पढ़ते सिपाही से कहा, ''भाई! वो सामने मेंड़ पर एक आदमी पड़ा है। लगता है उसे लू लग गयी है। अभी उसमें दम है। आप उसे किसी अस्पताल वगैरा...''

उसने वैसे ही राशिफल वाले कॉलम में नज़र गड़ाये कहा, ''तेरा कोई खास सै?''

''जी नहीं। बस इन्सानियत के नाते....''

''तेरे मा घणियो इन्सानियत सै। चल भाग! चार रैपट लगेंगे और सारी इन्सानियत भूल जैगी।''

वह वहां से चल दिया। उसके जाने के बाद जब सिपाही ने वायरलैस से मैसेज पास कर हैड कांस्टेबल को यह बात बताई तो उसने कहा, ''सुसरे को देख तो लेणा था।''

वह सड़क पार कर दूसरे प्रांत के थाने के सामने खड़ा था।

''जी उधर मेंड़ पर एक आदमी पड़ा है। आप चाहें तो उसे बचा सकते हैं।''

''तू उत्थे गिया क्यों ?(तू वहां क्यों गया ?) '' सिपाही उल्टा उसी पर बरस पड़ा।

''जी मैं उधर से जा रहा था कि मेरी नज़र....''

''जरूर दाल च कुछ काला है। उस साले नू मरन दे। उधर लॉक अप रूम दे साहमणे बहि (बैठ) जा।''

''जी मैं....मैं....''

''ओ जी देया पुतरा! जी तां आपां अपने सके पिऊ नू नहीं किहा।''

(जी तो हमने सगे बाप को नहीं कहा)

थानेदार आने से कहीं उसकी जान छूटी।

थानेदार ने सिपाही से कहा, ''साले पता नई क्यों मरन लई इत्थे आ जांदे हैं। जा वेख तां आ!'' (जाओ देखकर आओ)

दोनों थानों के बंदे आमने-सामने खड़े थे।

एक-''यो महारी हद मां नहीं।''

दूसरा-''ऐह साडी वी हद च नहीं।''

पहला-''इसका सर थारी हद मां है इसलिए या....''

दूसरा बात काटते-''इसदी टंग्गां (टांगें) तुहाडी हद में हैं। इसदा मतलब गिरन बेले ऐह तुहाड़ी हद च खलोता सी।'' (...गिरते समय तुम्हारी हद में खड़ा था)।

पहला-''पर इसका मुंह थारी ओर सै। इसका मतलब यो ही तो है कि यो थारी तरफ जा रिहा था यानी अपणे घर। इस तरह थारी सैड का आदमी साबत होगा।''

दूसरे ने तर्क दिया-''ऐह कोई मत्थे नहीं लिखिया। और सुखा सौ की एक! ऐह साडी जूरीडिक्शन तो बाहर है।''

इस बीच वह दम तोड़ चुका था।

दोनों मुर्दे को अपनी-अपनी चुनिंदा गालियां बकते अपने-अपने ठिकाने आ गये।

विक्रमजीत नूर

डर

वह बड़ी मस्ती से खुली सड़क पर स्कूटर भगाए जा रहा था कि कुछ अजनबी लोगों ने उसे रुकने के लिए हाथ का इशारा किया।

स्कूटर तो उसने रोक लिया, मगर घबराहट के कारण उसका दिल धक-धक करने लगा। जुबान सूख गई और आंखें पथरा सी गईं।

दाईं तरफ एक मारुति कार खड़ी थी जिसके पास दो और आदमी मौजूद थे।

उसने देखा कि कार खराब हो गई थी और उनमें से एक व्यक्ति ने उसके साथ स्कूटर पर गाँव तक जाना था, किसी मकैनिक इत्यादि का प्रबन्ध करने के लिए।

उसकी सांस में सांस आई। चेहरे पर मुस्कान फैल गई। व्यक्ति को साथ के गांव में छोड़ने पर वह आदमी अपनी घबराहट पर हंसने लगा।

अभी वह दो चार किलोमीटर ही चला होगा कि उसे एक आदमी हाथ में ब्रीफकेस लिए चलता हुआ दिखाई दिया। अवश्य ही इसको अगले गांव जाना होगा, इसको स्कूटर पर चढ़ा लेना चाहिए।'

आदमी के निकट पहुँच कर उसने एकदम ब्रेक लगाई। आदमी पूरी तरह कांप गया।

''आप को साथ के गांव में जाना होगा, आओ बैठो स्कूटर पर।'' उसने बहुत ही नरम भाव से कहा, पर ब्रीफकेस वाले आदमी ने अच्छी तरह से उसकी तरफ देखना भी नहीं और जल्दी से पीछे होकर खेतों की तरफ भाग गया।

अनुवादः ज. रा. कु.

मित्रसैन मीत

अनिश्चय

केरल निवासी जोसफ सीमा सुरक्षा बल में हवलदार है। उग्रवाद पर काबू पाने के लिए उसकी बटालियन को पंजाब भेजा गया है। वह भी साथ आया है। बटालियन के खाना खाते समय अधिकारियों ने पंजाब समस्या पर रोशनी डाली थी। जवानों को बताया गया था कि पंजाब में मुख्य रूप में दो कौमें बसती हैं। बहुसंख्यक सिख हैं। वे अल्प संख्यक हिन्दुओं को बाहर निकालकर 'खालिस्तान' बनाना चाहते हैं। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए वे हिंसा पर उतर आए हैं। नित्य हिन्दुओं के कत्ल होते हैं। हिन्दुओं में डर है। दोनों सम्प्रदायों में बेहद नफरत है। जवानों को उग्रवाद पर काबू पाना है, मजलूमों की रक्षा करनी है।

पहले दिन जोसफ की ड्यूटी एक बारात की सुरक्षा पर लगी है। विवाह हिन्दू लड़की का था। ऐसे अवसर पर उग्रवादियों की ओर से वारदात करने का खतरा बना रहता है।

जोसफ मुकाबला करने के लिए तैयार था।

बारात आई तो जोसफ चकरा गया। दूल्हा हिन्दू था और उसका मामा सिख। दूल्हे के दोस्त नाच रहे थे। नाचने और रुपये वारने वालों में आधे से ज्यादा सिख थे। बारात में सिखों की संख्या आटे में नमक की तरह नहीं, खिचड़ी में घी की तरह थी।

अगले दिन उसकी ड्यूटी पुलिस मुकाबले में मरे एक नौजवान का दाह-संस्कार करवाने में लगी। अर्थी देखकर वह चक्कर में पड़ गया। अर्थी को कंधा देने वाले चार लोगों में से दो हिन्दू थे। दीवार से सिर टकरा-टकरा कर बेहाल होने वाला लड़के का मौसा भी हिन्दू था। अर्थी के साथ हिन्दू दाल में कंकड़ों की तरह नहीं रड़कते थे, बल्कि घी में शक्कर की तरह थे।

आज उसकी ड्यूटी चौक में है।

यहां वह और भी असमंजस में पड़ गया है। मोटर साइकिल वाला सिख है, पीछे बैठने वाला हिन्दू। जीप का चालक हिन्दू है और बीच में बैठा परिवार सिख। जोसेफ हैरान है। उसे समझ नहीं आ रहा कि पंजाब के बारे में वह स्वयं असमंजस में है या दिल्ली में बैठे उसके अधिकारी।

सिमर सदोष

मुठभेड़

देश में अराजकता का दौर था। बंदूकधारी जैसे आते थे, गोलियां चलाकर वैसे ही चले जाते थे। पीछे रह जातीं थीं—कुछ चीज़ें, कुछ आहें! कुछ घायल और कुछ लाशें। पुलिस विभाग की जान पर बनी हुई थी। पकड़ें तो जान जाती थी, न पकड़ें तो आन जाती थी।

शहर के बड़े थाने के कोतलवाल को ऊपर से कई बार झाड़ पड़ चुकी थी। साहब की झाड़ के अतिरिक्त उन्हें अपनी तरक्की की चिंता अलग थी। तरक्की पाने के लिए उन्हें कोई तो कार्रवाई डालनी ही होगी।

थाने के शस्त्रागार का निरीक्षण करने के बाद उन्होंने अपने अहलकार को भेजकर पास के ही एक गांव के नम्बरदार को बुलवा लिया। नम्बरदार के सलाम ठोंकने से पूर्व ही, वह उसे एक कोने में ले गए। कुछ देर की बातचीत के बाद नम्बरदार चला गया तो कोतवाल के हाथ बेसाख्ता मूंछों को ताव देने लगे।

रात को कोतवाल ने थाने को अलर्ट किया—ऊपर से आदेश है, नाकेबंदी होगी। चार-चार की टुकड़ियों में सारी पुलिस फोर्स को आसपास के गांवों में तैनात कर, कोतवाल साहिब स्वयं घोड़ी पर सवार उस गांव की ओर चले गए जिसके नम्बरदार से उन्होंने सलाह-मशविरा किया था।

आधी रात के बाद उस गांव के लोगों ने दूर, शहर की ओर जाने वाली पगडंडी पर गोलियां चलने की आवाज़ सुनी। सवेरे लोगों ने सुना-रात को शहर कोतवाल की पुलिस टुकड़ी से उग्रवादियों की मुठभेड़ हुई जिसमें एक उग्रवादी मारा गया, दूसरा शहर की ओर भाग गया।

मरने वाला गांव का बन्ता रमदासिया था जो शहर के एक कारखाने में मजदूरी करता था। मौके से एक देशी पिस्तौल बरामद हुआ था।

सुरिंदर कैले

चक्की के पाटों के बीच

गांव के लोग रोज़मर्रा की मार-काट से सहमे हुए थे। किसी ने ज़ोर से दरवाज़ा खटखटाया।

झट से पूरा परिवार एक कमरे में सिमट गया।

दोबारा दरवाज़े पर पहले से भी ज्यादा जोर से खट्-खट् हुई। छोटे बच्चों को गोद में लिए औरतें डर से सहमकर कोने में सिमट गईं।

''दहशतगर्द होंगे....।''

''पुलिस भी हो सकती है।''

''अगर पुलिस होती तो सीटियों के साथ आवाज़ें भी लगाती।''

''इतनी रात के सन्नाटे में ताकतवर लोग आवाज़ें क्यों लगाएंगे?'' घर के सदस्य अनुमान लगा रहे थे कि इस बार और ज़ोर से दरवाज़ा खटखटाया गया, मानो उन्होंने दरवाज़ा तोड़कर भीतर घुसने का फैसला कर लिया हो। फिर भगदड़ की आवाज़ आई और फिर गोलियां चलने के डर से परिवार की बूढ़ी औरत बेहोश हो गई।

''लगता है, इसे दिल का दौरा पड़ा है। इस हालत में कुछ किया भी नहीं जा सकता।''

''मैं वैद्य को बुलाकर लाता हूं।'' दादी की हालत देख, नौजवान पोते ने हौसला दिखाया।

''नहीं, कोई बाहर न निकले। हो सकता है, वे आसपास ही हों। ऐसा भी हो सकता है कि आतंकियों के पीछे पुलिस लगी हो। ऐसे हालात में तो वैद्य भी नहीं आएगा।'' परिवार के एक सदस्य ने कहा।

''लेकिन दादी को ऐसे मरते भी नहीं देख सकते।'' कहकर नौजवान दरवाज़े की तरफ़ जाने लगा।

''नहीं बेटे, तेरी जान को खतरा है।'' पिता ने आगे होकर बेटे की बाजू पकड़ ली।

नौजवान ने झटके से बांह छुड़ा ली। फुर्ती से छुरा उठाया और दरवाज़ा खोलकर रात के सन्नाटे को चीरते हुए अंधेरे में विलीन हो गया।

अनुवादः अशोक भाटिया

हरजिंदर पाल कौर कंग

उजड़े पथ के पथिक

कमरे के दरवाज़ों को लगे ताले जंग खा चुके थे। रोगन और चूने की पपड़ियां उतर चुकी थीं। बरामदे में लगी टाइलें मिट्टी से पूरी तरह ढंक गई थीं। कच्चा आंगन फौज की जीपों के टायरों से घिसकर रेगिस्तान बना पड़ा था। एक तरफ टैक्ट्रर पुर्जे-पुर्जे हुआ पड़ा था। घर का दैनंदिन काम आने वाला सामान इस तरह टूटा-बिखरा पड़ा था, जैसे यह सदियों से निर्जन स्थान हो। बाहर गेट से ही देखने पर सरदारों की चालीस एकड़ खेतों की गांव की बाकी ज़मीन से अलग पहचान दिखाई दे जाती थी। पिछले दस महीने से उसमें न कोई फसल बोई गई, न काटी गई। सोना उगलती धरती बंजर बनी पड़ी थी। पोस्टमॉर्टम करवाकर लाई गई गुरबाज की लाश छोटी-सी चारपाई पर पड़ी थी। बर्फ के पानी से चारपाई के नीचे लाल रंग का कीचड़ बन गया था। गुरबाज के मुंह से सफेद चादर हटाकर इसकी बहनें बेतरह रोए जा रही थी। वर्ष-भर की बेटी को गोद में उठाए हुए उसकी पत्नी बेहाल हुई जा रही थीं। एक साल से ही सारा परिवार मानो बेघर हुआ घूम रहा था। यह सब तब शुरू हुआ, जब गुरबाज गुरुद्वारे माथा टेकने गया था। तब उस पर शक करके उसका पीछा किया जाने लगा। अपनी जान बचाने के लिए उसने छिपकर वक्त बिताना शुरू कर दिया था। लेकिन उसे ढूंढकर दबोच लिया गया था।

स्त्रियों के साथ उसका दस-बारह साल का छोटा भाई और तीन साल का बेटा ही अर्थी के पीछे जा रहे थे। पूरे गांव में सन्नाटा छाया हुआ था। फौज के डर से न तो कोई उनके घर अफसोस करने आया, न ही अर्थी के साथ गया। मृतक का पिता एक हाथ में घी का डिब्बा और दूसरे हाथ में लाठी लिए अपने लाडले को वीरान सड़क से आखिरी मंजिल की तरफ़ छोड़ने जा रहा था।

हरभजन खेमकरनी

दहलीज़

गर्मियों के दिनों मे वह गांव–गांव कुल्फियां बेचकर दो–एक महीने में अपने परिवार के लिए साल–भर की गेहूँ इकट्ठी कर लिया करता। बाकी के दिनों में दिहाड़ीदप्पा करके वाहवा गुजारा कर रहा था। लेकिन पिछले कुछ सालों से हालात की मार के नीचे आकर उसने फेरी लगानी बंद कर दी थी। जी–तोड़ मेहनत करके भी जब वह अपने परिवार का पेट न पाल सकता, तो उसे अपने पर बड़ा गुस्सा आता। भूखे बच्चे उससे देखे नहीं जाते थे। उसने कई बार फैसला किया कि इस बार नयी गेहूँ आने पर फेरी लगाने का काम शुरू करेगा, पर उसके साथियों के साथ बीती घटनाएं उसे निरूत्साहित कर देतीं। पुलिस की पूछताछ, लूट–खसोट और शक–शुबहे में उसके कई साथी रगड़े खा रहे थे।

बैसाखी को गए पंद्रह दिन हो गए थे। अभी तक वह आँगन में पड़ी कुल्फियों वाली पेटी को अनदेखा किए जा रहा था। पर गेहूँ वाला खाली ड्रम उसे इरादा मजबूत करने का हौसला दे रहा था। 'मरता क्या न करता' की हालत से जूझते उसने अगली सुबह कुल्फियों वाली पेटी साइकिल के कैरियर पर बांधी और ट्रंक से पत्नी का सफेद दुपट्टा बाहर की खूंटी से टांग दहलीज़ पार कर गया। उसकी पत्नी कभी जाते पति की तरफ देखती तो कभी दुपट्टे की तरफ़।

अनु. : अशोक भाटिया

नशे के खिलाफ

कमल चोपड़ा	–	कत्ल में शामिल
		अंधेरे कुएं में छलांग
कुलविंदर कौशल	–	पश्चात्ताप
जगदीश राय कुलरियां	–	स्वाभिमान
दर्शन सिंह बरेटा	–	खामोशी का दर्द
श्याम सुन्दर दीप्ति	–	परेशानी
सआदत हसन मंटो	–	अपनी–अपनी डफली
सुखचैन थांदेवाला	–	तरक्की
हरभजन खेमकरनी	–	मकरी गंध

कमल चोपड़ा

कत्ल में शामिल

वह अपनी बात कह चुका था। थाना प्रमुख ने आंखें चौड़ी करके बूढ़े को ऊपर से नीचे तक देखा। चेहरे पर झुर्रियां, पकी हुई दाढ़ी और कांपती हुई देह। थाना प्रमुख को वह बूढ़ा पागल, सनकी और सिरफिरा लगा था। बूढ़े ने फिर कहना शुरू किया– जानता हूं थाना प्रमुख से बात कर रहा हूं। धक्का मारकर बाहर निकालेंगे तो बाहर धरना दूंगा। 68–70 साल की बीमार बूढ़ा हूं। लात डण्डा सह नहीं पाऊंगा....यहीं थाने में ढेर हो जाऊँगा। पर मेरी रिपोर्ट तो आपको लिखनी ही पड़ेगी।

मेरे कांपते शरीर, झुर्रियों और सूखी हड्डियों पर मत जाइये। इस हालत में आज भी मैं मजदूरी करके चार पैसे कमा कर लौटा हूं। सुबह मैं अपनी झुग्गी पर गया था। अपने इकलौते सहारे अपने बीमार बेटे को तड़पता हुआ छोड़कर मजदूरी करने गया था। वापस लौटा तो मेरा बेटा मर चुका था। वह मरा नहीं, उसका कत्ल हुआ था और कत्ल किया है आपने।

हां, हजूर आपने! आपको मानना पड़ेगा। मैं पागल नहीं हूं। मेरे बेटे नंदू को आप जानते नहीं हैं...पर उसका कत्ल आपने ही किया है। नन्दू क्या? आप तो छोटू, दीपू, कल्लू, राम, अज्जू, जीतू को भी नहीं जानते हैं, पर उनका कत्ल भी आपने ही किया है। न मैं बक रहा हूं, न मैं पागल हूं। इनके कत्ल के लिए आपको पैसा मिलता रहा है। हफ्ता बल्कि हिस्सा। हां, वो मुत्तू है न? बच्चा–बच्चा जानता है कि वह स्मैक बेचता है....नहीं जानते तो सिर्फ आप। इसी अनजान बने रहने और आंखें बंद रखने का पैसा मिलता है आपको। हां, मेरे इकलौते सहारे नंदू को स्मैक पीने की लत लग गयी थी। शुरू–शुरू में मुत्तु के बन्दों ने उसे मुफ्त में पिलाई और वह शौक–शौक में पीता रहा फिर ये उसकी मजबूरी बन गयी।

पहले वह सारा दिन काम करता, शाम को मुत्तू से पुड़िया ले आता और पीकर पड़ा रहता। कई बार मैंने नन्दू को नशामुक्ति केन्द्र में दाखिल करवाया था। वहां से वह ठीक भी होकर आ गया था, पर यहां के माहौल ने फिर से खींच लिया उसे....और अब तो महीने से वह काम पर भी नहीं जा पा रहा था। डॉक्टरों

ने जवाब दे दिया था। नशा टूटते ही वह तड़पने लगता। उसका अंग–अंग दर्द करने लगता। दर्द से वह तड़पता। उसे लगता वह किसी चट्टान के नीचे दबा पड़ा है। उसके प्राण अब निकले कि तब। उसका रोना–तड़पना मुझ से देखा नहीं जाता था और मैं खुद मजदूरी पर जाता। चार पैसे कमा कर लाता। मुत्तू से पुड़िया खरीदता और उसे पिलाता। बाप होकर अपने बेटे को खुद स्मैक पिलाता। क्या करता मुझसे उसकी हालत नहीं देखी जाती थी। आज भी मैं हाड़–तोड़ मजदूरी करके लौटा और वापस आया तो.... ? ठीक है, मुत्तु ने कत्ल किया, पर आप भी शामिल थे न मौत के उसके व्यापार में...। पसीना पोंछ लीजिए हजूर... गुस्सा मत कीजिए। मुत्तू को पकड़कर बंद करने के बजाय आप उसकी मदद करते रहे? आप भी कातिल हैं। गुजारिश हैं कि आप मेरी रिपोर्ट लिख लें।

थाना–प्रमुख के बुलाने पर एक खाकी वर्दी आकर उनके बिल्कुल पास खड़ी हो गयी। थाना–प्रमुख कुछ देर खाकी वर्दी के कान में फुसफुसाता रहा। फुसफुसाहट के बावजूद बूढ़ा सब समझ रहा था। अपनी रुलाई पर वह काबू न रख सका। रोते–रोते बोला– आप कुछ भी कर सकते हैं...मुझ पर ही उलटा सीधा केस बनाकर उलटा मुझे ही बंद कर सकते हैं। मेरे पास स्मैक की बरामदगी भी दिखाकर मुझ पर केस बना सकते हैं....

स्मैक की एक पुड़िया अब भी मेरी जेब में है जो आज शाम अपने इकलौते बेटे के लिए लेकर आया था। सुबह होने से पहले आप मेरे बेटे का दाह संस्कार करा कर मामला रफा–दफा करने की कोशिश कर सकते हैं पर लेकिन अब यह सब आप इतनी आसानी से नहीं कर पायेंगे। मेरे बेटे की मृत देह के पास बहुत से झुग्गी वाले जमा हैं वो आपको मनमर्जी नहीं करने देंगे। मैं तो खुद अपने खिलाफ भी रिपोर्ट लिखवाने आया हूं। आप अपने साथ–साथ मेरे खिलाफ भी रिपोर्ट लिखें। मैं कसूरवार हूं। कत्ल में शामिल। मैंने पहले ही आपके खिलाफ कुछ भी क्यों नहीं किया? शाखाओं में उलझा रहा। जड़ क्यों नहीं काटी?....

अंधेरे कुएं में छलांग

थरथराती कांपती आवाज़ में मां ने कहा – तेरे बापू जी कलपते मर गये। नैशनल हाकी टीम विच तेरा सलेक्शन नहीं हुआ! तां की होया? होर वथेरे कम्म हैं! कोई चंगी राह फड़! अग्गे पजांह रावां होर निकलेंगी! ऐ नशे वाली राह जो तू फड़ लई है तां बस्स हनेरे खू में छाल मारण वाली गल्ल है!

कुछ सुने-समझे बिना वह मां से पैसे मांग रहा था – बीजी, तू मैनूं पैसे दे दे।

तेरा वड्डा वीर तां एक साल पहले बार्डर की तरफ नसे दी पुड़ियाँ लेने गया था! लौटा ही नहीं। कहां गया कहां नहीं? और दूसरे को तीन महीने पहले नशेड़ी गुंडों ने मारकर बूढे दरिया में फेंक दिया था। तीन दिन बाद उसकी लाश पुल के पास अटकी हुई मिली थी। और तीसरां तूं....मेरे सामने....? दो साल पहले तेरे बापू जी की भी दिमाग की नस फट गई थी और वे भी ....जिस मां दे तीन-तीन जवान बेटे नशेयां ने गाल दित्ते हैं! जवान बेटों के होते मैं लोगों के घर बर्तन मांजकर गुजारा कर रही हूँ। कदे सोच्या है तेरी माँ ते की बीतती होयेगी? अपने लिये घुटनों और कमर दर्द की दवाई न ली तो मेरा चलना फिरना मुश्किल हो जायेगा। मालकिन मुझे काम से निकाल देगी!

अंधे-बहरे पशु की तरह वह बेचैन हो रहा था – बीजी पैसे दे दो! मैं बौत दुखी हूँ।

खीझकर कहा बीजी ने – पुत्त तू मेरे नालों वी जादा दुखी है?

अंधे-बहरे भूखे पशु की तरह वह माँ को धक्का मारकर पैसे छीनकर भाग खड़ा हुआ।

सब्जी मंडी के पीछे वाली रेहड़ियों की ओट में दो दोस्तों के साथ बैठकर वह नशा करने लगा। एकाएक गुरजीत बोला– माल अंदर जाते ही बंदा आसमान में उड़ने लगता है लेकिन मेरा बापू कहता था नशा मतलब हनेरे ढट्ठे खूह में छाल!

दूसरा बोला- मैं तो कहता हूँ ये दुखों की दवाई है....मैं फैक्ट्री और मकान का मालिक था। किस्मत ने पलटा खाया, मैं सड़क पर आ गया। बल्कि कर्जदार हो गया। अब ये दुख की दवाई न लूँ तो क्या करूँ?

तीसरा भी अपना दुख बयान करने लगा कि एक एक्सीडेंट में उसकी टांग कट गई थी। दो छोटी-छोटी बच्ची हैं। नौकरी मिलती नहीं। घर में झगड़ा - क्लेश होता है। दुख भुलाने के लिये नशा करना पड़ता है।

ठंडी सांस भरते हुए गुरजीत ने कहा– मेरा नैशनल हॉकी टीम में सलेक्शन नहीं हुआ। मेरा दुख तो कोई समझता नहीं....? कहते हैं, यह भी कोई दुख हुआ? फिर दुख होता क्या है?

तभी एक लड़का दौड़ता हुआ आया – आये गुरजीते ओये – तेरी मां मंदिर वाले मोड़ पर गिरी पड़ी है। किसी के घर बरतन मांजने जा रही थी। बीमार थी चला जा नहीं रहा था। गिर पड़ी। काफी चोटें लगी हैं। कह रही है

– मैं हस्पताल नई जाणा....मैनूं मेरे घर पहुँचा दो....।

माँ की आवाज़ उसके कानों में गूंजने लगी–क्या तूं मेरे नालों वी दुखी है?

उसकी आंखें गीली हो आई थीं। इतने दुखों के बावजूद भी माँ का संघर्ष जारी है? एकाएक उठकर वह माँ की तरफ दौड़ पड़ा। सोचता जाता था–किसका दुख बड़ा है?

कुलविंदर कौशल

पश्चात्ताप

घर में कुछ आहट की आवाज़ उसकी मां को सुनाई दी, मां ने भीतर वाले कमरे की बत्ती जलाई तो वह सामने अलमारी से पैसे चुरा रहा था। एकदम हुई रौशनी से वो डर गया फिर मां को अनदेखा कर कमरे से बाहर निकलने लगा।

''तुझे शर्म नहीं आती अपने ही घर में चोरी करते हुए, तू जन्म लेते ही क्यों न मर गया'' मां ने चिल्ला कर कहा।

''तुम हट जाओ'' वह लड़खड़ा रहा था।

''नहीं रवि, तुम यह रुपये वापिस रख दो, क्यों नशे में इस घर और अपने जीवन को बर्बाद कर रहे हो,'' मां उसके आगे हो गई।

उसने जल्दी में जोर से अपनी मां को दीवार की तरफ धकेल दिया। मां का माथा दीवार के साथ टकराया और एक लम्बी चीख के साथ मां वहीं पर ठण्डी हो गई।

रवि जोर से चीखा और उसकी नींद टूट गई। उसने खुद को अपने कमरे में पाया। वह उठकर भागते हुए अपने माता-पिता के कमरे तक पहुँच उनके दरवाजे को ज़ोर-ज़ोर से खटखटाने लगा, '' मुझे माफ कर दो मां-पिता जी मैंने नशे का अंत देख लिया है, मैं आपको खोना नहीं चाहता....'' जब तक माता-पिता कमरे से बाहर आते रवि बेहोश हो चुका था। मां-बाप की आंखों में आंसू थे और रवि के चेहरे पर अज़ीब किस्म की शांति।

जगदीश राय कुलरियाँ

स्वाभिमान

हाय मेरे मालका....क्या कभी ऐसा हो सकता है....मैंने यह बात सभी सपने में भी नहीं सोची थी....माता-पिता ने जिस के साथ लगाया....उसी को सत्य बचन माना....पर यह क्या? जब से ब्याह कर आई हूँ....कभी भी सुख की साँस नहीं ली। मायके वाले ने भी देखा तो क्या....जमीन ....अब जमीन भी कहाँ रह गई है इस पापी के पास....सारी फूँक डाली नशे में....माता पिता भी इस दुख के कारण पहले ही संसार से चले गए....पोते का मुख देखने की हसरत साथ ही सीने में दफन हो गई....मां-बाप का मरना क्या हुआ....इसे तो खुला खेल मिल गया अब हर रोज़ ही नशे में धुत होकर आने लगा है....जो मेरी तरफ हमेशा बुरी नज़रों से देखते हैं और इसे घर छोड़ने के बहाने आते हुए हर बार मेरे को छूने की कोशिश करते हैं....मैंने इस से भी कहा....उल्टा मुझे कहता है कि तू गलत है....गाली बकता है....और कोई काम नहीं....नशे की लत को पूरी करने के लिए मेरे सभी गहने बेच दिए हैं....मैं बहुत कलपी....बैरी ने एक न सुनी.... ऊपर से मुझे रोती देख मेरे दो चार ठुड्डे मारे .... करती भी क्या? कई दफा सोचती हूँ कि दो टिका दूँ....रोज़-रोज़ के क्लेश से पीछा छूटेगा....फिर ख्याल आता है कि इस मरे हुए को और क्या मारना है....पर कल तो इसने हद ही कर डाली....कहता प्रीत पैसे दे....मैंने स्मैक लेनी है....मैंने कहा कि मेरे पास नहीं है पैसे....जो कुछ था वो तो सारा तूने बेच डाला....फिर इसने सारा घर छान डाला....कहीं से कानी कौड़ी तक न मिली इसे....और न ही बेचने को कोई सामान....सारे घर में पूँछ को आग लगाए हुए फिरता रहा....फिर मेरे पांवों में गिरकर कहने लगा...प्रीत-प्रीत...मुझे स्मैक चाहिए....मैं इसके बिना नहीं रह सकता....प्रीत यदि ऐसे करे एक रात मेरे लिए....

खबरदार यदि इससे आगे एक शब्द भी बोला....तूने मुझे समझ क्या रखा है....यदि मैंने ऐसे काम करने होते तो तुम्हें कब की छोड़ कर चली जाती....तू न समझा कभी मेरी भावनाओं की....बस अब बहुत हो गया....

यह कहते हुए उस ने अपने आप को ज़िदंगी की अगली लड़ाई लड़ने के लिए तैयार कर लिया था।

दर्शन सिंह बरेटा

खामोशी का दर्द

सेवक की मौत पर उसकी माता का रोना नहीं थक रहा था। थोड़ी सी बात सुनकर ही वह रोने लगती।

लेकिन उसकी घरवाली की आंखें पता नहीं क्यों नम नहीं हुईं। वह टकटकी लगाए आस–पास देख रही थी, जैसे पत्थर की कोई मूरत हो। रोते बच्चों को चुप कराने के लिए ही थोड़ी–बहुत हूं–हां करती। नहीं तो... ।

नशेड़ी सेवक सिंह चढ़ती जवानी में ही भगवान को प्यारा हो गया था। भोग की रस्म रंगों पर सब संबंधी इकट्ठे हुए।

सेवक के माता–पिता के बच्चों के भविष्य और बहू की जवानी के साथ–साथ उसके लगातार गुमसुम रहने की हालत भी बड़ी गंभीर लगती थी।

आए रिश्तेदारों के द्वारा भी यह चिंता जाहिर करते हुए हरिंदर चुप बैठी भीतर सुनती रहती। उसने दिल का भेद जरा सा भी न खोला।

हरिंदर के नाना ने दोनों तरफ से निर्णय बताते हुए कहा, देख भाई हरिंदर जो हुआ वो किसी के हाथ बस का तो नहीं, वाहेगुरु की इच्छा है, माननी ही पड़ेगी। सोच–समझ के फैसला किया है कि तू सेवक के नाना के लड़के सरदूल से जुड़कर अपने बच्चों का पालन–पोषण कर ले– तुम्हें भी सहारा होगा। थोड़ा बहुत न ....करते....वाहेगुरु भली करे अपने आप ही ठीक हो जायेगा....पंचायत के निर्णय को मान ले।'

'बस बस रहम करो...मेरे और मेरे बच्चों पर...क्यों मुझे गढ़े में से निकली हुई को कुएं में धकेल रहे हो....जरूरत नहीं मुझे किसी नशेड़ी के सहारे की। ये आठ दस वर्ष में हुआ मेरा बेटा जवान। उतनी देर मैं अपने सास–ससुर के साथ खुद ही समय काट लूंगी। बस...मुझे मेरे रहम पर रहने दो। कहीं किसी को दुख नहीं देती और न किसी की पगड़ी को.... ।

हरिंदर ने निर्णय सुना दिया। उसका गला रूंध गया। सास के गले लगकर कितना समय ही वह रोती रही।

अनुवादः ज. रा. कु.

डॉ. श्याम सुन्दर दीप्ति

परेशानी

उसको नींद नहीं आ रही थी।

ऐसा उसके साथ बहुत दिनों के बाद हुआ था। खास कर अपनी ज़िदगी को एक पटरी पर लाने के बाद। अपने काम में व्यस्त रहने के कारण वह रात को बड़े आराम से सोता था।

आज उस का मन शराब पीने को हुआ। पर इस समय रात के दो बजने को थे और शराब कहीं से भी मिलनी मुश्किल थी।

सिर्फ़ नींद ही नहीं, उसे परेशानी ने भी घेरा हुआ था। उसने अपनी परेशानियों में से निकलने को बहुत लम्बा समय लगाया था। आज उसको स. रघवीर सिंह बार-बार याद आ रहे थे, जिनके कारण उसकी भटकन को विराम मिला था।

रघवीर सिंह ने पहले उसे नशे से मुक्ति पाने में मदद की। नशा छोड़ने के बाद वह दोबारा फिर इसके सेवन में लगा तो उसने बड़े प्यार से समझाया और कहीं पर काम दिलाने का वायदा किया।

इस काम पर उसे रघबीर सिंह ने ही लगाया था। उनका खुद ही फोन आया था, 'बच्चे! पैंतीस सौ रूपए मिलेंगे। ये ज्यादा तो नहीं, पर काम में व्यस्त रहना ही बड़ी बात है।' मैंने उन से कहा कि चार हज़ार कर दीजिए। कहने लगा कि पैंतीस सौ भी तुम्हारे लिए हैं सरदार साहेब, औरों को तीन हज़ार ही देना।

आज अभी वह उस मालिक को घर छोड़ कर अपने कमरे की तरफ आया था। रात का एक बजने को था जब मालिक किसी होटल में अपने दोस्त के साथ खाना खाकर आए थे।

इतना टाइम हर रोज़ ही हो जाता। पैंतीस सौ रूपए और ड्यूटी का कोई समय नहीं । न ही कोई रविवार और न ही कोई तीज-त्योहार।

उसने घड़ी को देखा, चार बज गए थे। वह समझ नहीं पा रहा था कि अपनी परेशानी किस के साथ साँझी करे। फिर खयाल आया कि स. रघवीर सिंह से बात करूँ! अभी तो सोये होंगे....उठा दूं– या कुछ समय के लिए

ठहरूँ....सोचते सोचते पाँच बज गए और उसने फोन किया।

'साहब जी, एक परेशानी है रात से---अब न रहा गया।' फिर कुछ समय के लिए रुका जैसे बेचैनी में बोल न पा रहा हो। 'आप को ही बता सकता हूं। आपने जिन के पास नौकरी लगवाई है, वही जो मुझे पैंतीस सौ रूपए माह दे रहे हैं। रात मैंने उन्हें होटल से घर छोड़ा। वह रात का खाना खाकर आए थे। कुदरती वह खाने का बिल कार में ही छोड़ गए....साहब जी, एक टाइम के खाने का बिल सैंतालीस सौ रूपए....' और वह खामोश हो गया।

उधर से कोई आवाज न आई। वह जो समझता था कि रघवीर सिंह को बता कर उसकी परेशानी कम हो जाएगी...उसको लगा, परेशानी कम नहीं हुई है।

अनुवादः ज. रा. कु.

सआदत हसन मंटो

अपनी–अपनी डफली

''यह तुम्हें चरस की लत कहां पड़ी?''

''क्या बताऊँ यार! – अब तो इसके बगैर बिल्कुल रहा नहीं जाता।''

''क्यों बेवकूफ बनाते हो! मैं पूछता हूँ लत कहाँ से पड़ी?''

''जेल में।''

जेल में? वहाँ तो एक मक्खी तक अन्दर नहीं जा सकती!''

''मक्खियाँ, खटमल, चूहे, तमाम जीव–जन्तु हैं। अफीम जाती है। चरस जाती है। मोदक जाती है। शराब जाती है। सभी कुछ जाता है।''

''कैसे?''

''एक खाकी मार्केट है वहाँ, जो ब्लैक मार्केट से ज्यादा ईमानदार है!''

सुखचैन थांदेवाला

तरक्की

बीरा और धीरा इलाके के नामी स्मगलर थे। जवानी गुजरते ही धीरे ने राजनीति में पैर धर लिया और बीरे ने धार्मिक क्षेत्र में काफी महिमा बटोर ली थी। परन्तु दोनो नें विरासत में मिले कारोबार से मुख नहीं मोड़ा बल्कि तरीका बदल लिया था।

अब बाबा बलवीर सिंह विशेष गुरुधामों की यात्रा कर कर वापस लौटा और आपने पिट्ठुओं के जरिए 'छत्रधारे' के रूप में क्विंटल अफीम की खेप भी साथ में लाया। दोनो भाई जी ने बात कर थाने के मुख्य अफसर से फोन पर बातचीत की और अपने दो आदमियों को साथ कस्बे में पाँच किलो अफीम की सप्लाई करने हेतु भेज दिया।

अगली सुबह दोनों भाई बैठे अखबार पढ़ रहे थे। मुख्य पृष्ठ पर सुरखी थी ''नशा विरोधी मुहिम के दौरान पुलिस ने पाँच किलो अफीम सहित दो स्मगलर काबू किए।'' अखबार से नज़र हटाते हुए दोनों एक दूसरे की तरफ देख कर मुस्कुराए। धीरा ठहाका मारा हँसते हुए बोला ''ले बाबा बलवीर सियाँ पिचानवे किलो छतरधारा बेच निधड़क होकर। अब एस.एच.ओ.की तरक्की भी हो जाएगी और अपनी भी---।''

हरभजन सिंह खेमकरनी

मकरी गंध

नशा मुक्ति केन्द्र में दाखिल हवलदार दर्शन सिंह बिना किसी को यह बताए कि वह पुलिस में है, नशा छोड़ने का इलाज करवा रहा था। बड़े बुजुर्ग कहते हैं कि आदमी के व्यवहार का प्रभाव उसके जीवन पर भी पड़ता है और कुछ बातें बोलचाल में अपने आप ही उसके स्वभाव में शामिल हो जाती हैं जिनका कभी उसे अहसास भी नहीं होता। हवलदार दर्शन सिंह भी अपनी पुलिसिया बोली व चाल ढाल के होते हुए अपनी पहचान छुपाने में असफल रहा था। इसीलिए केन्द्र में इलाज करवा रहे नशेड़ी उसे संदेह की नज़र से देखते और अक्सर उसके साथ बातचीत करने में हिचकते। वह सोचते कि पुलिस विभाग ने जान-बूझ कर हवलदार दर्शन सिंह को यहाँ भर्ती किया है ताकि जो नशेड़ी यहाँ पर नशा कर रहे हैं उनसे यह बात पता कर सके कि नशा आता कहाँ से है। इस केन्द्र के बारे में यह आम चर्चा थी कि यहां पर हर प्रकार का नशा इनके कर्मचारियों के जरिए आसानी से मिल जाता है। परन्तु जब डॉक्टर ने हवलदार दर्शन सिंह का भी इलाज शुरू कर दिया तो सभी निश्ंचित हो गए थे।

बराबर आयु का होने के कारण साथ के बैड वाले हरदीप सिंह से जब हवलदार ने दोस्ती कर ली तो एक दिन वह बोला, ''हरदीप सिंह क्या इलाज कराने से कोई फर्क पड़ा?''

''क्या बताऊँ यार, एक तो यह डॉक्टर पैसों के लालच में मरीज को जल्दी ठीक नहीं होने देता। दूसरा यहाँ के कर्मचारी नशा बेचने वालों के साथ मिले हुए हैं। उनके जरिए यहाँ पर हर तरह का नशा मिल जाता है। जब वह नशे के दर्शन करवाते हैं तो मन डोल जाता है, फर्क तो क्या पड़ना था, उल्टा नशा पहले से ज़्यादा हो गया है।''

''मैं भी सोचता था कि यह जवान लड़के सुबह-सुबह डॉक्टर के आने से कुछ समय पहले ही आ जाते हैं और फिर सारा दिन बाहर रहते हैं। यह तो फिर नशा करने के लिए ही आते होंगे।'' हवलदार दर्शन सिंह ने मन की शंका जाहिर की।

''तू तो सुना है कि नशेड़ियों पर बड़ा शिकंजा कसता है, फिर यह लानत

कहाँ से पाल ली?'' हरदीप सिंह ने बात पलटते हुए कहा।

हवलदार दर्शन सिंह ने एक गहरी सांस ली और बोला ''भाई हमारा थाना सरहद पे है। बार्डर के जरिए होती स्मगलिंग को रोकने के लिए रोज़ नाका लगता और दूसरे चौथे दिन हीरोइन किलो के हिसाब से पकड़ी जाती। कभी स्मैक, फक्की, अफीम भी पकड़ी जाती। मुंशी लगा होने की वजह से पकड़े माल का हिसाब-किताब मुझे ही संभालना पड़ता। मेरे कमरे में ही पलाई की पार्टिशन डालकर माल-खाना बनाया हुआ है। सरकारी करवाई डालने के पश्चात् वह माल माल-खाने में जमा होता रहता। कसम गुरु की मैंने कभी नशे को हाथ नहीं लगाया, बस उस कमरे में उठती मिली-जुली गंध ने ही मुझे नशेड़ी बना डाला।''

अनुवादः ज. रा. कु.

तर्कशीलता की ओर

अवतार सिंह कंवर	–	मन्नत
कुलविंदर कौशल	–	कुर्बानी
		तलाश
गुरमेल मडाहड़	–	चेतना
जसबीर ढंड	–	निश्चिंत
जसबीर बेदर्द लंगेरी	–	मंदिर
दर्शन सिंह बरेटा	–	टेढ़ी उंगली
परमिंदर हुंदल	–	मन्नत का सफर
वरियाम सिंह	–	सवाल
श्याम सुन्दर अग्रवाल	–	चमत्कार
सुरिंदर कैले	–	उपाय

अवतार सिंह कंवर

मन्नत

''ए सीबो, तूने मुझे बताया ही नहीं कि तेरी मां मेले में जाएगी!''

''चाची, बस अचानक ही तैयारी हो गई। मैंने तो बहुत कहा कि क्या लेना है मेले में। लेकिन मां नहीं मानी। बोली—पांच पीरों की समाधि पर माथा टेक आऊंगी। मन्नत की थी तेरे भाई की, जब उसे मियादी बुखार हुआ था।''

''अच्छा !''

''जब मैंने कहा, मां! भैया को तो शहर के डॉक्टर से आराम आया था तो कहने लगी, तेरा सिर आया था। बीमारी ने मोड़ तो उसी दिन लिया, जब पीरों की मन्नत मानी।''

''सीबो, बात तो तेरी मां की ठीक है, और मन्नत का भार भी उठाकर नहीं रखना चाहिए। जब जगीरो की बहू के बच्चा होने वाला था, उसने मन्नत मानी लेकिन पूरा करना भूल गई। अढ़ाई महीने का होकर, लड़का मर गया। फिर रोये, मैंने तो पांच पीरों की कड़ाही करनी थी।''

''चाची, भला हुआ क्या था लड़के को?''

चाची धंतो गला साफ करते हुए बोली, ''क्या बताऊं बेटी, सब कर्मों का खेल हैं! बस बुखार चढ़ा और ले डूबा लड़के को।''

''इलाज नहीं करवाया उन्होंने?''

''बेटी, अपनी ओर से तो कौन कसर छोड़ता है। बहुत-भागदौड़ की बेचारों ने। अपने नागा साधु के पास गए—मंत्र फुंकवाया, भस्म भी लगाई और जहां कहीं भी किसी स्याने का पता चला, वहीं गए। मगर कहीं से आराम न आया।''

''तुम किसी डॉक्टर के पास गई चाची?''

''तू तो पढ़-लिखकर भी पागल ही रही। लड़के को तो छाया थी। डॉक्टर उसमें क्या करता। कोप तो सारा मनौती का था।''

सीबो सोचने लगी—चाची को कैसे समझाऊँकि लड़के का इलाज डॉक्टर के पास ही था।

कुलविंदर कौशल

कुर्बानी

नाव समुद्र के बीच पहुंच चुकी थी, जिसमें दो अलग-अलग धर्मों के प्रचारक अपने-अपने धार्मिक ग्रन्थों के साथ एक दूसरे से विशेष दूरी बनाए हुए बैठे थे। पिछले दिनों इनके प्रचार के कारण ही दोनों धर्मों में दंगे हुए थे और अब वे किसी दूसरी जगह प्रचार के लिए जा रहे थे।

संयोग से दोनों को एक ही नाव से समुद्र पार करना था लेकिन नाव भार ज्यादा होने से डूब रही थी। नौका चालक को वे पहले ही समुद्र में फेंक चुके थे। अब तो एक-दूसरे की तरफ नफरत की नज़र से देखते और चेहरा घुमा लेते। दोनों में से किसी की हिम्मत नहीं थी कि दूसरे को समुद्र में फेंक दे, और धार्मिक ग्रंथों को तो समुद्र में कैसे फेंक सकते थे, इनके लिए तो कितनी जाने कुर्बान हो चुकी थी। अब तो अपनी जान ही दे सकते थे।

नाव के ऊपर तक पानी आने में थोड़ा सा फर्क रह गया था, दोनों की नज़रें मिलीं और एक खामोश सा समझौता हुआ। दोनों ने अपने-अपने धार्मिक ग्रन्थ पानी में फेंक दिए। अब नाव धीरे-धीरे ऊपर आने लगी थी।

तलाश

एक पागल ने पुजारी से पूछा ''मंदिर के लिए ईंट कहां से आई हैं?'' जवाब मिला ''भट्ठे से।'' उसने ग्रंथी से पूछा ''गुरुद्वारा के लिए ईट कहां से आई हैं?''

''भट्ठे से।''

फिर मौलवी से पूछा, ''मस्जिद के लिए ईंट कहां से आई हैं?''

''भट्ठे से।'' मौलवी जी का जवाब था।

''अच्छा! भट्ठे की ईंट इतनी ताकतवर है, जिसने तीन-तीन भगवान कैद कर रखे हैं, वाह रे वाह!'' कहता हुआ वह भगवान से ताकतवर भट्ठे की तलाश में निकल पड़ा।

गुरमेल मडाहड़

चेतना

सनी एक गुणी मास्टर का बेटा....पढ़ाई में बहुत ही होशियार। तीसरी कक्षा तक वह स्कूल में प्रथम आता रहा। फिर उसके बारे में मुहल्ले में चर्चा चली कि सनी गुरु भगत हो गया है। सुबह शाम अपने पिता के साथ धार्मिक स्थान पर जाना व पाठ करने से वह कभी चूका नहीं था। खेलना कूदना बंद। भजन ही भजन। पाठ ही पाठ।

फिर साल के बाद सारे मुहल्ले में चर्चा छिड़ी। सनी नास्तिक हो गया है। पूजा, पाठ भजन बंदगी प्रसिद्ध धार्मिक स्थानों की सेवा, सब बन्द कर दी और अपने पिता को भी इस रास्ते से रोकने लगा है। सिर्फ पढ़ाई अथवा खेलने के सिवा कुछ नहीं करता।

''सनी क्या बात बेटे, आजकल बड़ी पढ़ाई कर रहा है? क्या बात भजन बंदगी छोड़ दी?'' एक दिन मैंने उसको अपने दरवाजे के सामने से गुजरते हुए पूछा।

''अंकल मेरे डैडी ने कहा था कि यदि सच्चे मन से परमात्मा की भजन-बंदगी करो, गुरु घर की सेवा करो तो गुरु घर से मुँह माँगी मुराद पूरी होती है....

''मैंने सारा साल पूरे ज़ोर से भजन बंदगी की। गुरुधर की सेवा कर परमात्मा से मांग की कि मैं पाँचवी कक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त करूँ, पर हो गया फेल....''

''अच्छा---अब फिर क्या इरादा है?''

''इरादा क्या है, जो समय मैंने इधर बर्बाद किया, उतना समय लगा कर तो मैं पूरे पंजाब में प्रथम आ सकता हूँ।''

जसबीर बेदर्द लंगेरी

मंदिर

सुरिंदर ने कोठी बनाने से पहले अपने आर्कीटैक्ट दोस्त को घर बुलाया और कहा, ''यार विजय! कोठी बनानी है, एक अच्छा-सा नक्शा बना दे और मुझे सब समझा भी दे।''

''सुरिंदर, मेरे पास कई नक्शे बने पड़े हैं। यह देख, यह अभी बनाया है। इसमें सब कुछ अपनी जगह पर पूरी तरह फिट है। पर एक चीज़ फालतू है, आपके काम की नहीं....यह छोटा-सा पूजा वाला कमरा, क्योंकि आप हुए तर्कशील।''

''नहीं यार, यह कमरा तो बहुत जरूरी है। यह तो एक साइड पर है और छोटा भी। हमें तो यह कमरा बड़ा चाहिए, साथ में हवादार भी। इसमें हमने भी मूर्ति रखनी है, वह भी जीती-जागती, जिसके हर समय दर्शन होते रहें।'' सुरिंदर बोला।

''जीती-जागती मूर्ति! वह कौन-सी?'' विजय ने हैरान होते हुए कहा।

''बेटा विजय, समय चाहे बदल गया, फिर भी अभी माँओं ने सरवन बेटों को पैदा करना बंद नहीं किया।'' मां ने भावुक होते हुए कहा।

''वाह! कमाल है भई! जिस घर में बुजुर्गों का इतना सम्मान हो, वहाँ मंदिर बनाने की क्या जरूरत है। वह तो घर ही मंदिर है....ठीक है, मैं सब समझ गया। अच्छा मैं कल आऊँगा।''

इतना कह विजय उठने लगा तो सुरिंदर की पत्नी चाय और बिस्कुट मेज पर रखते हुए बोली – ''भाई साहब! मंदिर से खाली हाथ नहीं जाते। यह लो प्रसाद।''

जसवीर ढंड

निश्चिन्त

यू.के.जी. (रोज सैक्शन) में पढ़ता मेरा पाँच साल का पोता यशिक स्कूल जाने के लिए तैयार है। मैंने उसे गली के मोड़ से वैन पर चढ़ाने के लिए गेट खोला ही कि हमारे पड़ोसी ने आवाज़ दी, ''ढंड साब घर पर ही हो?''

वह मुझे संदेश देकर चला गया है।

''पापा आपको सभी ढण्ड साब क्यूं कहते हैं?'' यशिक का प्रश्न।

''ढंड अपना गोत है बेटे।''

''गोत क्या होता है?''

''जाति क्या होती है?''

वह अक्सर मुझे ऐसे ही प्रश्नों की उलझन में डाल देता है। मुझे समझ नहीं पड़ती कि उसके बाल मन को कैसे संतुष्ट करूँ। मैं उसे टालने के लिए कहता हूं–

''देख बेटा! जैसे तुम्हारे साथ पढ़ता सुखमन सिंह जूड़ा कर पटका बांधता है, वह सिक्ख है। तुम्हारे फादर जॉनसन की जात क्रिश्चिन है। तुम्हारे साथ पढ़ता मुनीष हिन्दू जात का है। इसी तरह हम भी हिन्दू क्षत्रिय हैं।''

''क्षत्रिय कौन है?''

''बेटा मनुष्य में भी ग्रुप होते हैं, जैसे तुम्हारी कक्षा की अलग-2 सैक्शन है–लिली, रोज, जैसमीन...।'' मैं उसे टालने के लिए बिना सिर पैर की दलीलें देता हूँ। मेरी बात उसके दिमाग में आती ही नहीं। चिढ़ कर कहता है, ''फेर पापा आप को लिली, जैसमीन, रोज क्यूं नहीं कहते। ढण्ड क्यों कहते हैं?''

अब मैं चिढ़ने लगा। उस के प्रश्न मुझे परेशान कर रहे हैं।

''यशिक जब तू बड़ा होगा, तब तुझे अपने आप पता चल जायेगा। तू भी गोत्रों, जातियों में बँट जायेगा। हो सकता है कि तू त्रिशूल, किरपानों, आप लगाने वाले, एक ही फिरके के लोगों को तलाश कर के मारने वाले, गलों में टायर डालकर जलाने वालों, मंदिर-मस्जिद गिराने वालों में शामिल हो जाए। तू भी...''

‘‘ओह पापा! क्या बोल रहे हो?’ वह मेरा हाथ ज़ोर से पकड़ कर हिलाते हुए कहता है। मैं ऐसे गंदे काम नहीं करूँगा....।’’

उसकी वैन आ जाती है। उसको वैन पर चढ़ा देने के बाद घर लौटने तक मेरी सारी परेशानी दूर हो जाती है। बच्चे का जवाब सुनकर मुझे सभी तरफ सुकून ही सुकून महसूस होता है।

दर्शन सिंह बरेटा

टेढ़ी उंगली

संदीप की शादी को तीन वर्ष का समय बीत गया था। सुबह उठते ही सास, ससुर और बड़ों के चरण स्पर्श कर आशीर्वाद हासिल करना यह उसका नित्य का कार्य था।

अपने ज्ञान और आधुनिक विचारों से उसने अपने ससुराल से फिजूल के कई रीति-रिवाजों को बंद करवा दिया था।

''बेटा कल को तुम्हारे दादाजी का श्राद्ध है। पंडित जी से भोग लगवा कर फिर बाकी परिवार को खाना देना। कहीं हमारे पितर नाराज न हो जाएं। घर में सुख शांति के लिए उनकी कृपा बड़ी जरूरी है।'' संदीप की सास ने हर साल की तरह उसे समझाते हुए कहा।

''ठीक है माँ जी, चिंता न करो, जैसे आपने कहा है, उसी तरह ही करूंगी।'' पंडित को खिलाई रोटी स्वर्गवासी दादाजी के पास नहीं पहुँच सकती। यह सब पांखड और रूढ़िवादी रिवाज है। समय की बर्बादी। संदीप को नींद नहीं आ रही थी। करवट बदलते हुए उसने सोच घुमाई कि कोई ऐसा तिकड़म लगाया जाए जिस से सांप भी मर जाए और लाठी भी रह जाए।

रोज़ की तरह सुबह उठकर उसने आपने सास-सुसर के चरण स्पर्श किए। गिलास में चाय डालते हुए उसने अपनी जुगत के पत्ते खोलने शुरू किए।

''माता जी समझ नहीं आ रहा कि आप को कैसे बताऊं'' इतना कह संदीप रसोई में से कटोरी लेने चली गई।

''क्या बात है बेटा, बताओ, बताओ?'' सास-ससुर की उत्सुकता बढ़ रही थी।

संदीप कहने लगी ''पिताजी रात सपने में मुझे दादाजी दिखाई दिए। उन्होंने मेरे सिर पर हाथ रखा और पास बिठाकर प्यार से कहने लगे, बेटा मेरी आज से गति हो गई है। मेरा श्राद्ध मत करो, यदि खुशी चाहते हो...मेरे कुछ बोलने से पहले ही वह अलोप हो गए।''

कुछ देर चुप्पी पसरी रही। बहू के तर्क के सामने किसी को कुछ नहीं सूझ

रहा था।

''मुझे समझ नहीं आ रहा कि अब क्या किया जाए...'' यह कहते हुए संदीप ने ही चुप्पी को तोड़ा।

''ठीक है, बेटा, जैसे दादाजी चाहते हैं....हम तो उनके लिए ही करते हैं...यदि वे नहीं चाहते तो बन्द कर दो पंडित को रोटी खिलानी।''

''संदीप बेटे, हम को तो घर में खुशी चाहिए। यदि वे ऐसे ही खुश हैं तो हम तो पहले ही खुश हैं...'' कहते हुए सास-ससुर ने अपनी बात रखी।

''ठीक है पापा जी, जैसे आप की मर्जी'' कहते हुए संदीप पहलवान की तरह उठी और रसोई में रोजमर्रा के कामों में जुट गई।

परमिंदर हुंदल

मन्नत का सफर

बी.ए. का रिजल्ट आने वाला था। सिमरन ने बाबा शहीद दीप सिंह की तस्वीर के सामने हाथ जोड़ते हुए प्रार्थना की, 'इस बार फस्ट डिविजन आ जाए तो वह दर पर 21 रुपए से माथा टेकेगी।'

उसकी फस्ट डिविजन आ गई, पर तीन वर्ष बीत जाने के पश्चात् भी वह 21 रुपए भेंट न कर सकी।

एक दिन अचानक गुरुद्वारे के सामने से गुजरते हुए उसे बाबे के साथ किया हुआ वायदा याद आ गया, इसके साथ ही उसे याद आया पर्स में पड़ा 50 रुपए का इकलौता नोट। उसने सोचा कि चलो आज बाबा का उधार भी चुकाया जाए। 50 रुपए की पर्चियां लेकर गुरुद्वारे के भीतर चली गई। माथा टेकते समय उसकी नजर पैसों के बड़े ढेर पर पड़ी तो उसकी 20 रुपये वाली मुट्ठी खुल न सकी और वह खाली मत्था टेक कर बाहर आ गई। उसने सोचा इतने बड़े भण्डारों में मेरे 20 रुपए तो गुम ही हो जाने हैं। यहां पर तो किसी चीज़ की कोई कमी नहीं। बड़े नोटों वालों का ताँता लगा हुआ है।

घर आकर सिमरन जब प्लाट में से पाथी लेने गई तो उसने देखा कि चाची कैलाशो तीखी दोपहर में गोबर पाथ रही थी। सिमरन के मन में पता नहीं क्या आया उसने पर्स में से 20 रुपए लिए और कैलाशो को देते हुए कहा, ''ले अपने लिए जूती ले आना।''

वरियाम सिंह

सवाल

देवी माता खेलकर दुखियारों के सवालों का उत्तर दे रही थी। वह भी गया और कहने लगा, ''देवी जी, मैं दिन–ब–दिन कमज़ोर हो रहा हूँ। खाया–पीया लगता नहीं। क्या कारण?''

देवी पूरे जोशो–खरोश में सिर फेरने लगी। डरावनी चुप में उसकी आवाज़ उभरी, ''तुमने किसी पक्की जगह पर छाँव में पेशाब किया था। वह किसी पीर की जगह थी। अब वह तुमसे लिपटा हुआ है और दिन–रात तेरा लहू पीता है...।''

उसके माथे पर एक शरारत की त्योरी उभरी और मूँछों पर हाथ फेरकर गला साफ़ करते हुए वह बोला, ''देवीजी, एक बात सुनो!''

देवी सहित सभी श्रद्धालु और ढोलक–मँजीरे उसकी आवाज़ सुनने के लिए चुप हो गए।

''बात यूँ है माता जी, आप सयानी हैं। झूठ तो कहती नहीं होंगी....पर मेरी विनती है कि मैं तो साधारण आदमी था, मानता हूं पेशाब कर बैठा हूंगा। और एक साधारण आदमी होने के नाते पीर जी तो मुझे नज़र आते नहीं थे– पर जब मैं अपना पायजामा ऊपर उठा रहा था, तो पीर जी को नज़र नहीं आया कि यह भला मानस क्या काम करने जा रहा है? दूर हट जाता। पहले तो कंजर चुपचाप बैठा रहा, सिर में मुतवाता रहा और अब ससुरा मेरा खून पी रहा है। साला....''

और श्रद्धालुओं को यूँ लगा जैसे उसके कठोर व्यवहार ने देवी के बिखरे बालों को हाथ डाल दिया हो....।

श्याम सुंदर अग्रवाल

चमत्कार

बच्चे की बीमारी के कारण गरीबू दो दिन से दिहाड़ी करने नहीं जा सका। आज बच्चा कुछ ठीक हुआ तो घर में राशन-पानी खत्म हो गया था। बच्चे को पिलाने के लिए घर में दूध की एक बूंद भी नहीं थी।

''जाओ, नंदू से कहना बच्चा बीमार है, पइया दूध उधार दे देवे, कल को दे देंगे उसके सारे पैसे।'' पत्नी ने कहा तो गरीबू छोटा-सा लोटा लेकर चल पड़ा।

उसने दुकानदार के पास बच्चे की बीमारी की दुहाई देकर उधार दूध देने के लिए विनती की तो वह बोला, ''उधार-नकद तो बाद की बात है, मेरे पास तो चाय पीने के लिए भी दूध नहीं है। सारा दूध लोग ले गए, भगवान की मूर्ति को पिलाने के लिए। आज तो चमत्कार हो गया, मूर्ति दूध पी रही है।''

''पत्थर की मूर्ति दूध पी रही है!'' गरीबू हैरान था। उसने सोचा—'भगवान भला कितना दूध पिएंगे? ऐसा कितना बड़ा पेट है? मंदिर चलता हूँ, शायद वहाँ मुझे लड़के लायक दूध मिल जाए।'

और वह मंदिर को हो लिया।

मंदिर में भीड़ लगी थी। लोग कटोरी, गिलास व लोटे-लुटिया में दूध लिए पंक्ति में खड़े अपनी बारी की प्रतीक्षा कर रहे थे। एक मोटे सेठ के पास बड़ा-सा लोटा देख गरीबू ने उसके पास जा विनती की, ''बच्चा बीमार है, थोड़ा दे दोगे तो आपका भला होगा...भगवान को थोड़ा कम पिला देना।''

सेठ ने उसे घूरकर देखा और कहा, ''मैं भगवान के निमित्त लाया हूँ सारा दूध। तुम्हें देकर पाप का भागी नहीं बनना।''

आगे से पीछे तक वह पूरी पंक्ति में घूम गया, किसी को गरीबू पर तरस नहीं आया। अंततः वह कहीं और कोशिश करने के लिए मंदिर से बाहर आ गया। मंदिर के पीछे तंग सी सुनसान गली में से गुरजरते हुए उसने एक और चमत्कार देखा—मंदिर के पीछे वाली नाली, जो सदा गंदे पानी से भरी रहती थी, आज दूध से सफेद हुई पड़ी थी।

सुरिदंर कैले

उपाय

''वही हुआ ना, जिसका डर था। मैं तो पहले ही कहती थी कि काके के ग्रह बड़े सख़्त हैं, उपाय कर लो। पर यह ऐसे आदमी हैं कि मेरी किसी बात का असर ही नहीं होता।'' वह अपने पति को कोस रही थी। उसे ठीक उपाय न करने के कारण ही टाईफायड हुआ था।

''आप अब भी मेरी मान लो। जाओ उपाय कर आओ। यह लो पैसे, दुकान से आठ किलो उड़द लेकर, मिल्लों वाले पुल पर, नहर में जिस तरफ पानी बहता हो, मुंह करके डाल देना।''

पर उसका पति यह मानने के लिए तैयार नहीं था। ''तुम लोगों को इस ब्राह्मणवाद से निकलने के लिए गुरु व महापुरुष अपनी जानें लगा गए। विज्ञान की पढ़ाई का भी आप पर कोई असर नहीं। आप लोग हो कि पुराने वहमों-भ्रमों के जाल से निकलने के लिए तैयार ही नहीं। अगर उपाय करने से ही दुख टल सकते होते तो कोई भी दुखी न होता।'' उसने बहस छेड़ दी।

''भाई साहब! आप क्यों नहीं समझाते इनको?'' वह तर्क छोड़ मुझ पर दबाव डालने लगी– ''जाओ, प्लीज जाओ।''

नहीं-नहीं करते पति के हाथ में सौ का नोट थमा दिया।

''चल यार, अब तो चलना ही पड़ेगा!'' मुझे भी कोई और रास्ता दिखाई नहीं दिया।

कुछ देर बाद हम वापस हस्पताल आ गए, जहां काके का इलाज चल रहा था!

''इतने से काम से क्या आपका कुछ घिस गया? उपाय करते ही काके को फर्क पड़ने लग गया। अगर आप और दो-तीन शनिवार उपाय कर लो, काका बिल्कुल ठीक हो जाएगा।'' वह संतुष्ट थी!

हमने एक-दूसरे की तरफ देखा और हल्की-सी मुस्कुराहट हमारे चेहरे पर फैल गई। उपाय के लिए दिए गए पैसों की हम बीयर पीकर लौट आए थे।

पश्चिमी पंजाब की हवाएं

तबस्सुम महताब	–	तलाक शादी
मोहसिन अराईं	–	मुट्ठी भर मिट्टी उपाय
मुहम्मद मुनीर शेरवानी	–	फूल चोर
अखलाक हैदराबादी	–	ज़रूरत
ज़मील अहमद पाल	–	शुक्रगुज़ार
लियाक़त आरज़ू	–	गत्ते के टुकड़े
अहमद शाहबाज़ खावर	–	हमदर्दी
अमजद अली शाकिर	–	कॉमरेड हाजी
सुल्तान खारवी	–	बाबा बोहड़

तबस्सुम महताब

तलाक

''तेरे आदमी ने तुझे तलाक क्यों दिया है?''

''शर्मसार होकर।''

''क्यों, तूने उसके एतबार को धोखा दिया था?''

''नहीं!''

''तो फिर ?''

''रोज़ अपने इश्क की कोई–न–कोई दास्तान सुनाने लगता था। एक दिन यों ही मज़ाक में कह बैठी कि मैंने भी किसी से प्यार किया था।''

''तो इसमें कौन–सी बड़ी बात हैं?''

''यही तो बात थी। अपने लगाए रंग बताने वाले आदमी ने मेरे मज़ाक को मेरी बेशर्मी, बेहयाई, धोखा, फरेब कहा और आखिर में तलाक दे दिया।''

शादी

''तू उसके साथ शादी क्यों नहीं कर लेती?''

''मैं अपनी शान नहीं गँवाना चाहती।''

''मतलब यह कि वो एक ग़रीब कलाकार है और तू अमीर?''

''नहीं, मतलब यह कि कलाकार को किसी आइडियल की जरूरत होती है, जिसे ज़ेहन में रखकर वह कला में डूबता है। इस वक्त मैं उसकी आइडियल हूँ। मुझे ज़ेहन में रखकर वह कहानियाँ लिखता है। अगर मैं उसकी बीवी बन गई तो इन्सानों की 'इन्सपिरेशन' के लिए वह कोई और आइडियल ढूँढ़ लेगा।''

मोहसिन अराईं

मुट्ठी-भर मिट्टी

''बाबा! अगले हफ्ते तक एक विशेष जत्था पाकिस्तान के दौरे पर जा रहा है, जिसमें मेरा नाम भी शामिल है। अगर कुछ मंगवाना है तो मुझे बता दो।'' महिंदर सिंह ने अपने बूढ़े पिता के पास बैठते हुए कहा।

''बेटा, सब कुछ तो है भारत में। यहाँ किसी चीज़ की कमी है क्या?''

''फिर भी बाबा, यहां की बजाए सामान सस्ता भी है और अच्छी क्वालिटी का भी है। और फिर गैर-मुल्की सामान भी मुनासिब कीमत पर मिल जाता है।'' महिंदर सिंह ने खोलकर बताते हुए कहा।

''बेटा! अगर ला सकता है तो लालयपुर के नज़दीक एक गांव चक्क जुमरा की मुट्ठी-भर मिट्ठी ले आना। गुरु कसम, होंठ तरस गए हैं उस मिट्टी को चूमने के लिए।'' बूढ़े जुगिंदर सिंह ने एक लंबी-सी ठंडी सांस भरकर उसको तरफ देखते हुए कहा और बीते वक्त की यादों में खो गया।

उपाय

''इंस्पेक्टर साहब! मैं दो लाख रूपए कहां से दूँ? मैं तो अभी खुद बेरोजगार हूँ।'' सलीम ने एस.एच.ओ. के आगे हाथ जोड़े।

''तेरे बाप के पास तो होंगे?'' इंस्पेक्टर ने हंसते हुए कहा।

''वे तो जी इस दुनिया में नहीं है। एक मां है, वो भी बीमार।'' उसकी आंखों में आंसू आ गए।

''च...च...च।'' इंस्पेक्टर ने अफसोस ज़ाहिर करते हुए कहा, ''मकान तो होगा?''

''नहीं इंस्पेक्टर साहब! किराए के मकान में रहते हैं। यकीन करो, बड़ी मुश्किल से महीने का किराया पूरा होता है।'' अब उसने बकायदा रोना शुरू कर दिया था।

''फिर एक ही तजवीज़ रह जाती है।'' इंस्पेक्टर ने कुछ सोचते हुए कहा।

''वह क्या सर!'' उसके चेहरे पर रौनक आ गई।

''एक अदद बैंक डकैती।'' इंस्पेक्टर ने बड़े इत्मीनान के साथ कहा।

मुहम्मद मुनीर शेरवानी

फूल चोर

डी.पी. साहब का हुक्म था कि कॉलेज के अहाते से एक फूल तोड़ने का पांच रुपए जुर्माना होगा। लेकिन वे फूल तोड़ते रहे। जुर्माना कभी-कभार भरते रहे और फूल छीमो को देते रहे। छीमो फूलों के गजरे बनाकर वेणियों और बालों में लगाती रही।

एक दिन दोनों ने हिम्मत कर पूछा:

''छीमो, हम तुझसे मुहब्बत करते हैं,'' और वह भोली-सी बनकर कहने लगी—

''लेकिन मैं तो फूलों से मुहब्बत करती हूँ।''

अख़लाक हैदराबादी

जरूरत

शादी के बाद मैं बिल्कुल बेरोजगार हो गया। आखिर एक दिन मेरे एक जानकार ने अपने एक दोस्त अफसर के नाम एक रुक्का देकर कहा—"वहां चला जा, काम बन जाएगा।"

वहाँ जाकर बहुत देर बाद मेरी बारी आई और मैं भीतर चला गया। अपने दोस्त का नाम बताकर ओर सलाम करके मैंने नौकरी के बारे में पूछा, तो अफसर कहने लगा:

"आप लेट हो गए हो, आदमी तो रखे जा चुके हैं।"

मुड़ने से पहले मैंने सोचा, इनको वह रुक्का तो देता जाऊँ। मैंने जेब से रूक्का निकाला तो उसके साथ मेरी पत्नी की तस्वीर भी मेज पर गिर गई। अफ़सर ने एक नज़र तस्वीर पर डाली और कहने लगा:

"एक लेडी रिसेप्शनिस्ट की जरूरत है, यदि आप चाहें तो।"

ज़मील अहमद पाल

शुक्रगुज़ार

शायद मसीत के चार में से एक लाउड-स्पीकर का मुंह उसकी खिड़की की तरफ था। हर किस्म की आवाज़ें कानों में तीर की तरह जातीं और चौबारे में बैठकर काम करना उसके लिए मुश्किल हो जाता। मसीत का मौलवी भी हर वक्त बोलते रहने का शौकीन था। कुछ-न-कुछ लाउड स्पीकर पर बोलता रहता और उसे काम न करने देता। मारे डर के वह मौलवी से कुछ कह भी नहीं सकता था कि कहीं कुफ्र का फतवा लगाकर पत्थर न मरवा दे।

मई की गर्मी, अगले दिन उसका इम्तहान था। उसने चौबारे पर जाकर किताब उठाई, उधर मौलवी ने लाउड स्पीकर पर उंगली के साथ ठक-ठक की और बोलने को तैयार हो गया। पर अभी बोलना शुरू ही किया था कि बिजली चली गई और आवाज़ बंद हो गई।

इतनी गर्मी में वह पहला मौका था, जब उसने बिजली जाने पर ईश्वर का शुक्रिया अदा किया।

लियाक़त आरज़ू

गत्ते के टुकड़े

काली और बर्फीली रात में फुटपाथ पर एक औरत अपने बच्चे के साथ सो रही थी। उसने बच्चे को ठंड से बचाने के लिए उस पर गत्ते के टुकड़े बिछा दिए।

आधी रात में मां के कानों में अपने बच्चे की ठिठुरती हुई आवाज़ पड़ी, ''मां...मां...''

''क्या बात है बेटा! सोता क्यों नहीं है।'' मां ने लरजते हुए बच्चे से पूछा।

बच्चे ने जवाब दिया: ''मां, जिनके पास गत्ते के टुकड़े न होते हों, उनको तो बड़ी ठंड लगती होगी।''

अहमद शाहबाज़ खावर

हमदर्दी

''चौधरी साहब! आप इधर कचहरियों में कैसे?''

''छोटे फलक शेर की कोई तारीख-तराख थी।''

''कैसी तारीख?''

''एक दिन पीछे पड़ गया कि नई बंदूक डेरे पर लेकर जानी है। रास्ते में कहीं खेलते-खालते कुछ फायर-फूयर निकाल दिए। इससे एक भट्ठी वाली विधवा औरत का बेटा और एक और लड़का मौके पर ही मर-मुर गए।''

''दो लोग मर गए!''

''हां एक के तो वारिस बैठ गए हैं, लेकिन वो भट्ठी वाली माई ने केस-कास कर दिया है। कहती है, मेरा एक ही बेटा था। लो बताओ, एक ही बेटा क्या मरना नहीं था। बहुत कहा है। दूसरों को पचास दिया है तू साठ हजार ले ले। जिंदगी के आखिरी चार दिन ढंग से रोटी खा लेगी, पर मानती ही नहीं। इसीलिए तो इन लोगों की गरीबी दूर नहीं होती।''

अमजद अली शाकिर

कामरेड

कामरेड बड़ा इन्कलाबी था। मुझे उसी ने इन्कलाब की राह दिखाई। कुछ समय पहले उसने नई शादी कर ली और कमाई की राह पर चल पड़ा। एक दिन मुझसे बहस करने लगा कि कम्यूनिज्म बड़ा बुरा राज्य होता है।

मैंने पूछा: ''इसमें क्या बुराई है।''

''इससे बड़ी क्या बुराई होगी कि मैं अपनी मेहनत की कमाई अपनी औलाद को विरासत में नहीं दे सकता।'' उसने बताया।

''यार उस निज़ाम के बारे में क्या खयाल है जिसमें तेरे बाप की तरफ़ से तुझे विरासत में कर्जे और लानतें मिली थीं।''

हाज़ी

''यार बाग़ अली हज से आ गया या नहीं?'' मैंने आबिद से पूछा।

''आ गया है।'' उसने बताया।

''तुझे कैसे मालूम है?'' मैंने पूछा।

''मैंने खुद देखा है। वह टी.वी. उठाए हुए जा रहा था।'' उसने कहा।

सुल्तान खारवी

बाबा बोहड़

उसे पेड़ लगाने का सदा ही शौक रहा। बड़े मनोयोग से कहीं से पीपल का छोटा-सा पौधा ढूंढता या बहार का मौसम शुरू होते ही किसी दरख्त से एक टहनी तोड़कर खाली जगह लगा देता। रोज़ पानी देता। जब वह पेड़ छाया देने लगता तो वह खुशी से ऐसे घूमता जैसे जग्गे ने मैदान मार लिया हो।

गांव में कई जगह आज भी उसका प्रताप है, लेकिन हम ठंडी छांव में बैठने वाले कभी सोच नहीं पाए कि उस बाबे की कब्र धूप में है!

पंजाब के गली कूचों से

अजमेर सिंह औलख	–	दोराहे पर
अनवंत कौर	–	क्या?
अमर कोमल	–	स्टैण्डर्ड
अमरजीत सिंह	–	मंद-मंद लौ, ग्राहक
अश्वनी खुडाल	–	जाग
अशोक लव	–	चमेली की चाय
आशा शैली	–	नींद
उपेन्द्रनाथ अश्क	–	केवल जाति के लिए, दो आने की मिठाई
कमल चोपड़ा	–	इतनी दूर
कमलेश भारतीय	–	डर, आईना
कर्मजीत सिंह नडाला	–	बाहर का मोह, भूकंप, पराली का सेंक
कर्मवीर सिंह	–	स्वेटर
कुलविंदर कौशल	–	मुआवज़ा, नई सुबह
गुरचरण चौहान	–	ढह रहे बुर्ज
गुरमेल मडाहड़	–	राज़
जगदीश अरमानी	–	आधा आदमी
जगदीश राय कुलरियां	–	मुक्ति, एक गदर और, कीमत, सांप, बस और नहीं
जसबीर चावला	–	विधान
जसबीर ढंड	–	छमाहियाँ, छोटे-छोटे ईसा, प्रलय से पहले
जसबीर बेदर्द लंगेरी	–	लाल बूटियों वाला सूट
जोगिंदर सिंह निराला	–	कहानी लेखक
जोगेन्दर पाल	–	मनुष्य की महानता, ताल, मशीनें, पेशेवर
तरसेम गुजराल	–	पहाड़ों पर चढ़ने वाली
तृपत भट्टी	–	अच्छा बीजी
दर्शन जोगा	–	जालों वाली छत
दर्शन मितवा	–	कुत्ते का खाना
दर्शन सिंह बरेटा	–	प्रतिबिंब, बगावत, जागृति
दलीप सिंह वासन	–	रिश्ते का नामकरण

धर्मपाल साहिल	–	आखिर औरत ही, व्यापार
निरंजन बोहा	–	नए क्षितिज, अपनी मिट्टी, रिश्तों के अर्थ, शीशा
प्रताप सिंह सोढ़ी	–	संरक्षण, मजदूरी की उमंग
प्रीत नीतपुर	–	गरीब की बेटी, गरीबों का गहना
प्रीतम बराड़ लंडे	–	गरीबमार, ऐनकों वाला टिड्डा
पृथ्वीराज अरोड़ा	–	कथा नहीं, दु:ख, पल
प्रेम विज	–	अनुत्तरित
प्रेम सिंह बरनालवी	–	मुर्दे का धर्म, सरहद, बापू के बंदर, अमानत
पांधी ननकानवी	–	गिफ्ट, न्याय
फूलचंद मानव	–	सख्ती
बलदेव सिंह खहरा	–	उलटी गंगा, पीढ़ी का अंतर
बलबीर परवाना	–	किसान और उसकी बीवी
बलवंत कौर चांद	–	बेगानी बेटी
बिक्रमजीत नूर	–	इस बार, उदारीकरण, लोक–लाज, कदर–कीमत
भीम सिंह गरचा	–	अक्ल का काम
भुवनेश कुमार	–	आत्म परीक्षा, काबुलीवाला
भूपिंदर सिंह	–	पहुंचा हुआ फकीर, रोटी का टुकड़ा
मंगत कुलजिंद	–	फ्रीज़
मधु संधु	–	बिगड़ैल औरत
महिन्द्र फारग	–	विज्ञापन
मित्रसेन मीत	–	चालाक लोग
रमेश बतरा	–	सूअर, लड़ाई, कहूँ कहानी
रघबीर सिंह महिमी	–	दीवारें
रमेश कुमार संतोष	–	कटौती
राजेन्द्र साहिल	–	फोका टिपुर, यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते....
रामसरूप अणखी	–	पागल
रेणु	–	प्लास्टिक की गुड़ियाँ
लालसिंह कलसी	–	रिटायर्ड आदमी
वरियाम सिंह	–	काली धूप
शरन मक्कड़	–	रिश्वतखोर
श्याम सुन्दर अग्रवाल	–	राह में पड़ता गांव, खून का असर, आदमी, अपना–अपना दर्द, एक पवित्र लड़की

श्याम सुन्दर दीप्ति – दिन–रात का फर्क, रिश्ता, हिम्मत, बीज
सत्यपाल खुल्लर – कलाकृति, बंधन, विभाजन
सतीशराज पुष्करणा – मन के सांप, झूठा अहम्, जमीन से जुड़कर
सुखचरण सिंह सिद्धू – होठों के निशान
सुखचैन थांदेवाला – प्रताप
सुखवंत मरवाहा – शेर और आदमी
सिमर सदोष – एक और द्रोपदी, पंजाबी पुत्तर, जाट का बेटा, पांच मर्द, वीनस का बुत
सुरिंदर कैले – किराए का मकान, सबक, भयानक बीमारी, मजदूर
सुरेन्द्र मंथन – भीड़ में, चोर, सत्ताधीश, ईंट–गारे का मकान
सुलक्खन मीत – रिश्ता, पिता
सैली बलजीत – बाजार
हरप्रीत सिंह राणा – खुशी, चौथा महायुद्ध, अधूरी औरत
हरभजन खेमकरनी – चिकना घड़ा, फालतू, खर्च, उपाय
हरमनजीत – दीमक

अजमेर सिंह औलख

दोराहे पर

वह दोराहे पर खड़ा था... एक रास्ता दाईं तरफ़ जाता था और दूसरा बाईं तरफ़। सामने दूर बहुत दूर उसकी मंज़िल थी। उसे फैसला करना था कि वह दाएं जाए या बाएं?

दायां मार्ग साफ-समतल था। दोनों तरफ़ बाग-बगीचे, ऊंची और मनमोहक इमारतें, सुंदर स्त्रियों की सुंदर हंसी, फर-फर दौड़ती कारें, शाही बग्घियाँ, चांदी की छनकार।

बायां मार्ग ऊबड़-खाबड़, ऊंचा-नीचा टेढ़ा, गड्ढे-खाइयां, जगह-जगह सूलियां और उन पर लटके हुए ईसा, मंसूर और भगत सिंह।

उसने सोचा, दाईं तरफ ही चलते हैं। चल पड़ा। पैर रखने से पहले उसे दो थाल भेंट किए गए। एक चांदी के रुपयों से भरा हुआ ओर दूसरा खाली। खाली किसलिए? - उसने पूछा।

'इसमें तुम अपनी आत्मा रख दो।' जवाब मिला।

'आत्मा? वो क्यों?' हैराकुन होकर उसने पूछा।

'हम इसको कैद रखेंगे और बदले में तुम्हें आजादी, खुशी और जीवन के सारे सुख देंगे।' उत्तर था।

जवाब सुनकर उसने ऊँची इमारतों के पीछे झांककर देखा। कारों में उड़ते और बग्घियों में घूमते सब हंसते लोगों की आत्माएं कैद की हुई थीं।

दोनों थाल वापिस करके, वह उन्हीं पैरों वापिस हो लिया। उसने बाएं मार्ग की मिट्टी चूमकर अपने माथे पर लगाई। ईसा, मंसूर और भगत सिंह ने मुस्कुराते हुए उसका स्वागत किया।

अनवंत कौर

क्या.... ?

बहू के हाथ से काँच के बर्तनों वाली ट्रे गिर गई। दोष उसका नहीं था। सफेद मार्बल के फर्श पर गिरा पानी नज़र नहीं आ रहा था। पाँव फिसल गया। स्वयं तो किसी तरह सँभल गई, पर ट्रे गिर गई। काँच के दो गिलास व दो प्लेटें टूट गईं।

खड़का सुन, हर समय घुटनों के दर्द का रोना रोने वाली उसकी सास भागती हुई आई। काँच के टुकड़ों जितनी ही गालियों के टुकड़े, उसकी ज़बान से गोलियों की तरह बरसने लगे– ''अरी ओ घर की दुश्मन, तेरा सर्वनाश हो! तू इस घर का बेड़ा गर्क करके रहेगी। भूखों की औलाद, पीछे तो कुछ देखा नहीं, अब यह भरा–पूरा घर तुझसे बर्दाश्त नहीं होता। यूँ कर, अलमारी में जो क्रॉकरी पड़ी है, वह भी ले आ और सारी एक बार में ही तोड़ दे। जब तक तुझे एक भी प्लेट साबुत नज़र आएगी, तुझसे बर्दाश्त नहीं होगा।''

पत्नी की कठोर आवाज़ व गालियाँ सुनकर ससुर भी अपने कमरे से बाहर निकल आया। कुछ पूछने की ज़रूरत नहीं थीं। काँच के टुकड़े व बहू की आँखों के आँसू और पत्नी की गालियाँ, सब कुछ बयान कर रहे थे।

वह बोले, ''इसका क्या कसूर है? पाँव तो किसी का भी फिसल सकता है। गिलास ही हैं और आ जाएँगे।''

''आपने तो ज़बान हिला दी.... और आ जाएँगे! महीने में एक बार तनख़ाह लाकर देते हो दोनों बाप–बेटे। मुझे ही पता है कि इस महँगाई के ज़माने में घर का खर्च किस तरह चलाती हूँ। मुझे तो तीस दिन एक–एक पाई सोच कर खर्च करनी पड़ती है।''

''अच्छा! इस तरफ तो हमने कभी ध्यान ही नहीं दिया। आज से तुम्हें यह तकलीफ उठाने की ज़रूरत नहीं। पढ़ी–लिखी बहू आई है, आप ही बजट बनाकर घर चला लेगी। आगे से तनख़ाह इसके हाथों में दिया करेंगे।''

''क.....क्या... ?''

अमर कोमल

स्टैण्डर्ड

कैप्टन साहब अपनी कोठी के लॉन में कभी इधर, कभी उधर घूम रहे थे। हाथ पीछे किए हुए, गर्दन नीची और सोच में लीन।

अचानक सामने आकर सिपाही ने सैल्यूट मारा और विनती की, ''साहब! मैं खाना खा आऊँ?''

सिपाही ने सैल्यूट मारा और वापस चल पड़ा।

सिपाही अभी थोड़ी दूर ही गया था कि कैप्टन साहब अचानक चौंक पड़े। जा रहे सिपाही को ऊँची आवाज़ देकर बुलाया, ''ओ जवान! वापस मुड़ो।''

सिपाही दौड़कर कैप्टन साहब के पास आ गया।

''तुमने क्या बोला था?''

''साहब! मैंने बोला था कि मैं खाना खा आऊँ!''

''नहीं! तुम खाना नहीं खा सकता। तुम सिपाही लोग है। तुम खाना नहीं खाते। खाना तो साहब लोग खाता है। तुम कुछ और बोलो।''

सिपाही समझ गया और कुछ देर बाद सैल्यूट मारते हुए फिर बोला, ''साहब! मैं परशादा छक आऊँ?''

''हूँ'', फ़ौरन साहब ने गंभीर होकर कहा और जाने के लिए सिर हिला दिया। सिपाही ने फिर अपना रास्ता पकड़ा।

अभी सिपाही थोड़ी दूर ही गया था कि कैप्टन साहब ने उसे फिर वापस आने का हुक्म दिया।

''तुमने बोला क्या था?'' कैप्टन साहब बोले।

''साहब, बोला था कि मैं परशादा छक आऊँ।'' सिपाही ने विनम्रता से कहा।

''नहीं तुम परशादा नहीं छक सकता। परशादा तो भाई जी लोग छकता है। तुम कुछ और बोलो।'' कैप्टन साहब का हुक्म था।

सिपाही बड़ी दुविधा में पड़ गया कि क्या कहूँ। घबराहट में वह इधर-उधर देखने लगा।

कैप्टन साहब की फिर कड़कती आवाज़ आयी, ''जवान! तुम कुछ और

बोलो!''

''जी, जी, साहब! फिर मैं रोटी खा आऊँ?'' सिपाही ने सैल्यूट मारते हुए घबराहट में कहा।

''हाँ–हाँ! सिपाही लोग रोटी खाता है।'' आखिर कैप्टन साहब ने सिपाही को रोटी खाने की इजाज़त दे ही दी। उनके चेहरे पर अब सन्तुष्टि की मुस्कान थी।

अमरजीत सिंह

मंद मंद लौ

देवकी ने दीये का मंद-मंद लौ के पास खाना बनाया और पटरे पर बैठकर अपने पति की प्रतीक्षा करने लगी...। उसका पति आया, तो उसने प्यार से थाली परोस कर उसके आगे रख दी। वह खाना खाने लगा तो देवकी हाथ के पंखे से हवा करने लगी। हवा के झोंके पति के बदन को शीतलता प्रदान कर रहे थे।

सामने कोठी के ऊँचे चौबारे से देवकी के घर का दृश्य पूनम देख रही थी। वह दम्पत्ति-प्रेम का यह नज़ारा काफ़ी देर तक देखती रही। इसके बाद वह भीतर आकर ड्रेसिंग टेबल के सामने जा बैठी। उसने अपने अति सुन्दर गहनों और साड़ी से सजी हुई देह को देखा.... अपने सिर के सिंदूर को देखा... घर में बिछे सुन्दर गलीचों को देखा... घर में जगमग करती फ़ानूस को देखा... दीवार पर टंगे विदेशी क्लाक की तरफ़ देखा..। उसे दूधिया रोशनी में क्लाक की सुइयाँ नज़र नहीं आ रही थीं। उसे घर में सब कुछ धुंधला-धुंधला लग रहा था जबकि सामने देवकी के छोटे-से घर की मंद-मंद लौ में वह सब कुछ देख सकती थी। उसे देवकी के घर के मुकाबले अपना महल-सा घर बड़ा छोटा लगने लगा।

वह उठी और घर की सारी बत्तियाँ बुझा डालीं।

ग्राहक

इस लम्बी-चौड़ी सड़क से गुजरते हुए मैं कई बार झोपड़ियों की एक बस्ती को देखता हूँ। झोपड़ियों के बाहर सांवले से रंग की, हृष्ट-पुष्ट युवती बड़ा-सा छाबा लिए सिगरेट-तम्बाकू वगैरा बेचती दिखाई देती। यों तो उस सड़क पर कई लकड़ी की पेटियां लगाए सिगरेट-तंबाकू बेचते दिखाई दे जाते थे, लेकिन इस युवती के पास हमेशा ग्राहकों की भीड़ रहती। मैंने उसे कभी खाली बैठी नहीं देखा।

एक दिन उसके पास भीड़ कुछ कम थी। मैंने ड्राइवर को कार उसके पास

रोकने को कहा। वह युवती जब थोड़ी खाली हुई तो मैंने उसे इशारे से बुलाया। वह तेजी से मेरी कार के पास आकर बोली– ''क्या चाहिए साहब, कौन–सी सिगरेट, कौन–सा ब्रांड और कितनी।''

बड़ा साहस कर मैंने पूछा–'' बेटा, मैं हर रोज़ यहां से गुजरता हूँ और हमेशा तेरे पास ग्राहकों की भीड़ रहती है। पर सिगरेट–तंबाकू बेचने वाले बाकी लड़कों के पास इतनी भीड़ नहीं होती।''

वह मुस्कुराई और अपनी अधनंगी छाती की तरफ इशारा करके बोली– ''साहब, मैं केवल सिगरेट–बीड़ियां नहीं बेचती।''

अश्वनी खुडाल

जाग

दो तीन दिन से पशुओं के गोबर कूड़े को संभालने वाली सीतो काम पर नहीं आ रही थी। इसी कारण हवेली वाले सरदार बचन सिंह की पत्नी को काफी मुश्किल ही रही थी। ''मैने कहा जीते के बापू... तू ही जा कर पता कर... इस जात ने तो हद ही कर डाली... ।'' मुड़ मुड़ यही बात दोहराने पर आखिर बचन सिंह कैले के घर पर पहुंच ही गया... कैला और सीतो घर पर ही थे।

''क्यों भई... कैले कई दिनों से सीतो काम पर नहीं आ रही...''

''काम तो अब सरदार जी... कोई हिसाब करने पर ही होगा...'' कैले के बोल तीखे थे।

''हिसाब किस का... अभी तो दी रकम का ब्याज ही पूरा नहीं हुआ...''

''लो अभी ब्याज रह ही गया है... पाँच साल हो गए सीतो को दो हजार के ब्याज में गोबर, कूड़े को संभालते हुए। अब तो यदि हर महीने के हिसाब से पैसे मिलेंगे तभी सीतो काम पर लौटेगी वरना नहीं..''

''अच्छा! तो अपनी जात दिखला ही दी... हिसाब तो अब पंचायत ही करेगी...''

''पंचायत भी तो सरदार तेरी ही है... पहले क्या कभी हमने पंचायत के किए हुए हिसाब नहीं देखे... यदि तुझे ऐसा करना ही है तो हम भी अपने मजदूर संगठन वालों को बुलांएगे... ।''

''बुला लेना... बुला लेना देख लेंगे'' कहता हुआ बचन सिंह अपने घर की ओर चल दिया, पर अंदर अंदर सोच रहा था कि अब तो इस जात-कुजात वालों के भी पर निकल आए है... पुराना हिसाब अब ज्यादा देर तक नहीं चलेगा।

अशोक लव

चमेली की चाय

राजधानी के सफाई कर्मचारियों ने हड़ताल कर दी। पहले ही दिन कूड़े के ढेर लग गये। उपराज्यपाल ने निगम अधिकारियों की आपात् बैठक बुलायी। क्षेत्रीय आयुक्त के रूप में मैं भी उपस्थित था। उपराज्यपाल ने किसी भी तरह हड़ताल तुड़वाने के लिए कहा। सभी खामोश थे। मैंने भावावेश में कह दिया कि मेरे क्षेत्र में हड़ताल नहीं होगी।

हड़ताल रुकवाना उतना सरल न था जितना कह देना।

रात नौ बजे सीलमपुर बस्ती जा पहुँचा। रामदीन हरिजन-नेता था। उसके घर पहुँचा।

''साहब! आप कैसे?'' - उसने आश्चर्य से पूछा।

''तुम्हारे पास ही आया हूँ। बिठाओगे नहीं क्या?''

वह चारपाई ले आया। मैं उसमें धँस गया।

''चमेली! साहब आये है। कुछ चाय-पानी का इन्तजाम कर''- रामदीन ने पत्नी से कहा।

मैं काँपकर रह गया। इस हरिजन औरत के हाथ की चाय पीऊँगा? भीतर का ब्राह्मणत्व काँप उठा।

चमेली स्टोव जलाने लगी। पम्प की आवाजें सीधे दिल पर चोट करने लगीं।

''लीजिये साहब चाय पीजिये''– रामदीन ने कहा तो चौंका। चाय पीता हूँ तो धर्म भ्रष्ट होता है। नहीं पीता तो हड़ताल नहीं टूटती।

कड़वी दवाई की तरह दो घूँट में ही चाय पी डाली। रामदीन की आँखों मे तैरते विचित्र भाव छिपे न रह सके।

''रामदीन! कल हड़ताल नहीं होनी चाहिए। आज तक मैंने तुम्हारा या तुम्हारे लोगों का कोई काम रोका है? कल हड़ताल नहीं करोगे तो मैं स्वयं तुम्हारी माँगें कमिश्नर से मनवा दूँगा।''

''पर साहब! वो बुधमल हमारा बड़ा नेता है। उससे पूछे बिना हम हड़ताल नहीं तोड़ सकते। जात-बिरादरी का मामला ठहरा।''

‘‘देख लो रामदीन! कभी न कभी तो हड़ताल टूटेगी ही। फिर तुम्हारे काम क्या बुधमल करेगा? तब मेरे पास ही आओगे’’ – मैंने दाँव फेंकते हुए कहा– ‘‘यदि मेरे इलाके में हड़ताल हो गयी तो...’’

रामदीन सोचता रहा। सोचता रहा। फिर एकदम उठ खड़ा हुआ– ‘‘चलिए साहब! बस्ती का चक्कर लगा आते हैं।’’

हम सारी रात बस्ती का चक्कर लगाते रहे। भोर के चार बजे रामदीन के घर लौटे। चमेली ने फिर चाय बनाई। अब उसमें पहले जैसी कड़वाहट न थी।

आशा शैली

नींद

उसने खिड़की के साथ लगी सीट के ऊपर सँभाल कर अपना सामान जमाया और आराम से खिड़की के साथ सिर टिका कर आँखें बंद कर लीं। मन में तसल्ली थी कि चलो अच्छी सीट मिल गई है।

बस चलने में अभी दस मिनट की देर थी। लोग चढ़–उतर रहे थे, लेकिन वह सब से बेखबर आँखें बंद किए अपने–आप में ही गुम बैठी थी कि तभी उसकी नाक ने किसी अप्रिय गंध की सूचना दी।

साथ की सीट पर एक मजदूर दम्पति मय अपने दो बच्चों के आ बैठा था। उनके कपड़ों से आती बालकों के मूत्र और पसीने की दुर्गंध से ही चौंक कर उसने आँखें खोली थीं।

शिमला से हरिद्वार तक का लम्बा सफ़र इस दुर्गंध के साथ कैसे पूरा करेगी? यह सोच–सोचकर उसका जी मिचला रहा था, लेकिन कोई चारा भी न था। उन लोगों को वहाँ से उठने को भी कैसे कह सकती थी। यह सरकारी बस थी, कोई उसकी सम्पत्ति तो नहीं थी।

फिर पता नहीं कब उसे नींद ने आ घेरा। चण्डीगढ़ के बस अड्डे पर बस झटके से रुकी तो उसने चौंक कर देखा। वह उसी गंदे से गोरखे के कंधे पर सर रखे आराम से सो रही थी।

उपेन्द्रनाथ 'अश्क'

केवल जाति के लिए

पंडित दीनदयाल के पुनर्विवाह की बात सुनकर डॉक्टर शर्मा बड़े लाल-पीले हुए, ''ऐसे नेताओं को तोप के मुँह में रखकर उड़ा देना चाहिए।'' उन्होंने फतवा दिया, ''वासनाओं के दास भी कहीं जाति का पथ-प्रदर्शन कर सकते हैं? परसों पत्नी मरी, आज सगाई हुई, कल शादी हो जाएगी, यह हिन्दू जाति अब डूबकर रहेगी।''

हरिहर बोले, ''घर का कुत्ता भी मर जाय तो चार दिन खाना अच्छा नहीं लगता। पत्नी तो फिर पत्नी ही है, जिसे संगिनी, सहचरी और न जाने किन-किन स्नेह और आदर-भरे नामों से पुकारा जाता है, जिससे प्यार के बीसों सुखद-मधुर क्षण बिताए जाते हैं; वफा के हजारों अहद-पैमान किए जाते हैं।''

''और कहा करते थे-दम्मो के बिना जी न सकूँगा मैं, आत्महत्या कर लूँगा।'' शर्माजी ने अतीव व्यंग्य और उपेक्षा से कहा, ''अच्छी आत्महत्या कर रहे हैं, पंडितजी!''

''फिर आदमी शादी करता है सन्तान के लिए'', हरिहर ने रद्दा जमाया, ''इन भलेमानस के दो बच्चे हैं और वे भी दूध-पीते नहीं, और आप चले हैं विवाह करने! अरे भाई, शादी करनी ही थी तो जरा चार दिन ठहर जाते। अपनी न सही, मित्रों की भावनाओं का तो ध्यान किया होता।''

''इन वासना के अन्धों को भावनाओं की क्या चिन्ता है।'' और यह कहते हुए शर्माजी जल्दी-जल्दी चल पड़े, जैसे इस जिक्र ही से उन्हें सख्त कोफ्त हो रही हो।

लेकिन जब शर्माजी की सहधर्मिणी दो बच्चे छोड़ परलोकगामिनी हुई तो इधर आप क्रिया-कर्म से फारिग हुए, उधर आपने शादी कर ली।

हरिहर भी बाजार में मिल गए। दूर ही से बोले, ''शर्माजी, बधाई हो।''

''आपको ही बधाई है!'' दाँत निपोरते हुए शर्माजी ने उत्तर दिया।

''भला मित्र, कुछ दिन तो सन्तोष किया होता'', पास आकर हरिहर ने कहा, ''शादी तो करनी ही थी, चार दिन ठहर जाते।''

‘‘ठहर जाते!’’ शर्माजी गरजे, ‘‘यहाँ एक हिन्दू नारी के भविष्य का प्रश्न था, मैं जरा भी देर करता तो उसका सारा जीवन नष्ट हो जाता।’’

‘‘जीवन नष्ट हो जाता?’’ हरिहर की आँखें आश्चर्य से खुली रह गईं।

‘‘उसके पिता उसे एक बुड्ढे खूसट के हाथ बेच रहे थे।’’ अपने मित्र के आश्चर्य को दूर करने के विचार से शर्माजी ने बताया, ‘‘मैंने दो सौ रुपया अधिक दिया और अबला के जीवन की रक्षा की।’’

परन्तु घटने के बजाय हरिहर का आश्चर्य और बढ़ गया और आँखों के साथ-साथ उनका मुँह भी खुल गया।

दो आने की मिठाई

खान बहादुर रहमत अली कमरे में दाखिल हुए तो उनकी आँखें अंगारे उगल रही थीं। क्रोध के मारे उनका शरीर काँप रहा था और माथे पर बीसों तेवर पड़ गए थे। चीखकर उन्होंने पुकारा, ‘‘अली!... ओ अली के बच्चे!’’

अली उनके किशोर नौकर का नाम था। उनके लड़के मुन्नू की ही वयस का था। बर्तन मलता, पानी भरता, झाड़ू देता और घर के दूसरे बीसों काम करता। इस पर भी खान बहादुर की ‘कृपा-दृष्टि’ उस पर बनी ही रहती।

‘‘अली!’’ वे फिर चीखे।

लेकिन अली कमरे में न था। वह साथ की कोठरी में झाड़ू दे रहा था। पुकार सुनते ही काँपता हुआ-सा सामने आ खड़ा हुआ। खान बहादुर का रूद्र रूप देखते ही उसकी निगाहें धरती मे गड़ गईं और झाड़ू फर्श पर गिर गया।

‘‘हरामजादे!’’ खान बहादुर ने एक थप्पड़ उसके गाल पर जमाया।‘‘वह गुलदान क्यों तोड़ा तूने?’’

इससे पहले कि वह कुछ उत्तर देता, खान बहादुर के थप्पड़ से वह धम्म से फर्श पर गिर पड़ा। सिर उसका फट गया, पर उस ओर ध्यान दिए बिना, अपने क्रोध की रौ में, खान बहादुर उसे घसीटते हुए-से ड्राइंग-रूम में लाए। अँगीठी के नीचे फर्श पर शीशे का सुन्दर फूलदान टूटा पड़ा था। ईद के शुभ अवसर पर उनके एक पुराने मित्र ने विदेश से भेजा था और उनके सभी मित्रों ने उसकी प्रशंसा की थी। क्रोध से उन्होंने अली को उस पर पटक दिया। शीशे के टुकड़े गरीब के हाथों में चुभ गए। लेकिन दया के बदले दुगने क्रोध से उन्होंने उसे उठाया और गालियाँ देते हुए घर से बाहर कर दिया।

फूलदान को पाकर वे बड़े प्रसन्न हुए थे। उसकी सुन्दर कला के प्रदर्शनार्थ उन्होंने ईद के अवसर पर एक पार्टी भी दे डाली थी। और अभी ईद की रात

खत्म भी नहीं हुई कि फूलदान टूट गया। अभी तो न जाने कितने मित्रों को वे उसे दिखाना चाहते थे। जब उन्हें नौकरानी से पता चला कि शायद अली ने झाड़ू देते हुए तोड़ दिया है तो वे क्रोध से पागल हो उठे थे। नौकरानी को बुलाकर टूटे हुए फूलदान को उठा, जगह साफ करने का आदेश देकर वे ड्राइंग-रूम से बाहर निकल गए।

आँगन में उनका लड़का मुन्नू उसी फूलदान के पैंदे से 'ठैय्या टापू' खेल रहा था। खान बहादुर को देखते ही वह सहसा चुप-सा खड़ा रह गया।

उसके हाथ से फूलदान का पैंदा लेकर अचानक खान बहादुर ने पूछा, ''तुमने तोड़ा है उसे मुन्नू?''

वह और भी सहम गया। धीरे-धीरे उसका मुँह बिगड़ा और फिर वह सहसा रो पड़ा।

फूलदान वास्तव में उसी से टूट गया था।

उसे रोते देख खान बहादुर का सारा क्रोध हवा हो गया। आतुरता से बढ़कर उन्होंने उसे अपनी गोद में उठा लिया। पुचकारते हुए बोले, ''रोते क्यों हो, हमीद चचा को हम लिखेंगे, मुन्नू के लिए एक गुलदान और भेज दो।''

उनकी आँखों में अंगारों के बदले कुछ विचित्र तरलता आ गई, किन्तु उनके घर के बाहर बेचारा अली धूप में पड़ा रो रहा था। उसके घावों से रक्त बह रहा था और वह अपने हाथों से शीशे के नन्हें टुकड़े निकालने का विफल प्रयास कर रहा था।

''उस साले अली से कहो टें-टें बन्द करे!'' खान बहादुर ने ड्राइंग-रूम में जाकर नौकरानी से कहा और जेब से दो आने निकालकर उसकी ओर फेंकते हुए बोले, ''यह दो आने उसे दो और कहो कि हमने उसे माफ कर दिया, चल के काम शुरू करे। दो आने की, बोलना, मिठाई खा ले।''

कमल चौपड़ा

इतनी दूर

खबर फोन पर मिली थी जिसे सुनकर वह एकाएक उदास हो गई थी। घबराकर पति ने पूछा था–खैर तो है? भर्राये स्वर में उसने कहा–भैया कंपनी की तरफ से यू. के. जा रहे है। एक ही तो भाई है मेरा, वो भी विदेश जा रहा है। इतनी दूर।

ठहठहा कर हंस पड़ा – अरे यह तो खुशी की बात है। यहां रखा ही क्या है? विदेश की बात ही कुछ और है। वैसे भी अब तो ग्लोबलाईजेशन हो चुका है। अब क्या देश क्या विदेश, कहीं कोई फर्क नहीं। दूरियां घट रही है। बटन दबाओ और जिससे मन चाहे बात कर लो। एक ही शहर में रहते हुए भी रोज रोज कहां मिलना हो पाता है? साल भर बाद कभी किसी शादी ब्याह में मिल लिये तो मिल लिये। आम तौर पर फोन पर बात होती है। फोन के लिए अब कहीं कुछ क्या दूर। फोन पर बात करके मिले बराबर हो जाता है। मुझे देखो मेरा एक भाई कनाडा में है और बहन यू. एस. ए. और जब से पुराना मकान बेच कर यहां दो फ्लोर लिये है बापू ग्राउण्ड फ्लोर पर रहते हैं और हम थर्ड फ्लोर पर। फिर भी बापू को कई कई दिन बाद मिलना हो पाता है। मोबाइल एस.एम.एस और नेट ने सब कुछ पास कर दिया है। सारी दुनिया एक गांव बन चुकी है इसलिये तुम्हारी उदासी का कोई मतलब नहीं। बस एक क्लिक और दूरियां खत्म... हा हा

तभी कालबेल बजी। लपककर उसने छज्जे से नीचे झांका। बाबूजी वाले पोर्शन के बाहर तीन चार लोगों के साथ बाबूजी की कामवाली बाई खड़ी थी। लपककर वह नीचे आया।

दरवाजा अन्दर से बन्द था। बाबूजी खोल ही नहीं रहे थे। पड़ोसी ने आगे बढ़ कर कहा–मुझे तो यू.एस.ए. से आपकी सिस्टर का फोन आया था। बाबूजी ने ही दिया उन्हें मेरा नम्बर। सिस्टर कह रही थी वे दो दिन से बाबूजी को फोन मिला रही हैं। नो–रिप्लाई जा रहा है। बाबूजी उठा ही नहीं रहे। उन्हें चिंता हो रही थी। सिस्टर ने ही बताया कि इसी बिल्डिंग में आप थर्ड फ्लोर पर रहते हैं। ये आपके फादर हैं मुझे तो पता ही नहीं था। ऐसा कभी जिक्र ही

नहीं हुआ न? मैं खटखटा ही रहा था कि ये कामवाली भी आ गई...।

कामवाली के चेहरे पर भी चिंता थी – मैं अब्बी आई तो ये दरवाजा खटखटा रहे थे पर बाबूजी दरवाजा ही नहीं खोल रहे। परसों काम करके सुबह ग्यारह बजे जब मैं यहां से गई तब तक तो बाबूजी ठीक-ठाक थे। कल होली को मेरी छुट्टी थी। कल मैं नहीं आई।

शर्म आ रही थी उसे। इतना पास रहते हुए भी उसने कई दिन से बाबूजी की कोई सुध नहीं ली थी। अपनी ही दुनिया में मस्त था। फोन तक नहीं किया। और बाबू जी इधर...। दरवाजा तोड़ा गया। सामने इजी चेयर पर बाबू जी बेजान पड़े थे। गर्दन एक तरफ को लुढ़की पड़ी थी। उनकी खुली हुई आंखें दरवाजे की ओर ताक रहीं थीं जैसे किसी का इंतजार कर रही हों।

कमलेश भारतीय

डर

वह सुबह उठा। नहा–धोकर, हल्का–फुल्का नाश्ता कर दफ्तर जाने के लिए तैयार होने लगा। जूते पहनने लगा तो अचानक एक जूते का फीता कसते–कसते टूट गया। इतना समय नहीं बचा था कि बाज़ार जाकर नये फीते ख़रीद लाता। जैसे–तैसे पुराने फीते कसे। एक छोटा रह गया, दूसरा बड़ा। दफ़्तर यह सोचकर रवाना हुआ कि शाम को नये फीते ख़रीद लेगा।

दिन भर दफ्तर में बैठे–बैठे उसका ध्यान बार–बार अपने जूतों पर जाता रहा। एक बड़े व दूसरे छोटे फीते पर जाता रहा। वह मेज़ के पीछे जूतों को ज़्यादा से ज़्यादा छिपाने की कोशिश में लगा रहा। दूसरे कर्मचारी देखेंगे तो कितना बुरा लगेगा। वैसे भी हम यही तो सोचते रहते हैं कि दूसरे सोचेंगे तो कैसे लगेगा? आज इसे इस बात पर और भी ग़ौर करने का मौका मिला।

जैसे–तैसे शाम आयी। वह सीधा एक बड़े से मार्केट में पहुंचा। एक से एक बड़ा जूतों का शो–रूम। सिर्फ एक जोड़ी फीते चाहिए थे उसे तो। किस शो–रूम में जाये? चकाचौंध कर देने वाली रोशनियों के बीच चमचमाते जूते। कहीं भी फीते दिखाई नहीं दे रहे थे। सहमे–सहमे एक शो–रूम में दाखिल हुआ। अपने पुराने जूतों पर उसे खूब शर्म व संकोच महसूस होने लगा। कहीं पढ़ी हुई कविता भी मन में गूंजने लगी, 'हर आदमी एक जोड़ी जूता है जो मेरे सामने मरम्मत के लिए खड़ा है।' वह ऐसा ही महसूस कर रहा था– जैसे सेल्समैन के सामने अपनी औक़ात जानना चाहता हो।

संकोच से फीतों के बारे में पूछा। सेल्समैन ने बड़ी हैरानी से उसे देखा और अपने पेशे की विनम्रता को मुश्किल से संभालते हुए अगले शो–रूम की ओर इशारा कर दिया। वह फिर दूसरे शो रूम के सेल्समैन के सामने खड़ा था। लोग एक से एक जूते पहन कर देख रहे थे। उसे तो सिर्फ दो जोड़ी फीते चाहिए थे। सेल्समैन पहले शो रूम के सेल्समैन से ज़्यादा विनम्र नहीं था। उसने घूरा और पूछा– ''तुम्हें यह भी नहीं पता कि इतने बड़े शो–रूम में फीते नहीं बिकते, नये जूते लेने हों तो बताओ, दिखा देता हूं।''

सभी शो–रूमों में ऐसे स्वागत के बाद वह बाहर निकल आया। देखा

लोग फास्ट फूड खा रहे हैं और कप प्लेट फेंक रहे हैं। उसे महसूस हुआ जैसे बड़े शो–रूम वाले सेल्समैन यही समझाने की कोशिश कर रहे थे –जनाब, यह यूज़ एंड थ्रो का ज़माना है, आप फीते ढूंढ रहे हैं। फेंको इन जूतों को नये ख़रीदो। आदमी कहां जाये? इसलिए वह आज तक जूतों पर एक छोटा व बड़ा फीता डाले घूम रहा है और डरता रहता है कोई देख न ले।

आइना

मैं मर चुका हूं। अभी मेरी श्रद्धांजलि सभा चल रही है। मेरी आत्मा श्रद्धांजलि सभा में ही भटक रही है। मेरी आत्मा की शांति की दुआएं की जा रही हैं, पर मुझे शांति नहीं मिल रही है। जिसे देखो, मेरे बारे में झूठ बोले जा रहा है। कोई कह रहा है कि इतने साल का रिश्ता था, कोई कह रहा है कि मैं इनके बहुत करीब रहा। मेरी तारीफ़ों के पुल बांधे जा रहे हैं। इतने कि मैं भी नहीं जानता कि मैं इतना अच्छा था। मुझे हर कोई अपने बहुत निकट बता रहा है। वे भी जो बरसों से मुझे नहीं मिले। वे भी जो क़दम–क़दम पर मेरा विरोध करते रहे।

कुछ चेहरे तो आज श्रद्धांजलि सभा में ही देख रहा हूं। कहां थे ये इतने बरसों से? जीवन में कितने ही बड़े–बड़े संघर्ष, झंझावात, आंधी, तूफान आये, तब मैंने इनसे मदद मांगी और ये पतली गली से कहां निकल गये, पता ही नहीं चला। आज ही दोबारा देख पा रहा हूं इनको. आज मेरे परिवार को हर मदद देने का विश्वास दिला रहे है। मेरी हंसी छूटने वाली है, पर ऐसे मौक़ों पर हंसी से मेरी हंसी उड़ जायेगी। मैं जैसे किसी आइने के सामने खड़ा हूं और अपना ही नहीं दूसरों का चेहरा बड़ी आसानी से देख पा रहा हूं। चलो, मेरी आत्मा को शांति मिली। श्रद्धांजलि सभा ख़त्म हो गयी है। मैं भी शांति से जा रहा हूं, क्योंकि सच की तस्वीर देख कर ही जा रहा हूं।

कर्मजीत सिंह नडाला

बाहर का मोह

वह कहाँ मानने वाली थी। उसके सिर पर तो बाहर का भूत सवार था। केनेडा रहते पति ने फोन पर कहा, ''तू ज़िद न कर। घर पर माँ-बाऊजी व बच्चों को सँभालने की ज़िम्मेदारी तेरी है। मुझे लौट ही आना है साल बाद। बाहर सैर-सपाटा नहीं है। यहाँ तो सिर खुजलाने तक का वक्त नहीं मिलता। यहाँ बेकार को कोई रोटी नहीं देता।... हाँ, अगर तू वहाँ नहीं रह सकती तो तुझे कोई न कोई कोर्स करना पड़ेगा। फिर ही तुझे यहाँ आने का फ़ायदा है।''

वह शहर जाने लगी। सुबह तैयार हो, सज-सँवर कर चल पड़ती। पीछे सास-ससुर, चूल्हा-चौका भी करते और उसके बच्चों को भी सँभालते।

''यार! यह संत सिंह की बहू रोज सज-सँवर कर किधर जाती है?.... घर पर सास-ससुर को तो कुत्ते-बिल्ली समझती है।'' एक दिन बहू को गली में जाते देख एक आदमी ने दूसरे से कहा।

''कहते हैं, शहर जाती है... वहाँ कोई कोर्स-कूर्स करती है... कहते हैं फिर बाहर जाकर काम आसानी से मिल जाता है।''

''कोर्स!... अब? दो बच्चों की माँ होकर कौन-सा कोर्स करने चली है?... घर से ठीक-ठाक है... खाने-पीने को सब कुछ है.... बाहर से घरवाला काफी पैसे भेज रहा है, सौ सुविधाएँ हैं...''

''सुना है कोई नैनी का कोर्स कर रही है।''

''नैनी!... यह क्या बला हुई?''

''अरे तुझे नहीं पता! उधर केनेडा में सभी लोग अपने काम पर चले जाते हैं। पीछे उनके बूढ़े और बच्चे के नाक-मुँह पोंछा करेगी... सेवा सँभाल करेगी... और क्या...?''

''अच्छा... यह कोर्स इसलिए होता है.... दुर फिटे-मुँह हमारे लोगों के। यहाँ से जाकर गोरो के बच्चे-बूढ़े सँभालते हैं। इससे तो अच्छा है कि अपने बच्चों और सास-ससुर को सँभाल ले... ससुरी केनेडा की...''

भूकम्प

बेटा सोलह वर्ष का हुआ तो वह उसे भी अपने साथ ले जाने लगा।

‘‘कैसे हाथ–पाँव टेढ़े–मेढ़े कर चौक के कोने में बैठना है, आदमी देख कैसे ढीला–सा मुँह बनाना है। लोगों को बुद्धू बनाने के लिए दया का पात्र बनकर कैसे अपनी ओर आकर्षित करना है। ऐसे बन जाओ कि सामने से गुज़र रहे आदमी का दिल पिघल जाए और सिक्का उछालकर तुम्हारे कटोरे में आ गिरे।’’

वह सीखता रहा और जैसा पिता कहता, वैसा बनने की कोशिश भी करता रहा। फिर एक दिन पिता ने पुत्र से कहा, ‘‘जा, अब तू खुद ही भीख माँगा कर।’’

पुत्र शाम को घर लौटा। आते ही उसने अपनी जेब से रुपये निकाल कर पिता की ओर बढ़ाए, ‘‘ले बापू, मेरी पहली कमाई...’’

‘‘है! कंजर! पहले दिन ही सौ रूपये! इतने तो कभी मैं आज तक नहीं कमा कर ला सका, तुझे कहाँ से मिल गए?’’

‘‘बस ऐसे ही बापू, मैं तुझसे आगे निकल गया।’’

‘‘अरे कहीं किसी की जेब तो नहीं काट ली?’’

‘‘नहीं, बिलकुल नहीं।’’

‘‘अरे आजकल तो लोग बड़ी फटकार लगाकर भी आठ आने–रुपया बड़ी मुश्किल से देते हैं... तुझ पर किस देवता की मेहर हो गई?’’

‘‘बापू, अगर ढंग से माँगो तो लोग आप ही खुश हो कर पैसे दे देते हैं।’’

‘‘तू कौन से नए ढंग की बात करता है, कंजर? पहेलियाँ न बुझा। पुलिस की मार खुद भी खाएगा और हमें भी मरवाएगा। बेटा, अगर भीख माँग कर गुज़ारा हो जाए तो चोरी–चकारी की क्या ज़रूरत है? पल भर की आँखों की शर्म है... हमारे पुरखे भी यही कुछ करते रहे हैं, हमें भी यही करना है। हमारी नसों में भिखारियों वाला खानदानी खून है... हमारा तो यही रोज़गार है, यही कारोबार है। ये खानदानी रिवायतें कभी बदली हैं? तू आदमी बन जा...

‘‘बापू, आदमी बन गया हूँ, तभी कह रहा हूँ। मैंने पुरानी रिवायतें तोड़ दी हैं। मैं आज राज मिस्त्री के साथ दिहाड़ी करके आया हूँ। एक कॉलोनी में किसी का मकान बन रहा है। उन्होंने शाम को मुझे सौ रुपये दिए। सरदार कह रहा था, रोज़ आ जाया कर, सौ रुपये मिल जाया करेंगे...’’

पिता हैरान हुआ! कभी बेटे की ओर देखता, कभी रुपयों की ओर। यह लड़का कैसी बातें कर रहा है! आज उसकी खानदानी रियासत में भूकम्प आ गया था, जिसने सब कुछ उलट–पलट दिया था।

पराली का सेंक

मिल की भट्ठियों को चलाने के लिए पराली जलाई जाती थी और जब से यह शराब मिलने लगी थी, तब से ही वह गड्डे पर पराली ढो रहा था। सीजन में बड़ी मुश्किल से पांच–सात हजार ही बनता। बहुत जोर लगाता पर आखिर गड्डे और भैंसों ने तो अपनी चाल ही चलनी है। तिस पर घरों के बीसों खर्चे।

आस पड़ोस ट्रैक्टरों वाले, चक्कर लगा कर मालो–माल हो गए थे। भंते को यह देखकर अपना आप खेत में खड़े उड़ने जैसा प्रतीत होने लगता और वह गुस्से से जानवरों की चाल तेज करने के लिए बेहताशा लाठी भांजता।

उसके साथ मिट्टी हुई रहती मिंदी का कभी अच्छा कपड़ा नहीं बना था, पर जब ट्रैक्टर लेने की बात हुई तो उसने सारे गहने लाकर दे दिए। कहती यह मेरे किस काम के?

बेटे की दुबई जा कर कमाई करने की इच्छा का वह हर बार अगले सीजन के बाद ज़रूर भेजने को कह कर टाल जाता था।

पत्नी के गहने और थोड़ी जमीन गिरवी रख, पैसे बैंक में जमा करवा कर ट्रैक्टर कर्ज पर ले लिया गया।

ट्रैक्टर खरीदने के पश्चात उसने सोच लिया था कि जवान बेटी की शादी, घर की मरम्मत और पत्नी के सपनों को पूरा करने के लिए वह खूब मेहनत करेगा और सारी कसर निकाल देगा।

धान की कटाई से पहले ही उसने लोगों से बात पक्की कर ली थी। बेटा भी इस बार इच्छा को पूरी होती देख कर पिता के साथ कंधे से कंधा मिलाकर काम करने को तैयार था।

रेट इस बार भी अधिक निकला। वह अन्दर ही अन्दर और भी खुश हो रहा था। बैंक की किश्तें समय पर भर सकेगा। धान की कटाई शुरू हो गई। पराली की पहली ट्राली लादकर वह खुशी–खुशी लोगों के साथ मिल के गेट के सामने पहुंचा तो गेट कीपर ने सहज भाव से कहा ''इस बार पराली नहीं चाहिए।''

''क्यों.... ?''

''सरकार ने धुएँ और राख के प्रदूषण से बचने के लिए बिजली से चलने वाला बॉयलर लगा दिया है...।''

''क्या....क्या!''

भंते को इस तरह लगा कि जैसे वह मिल की भट्ठी के सेंक से सारा जल गया हो।

अनुवादः ज. रा. कु.

कर्मवीर सिंह

स्वेटर

दिसम्बर का महीना चल रहा था। काफी ठंड थी। उस बैंक मैनेजर ने अपने चपरासी को बिना स्वेटर पहने आता देखा तो उसको बड़ी दया आई। उसने मन–ही–मन सोचा कि अपना एक पुराना स्वेटर उसे दे देना चाहिए जो उसकी ढलती उम्र के कारण ढीला पड़ गया था। वैसे वह पहले भी कभी–कभार उसे पुराने कपड़े देता रहता था। उसने उसे घर आकर स्वेटर ले जाने को कहा। मैनेजर दो महीने बाद रिटायर होने वाला था। जब वह दो–तीन दिन तक लेने न आया तो उसने हारकर एक बार फिर से कहा।

उसने अपनी पत्नी को भी कह रखा था कि स्वेटर उसी को देना है, कहीं बर्तन बेचने वालों को न दे देना। इसी तरह एक महीना गुज़र गया पर वह लेने नहीं आया। उसे चपरासी पर अब गुस्सा आ रहा था पर पहले की तरह रौब से भी नहीं कहना चाहता था। शायद, कह भी नहीं सकता था। उसे मालूम था कि छिपते सूरज को कोई सलाम नहीं करता। साथ ही, जाते वक्त कोई बदमगजी पैदा हो जाने के डर से वह चुप ही रहा। लेकिन, कशमकश उसके अन्दर चलती रही।

पहली तारीख को उसने देखा कि चपरासी एक नया रेडीमेड स्वेटर पहने उसके सामने तनकर खड़ा है, जो उस पर काफी खिल भी रहा है।

कुलविंदर कौशल

मुआवजा

गत दिनों गांव में बहुत से किसानों की खड़ी फसल तबाह हो गई थी। इसी कारण आज गांव में नेता जी प्रशासनिक अधिकारियों के साथ मुआवजा बाँटने आए थे। स्टेज पर से क्रम अनुसार किसानों का नाम पुकारा जा रहा था। सभी किसान अपना नाम पुकारे जाने पर स्टेज पर जाकर अपना चैक लेकर आते। चैक की रकम देखते ही उनका दिल बैठ जाता। चैक की रकम से तो उनकी फसल की लागत भी पूरी नहीं होती थी। घरेलू जरूरतों के लिए पहले से लिए हुए कर्ज के बारे में सोचते ही उनके चेहरों पर चिंता की लकीरें और भी गहरी हो जातीं।

''बचन सिंह कहाँ पर है, वो ले जाए अपना चैक'' स्टेज से आवाज गूंजी। 'वह तो मोटर पर गले में फंदा लगाकर मर गया।' मणकू चौकीदार ने साँस फूलते हुए बताया। चौकीदार की बात सुनकर लोगो में काना-फूसी शुरू हो गई। 'मर तो बेचारा उसी दिन गया था, जिस दिन फसल जली थी, आज तो शरीर ही छोड़ा है।' दयाल बाबे ने खड़े होकर कहा।

''सही कहा बाबे, अगले माह बेटी की शादी थी और जमीन भी बटाई पर ही थी।'' एक और ने साथ में खड़े हो कर कहा। ''हैं... गल फंदा। सरकार तो मुआवजा दे रही थी।'' कहते हुए नेता जी स्टेज से नीचे आ गए।

कुछ दिनों बाद बचन सिंह का परिवार खुदकुशी करने वाले किसानों को मिलने वाले मुआवजे के लिए दफ्तरों के चक्कर काट रहा था।

नई सुबह

एक साथ कई मच्छरों के काटने से निहाल सिंह की तंद्रा टूटी। उसके आसपास मच्छरों ने घेरा डाला हुआ था। उसने होश संभालते हुए देखा कि आधी रात गुजर चुकी थी, सुबह होने को थी और वह कल शाम का खेत की मोटर कोठड़ी में बेहोश सा हुआ पड़ा था। 'चूस लो तुम भी खून मेरा, पहले बैंक वालों और आढ़तियों ने क्या कम चूसा है...' वह मन के भीतर ही बोला। वह

तो आज अपनी जीवन लीला समाप्त करने को ही इस कोठड़ी में आया था परन्तु अपने आप के साथ सवाल जवाब करते हुए कब गहरी सोच में चला गया, उसे मालूम ही नहीं हुआ। बचपन से जवानी तक पहुँचते हुए और अब वृद्ध अवस्था में कहाँ मेहनत में कमी रह गई कि पेट भर खाना भी नहीं मिलता? क्यों फसल की सारी कमाई लाला का सूद ही खा जाता है? क्यों उसकी और परिवार की छोटी सी ख्वाहिश के लिए मंहगाई शब्द बहुत बड़ा बन जाता है... क्यों...क्यों... और पता नहीं कितने सारे क्यों सारी रात उसके दिमाग में घूमते रहे। किसान यूनियन की रैली के बहुत से शब्द आज उसे याद आए, सरमाएदारी, लूट की जमात, कालाधन– इस के अतिरिक्त और बहुत कुछ जो उस के सिर के ऊपर से गुजर गया।

'नहीं मैं इन शब्दों के जवाब लिए बिना नहीं मरूंगा, इन कठिन शब्दों के अर्थ मैं जान कर ही रहूँगा, निहाल सिंह नहीं मर सकता, तुम निहाल सिंह...' उसने गुस्से से जोरदार दायां हाथ बाएं बाजू पर मारा, चार पाँच मच्छर फ़ौरन ही मर गए। वह उठा और कोठरी का कुंडा खोला, बाहर आसमान में लाली उभरने लगी थी।

अनुवादः जगदीश राय कुलरियां

गुरचरण चौहान

ढह रहे बुर्ज

ड्योढ़ी में बैठा सरमुख सिंह बीस वर्ष पहले की स्मृतियों में खो गया.... उसके पिता जवंद सिंह बराड़ इलाके के बहुत ही आदरणीय व्यक्ति थे। थाने से लेकर कचहरी तक में उन्हें बैठने के लिए कुर्सी मिलती थी। सरमुख सिंह की आँखों के आगे जवंद सिंह आ खड़ा हुआ, जैसे कल की बात हो। बैठक के आगे बने पक्के चबूतरे पर मोढ़े के ऊपर बैठा जवंद सिंह। वह अपनी छड़ी चबूतरे पर मारता हुआ सामने बैठी संगत को कहता, ''हम सिद्धू बराड़ हैं, बाबा आला सिंह के खानदान से। पटियाला के महाराज हमसे लगान नहीं वसूलते। वे कहते हैं सिद्धू, बराड़ मेरी बिरादरी वाले हैं...''

आज सुबह उसके बेटे के मुँह से निकली बात उसका कलेजा चीर गई, ''बापू, बता तूने क्या टिण्डे लेने हैं हमारे काम से? तेरी फोकी सरदारी को हम क्या चाटें!... कहता, दुकान का नाम 'बराड़ बूट हाउस' क्यों रखा... खेतीबाड़ी में अब क्या पड़ा है.. मुझसे बड़े तीन खेती कर क्या घर नोटों से भर रहे हैं... ?''

सेम की मार से पिछले सात-आठ साल से उनके घर को तो जैसे ग्रहण लगा था। सरमुख सिंह के भीतर बसे जाट को कमज़ोर आर्थिकता ने तबाह कर दिया था, पर खोखले अहं ने उस के मुख से छोटे बेटे को कहा दिया था, ''न अब तू छोटी-जाति वाले काम करेगा... लोगों के पैरों में जूतियाँ...''

''इसमें क्या बुरा है? व्यापार तो व्यापार है... और ये रहे दुकान के मुहूर्त के निमंत्रण-पत्र, जिसे देने हों, दे देना।'' बेटा उसके पास निमंत्रण-पत्र रखकर चला गया। उसके भीतर का जाट सारा दिन उसके दिमाग में उथल-पुथल मचाता रहा कि वह निमंत्रण-पत्र बाँटे या नहीं।

दिन छिपने के साथ ही सरमुख सिंह अनमना-सा उठा और अपने लँगोटिया-यार जमीत सिंह नंबरदार के घर की ओर चल दिया। जमीत सिंह ने सारी उम्र जायज़-नाजायज़ हर काम में उसका साथ दिया। नीम के पेड़ के नीचे बैठे जमीत सिंह को सुबह बेटे के साथ हुई तकरार की बात बता, वह हल्का महसूस कर रहा था।

''सरमुख, अब तो चुप ही भली। अपना ज़माना अब लद गया...'' जमीत सिंह ने गहरी साँस ली।

''नंबरदार, तू भी... !'' सरमुख सिंह हैरान-परेशान नंबरदार को एकटक देखता रहा।

चारपाई से उठते हुए सरमुख सिंह ने अपनी फ़तूही की जेब से दुकान के मुहूर्त का निमंत्रण-पत्र निकाल नंबरदार को पकड़ाया और बोझिल कदमों से अपने घर की ओर चल पड़ा।

गुरमेल मडाहड़

राज़

एक कछुआ बहुत तेज़ी से भागा जा रहा था। सांस फूल गई थी। टांगें थककर जवाब दे चुकी थीं। खरगोश उसकी आंखों से ओझल हो चुका था। उसे अपनी हार आंखों के आगे भूत की तरह नाचती दिखाई दे रही थी।

अचानक उसे अपने ऊपर से एक पंडुक गुज़रती दिखाई दी। उसने उसे आवाज़ दी। कछुए की आवाज़ सुनकर वह तुरन्त नीचे उतर आई।

''अरी ओ पंडुक! तू अमन की देवी है न। देख, खरगोश ने मेरी धीमी गति, मेरी कमज़ोरी को ललकारा है और मैंने उसकी चुनौती मंजूर कर ली है। इसलिए मेहरबानी करके मेरी मदद कर। मैं तेरा बहुत ऋणी रहूंगा।''

''मैं तुम्हारी क्या मदद कर सकती हूं?'' पंडुक ने कछुए की मिन्नतों पर पसीजते हुए कहा।

''तू मुझे अपनी पीठ पर बैठाकर खरगोश से आगे ले चल।''

पंडुक उसे पीठ पर बैठाकर उड़ने लगी। कछुए के भार से, खरगोश से आगे निकलने की कोशिश करके पंडुक के पंख थक गए। सांस फूल गई पर वह हवा को चीरती हुई और तेज़ उड़ी जा रही थी। और एक जगह जाकर उसने खरगोश को पीछे छोड़ दिया। खरगोश के पीछे रह जाने पर कछुए को सुख की सांस आई और पंडुक भी खुश थी कि वह किसी कमज़ोर जीव की मदद कर रही थी।

निश्चित स्थान पर पहुंचकर कछुए ने पंडुक को रुकने के लिए कहा। पंडुक रुक गई। पर अचानक कछुए को किसी बात का खयाल आया तो उसकी खुशी काफूर हो गई। जब पंडुक उसको पीठ पर से उतारकर उड़ने लगी तो कछुए ने पीछे से छुरी निकाल कर उसकी गर्दन पर चला दी। पंडुक तड़पकर रह गई। पास खड़े कछुए ने पूरे जोर का ठहाका लगाया और कहा, ''अब मेरी जीत का राज़ बताने वाला कोई नहीं।''

जगदीश अरमानी

आधा आदमी

‘तुम्हे यहाँ नौकरी मिल सकती है।’

‘सच! वाह-वाह! बहुत-बहुत धन्यवाद।’

’परन्तु एक शर्त पर।’

‘बताएँ शीघ्र बताएँ कौन-सी?’

‘तुम्हें तनख्वाह आधी मिलेगी।’

‘हैं... क्यों?’

‘तुम्हारा एक हाथ और पाँव नहीं है। काम तो तुम आधे आदमी जितना ही करोगे।’

‘.............।’

‘बोलो, स्वीकार है?’

‘एक शर्त पर।’

‘वह कैसी?’

‘कृपया, पहले आप मेरा आध पेट काट दें।’

जगदीश राय कुलरियाँ

मुक्ति

''बेटा, मेरी यही विनती है कि मेरे मरने के बाद मेरे फूल गंगा जी में डाल कर आना।'' मृत्यु शय्या पर पड़े बुजुर्ग बिशन ने अपने इकलौते पुत्र विसाखा सिंह की मिन्नत–सी करते हुए कहा। गरीबी के कारण इलाज करवाना ही कठिन था। ऊपर से मरने के खर्चे। फूल डालने जैसी रस्मों पर होने वाले संभावित खर्चे के बारे में सोच कर विसाखा सिंह भीतर तक काँप उठता था।

''लो बच्चा! पाँच रूपये हाथ में लेकर सूर्य देवता का ध्यान करो।'' फुटबाल जैसी तोंद वाले पण्डे की बात ने उसकी तंद्रा को भंग किया।

उसे गंगा में खड़े काफी समय हो गया था। पंडा कुछ न कुछ कह उससे निरंतर पाँच–पाँच, दस–दस रुपये बटोर रहा था।

''ऐसा करो बेटा, दस रुपये अपने दाहिने हाथ में रखकर अपने पितरों का ध्यान करो। इससे मरने वाले की आत्मा को शांति मिलेगी।''

अब उससे रहा नहीं गया, वह बोला, ''पंडित जी, यह क्या ठग्गी–ठोरी चला रखी है। एक तो हमारा आदमी दुनिया से चला गया, ऊपर से तुम मरे का माँस खाने से नहीं हट रहे। ये कैसे संस्कार हैं?''

''अरे मूर्ख, तुझे पता नहीं कि ब्राह्मणों से कैसे बात की जाती है! जा मैं नहीं करवाता पूजा। डालो, कैसे डालोगे गंगा में फूल? अब तुम्हारे पिता की गति नहीं होगी। उसकी आत्मा भटकती फिरेगी।'' पंडित ने क्रोधित होते हुए कहा।

''बापू ने जब यहाँ स्वर्ग नहीं देखा तो ये तुम्हारे मंत्र उसे कौन से स्वर्ग में पहुँचा देंगे? जरूरत नहीं मुझे तुम्हारे इन मंत्रों की अगर तुम फूल नहीं डलवाते तो...'' इतना कह उसने अपने हाथों में उठा रखे फूलों को थोड़ा नीचा कर गंगा में बहाते हुए आगे कहा, ''ले ये डाल दिए फूल!'' उसका यह ढंग देखकर पंडे का मुँह खुला का खुला रह गया।

एक गदर और

एक गरीब लड़के के साथ ऊंची हवेली वाले सरदारों की लड़की के भागने की खबर पूरे गांव में जंगल की आग की तरह फैल चुकी थी। लड़की के इस कदम ने दिलावर सिंह को कहीं मुंह दिखाने लायक नहीं छोड़ा था। उसने अपनी बंदूक लोड की और लड़के घर को चल दिया।

''कहां है वो भैन... बचनिए, सीधी तरह बता कि तेरा लड़का मेरी बेटी को कहां ले गया है... मैं साले का खून पी जाऊंगा... एक बार मेरे सामने तो आ जाए... सारी गोलियां एक ही बार उतार दूंगा उसमें...।'' वह एक ही सांस में बहुत-कुछ कह गया।

''मुझे क्या पता... किधर गया है...।''

''चुप कर, ज्यादा चबर-चबर मत कर... जो दो अक्खर पढ़ गया है... तो क्या आसमान को टांके लगाने हैं... अपनी जात-कुजात नहीं देखते..... उसने सरदार की इज्जत पर हाथ डाला है।''

''जानती हूं... सब जानती हूं सरदार की इज्जत को..... अपनी बार अब सेंक लगता है....जब मैं गोबर उपले पाथने जाती थी, तब कैसे चोरी-छिपे अंदर कमरे में ले जाता था... मैं जाने क्या सोचकर चुप लगा जाती थी.... पर अब कान खोलकर सुन ले.... मेरा बेटा आज ही कचहरी से शादी करा के वापिस आएगा.... कर ले जो तेरे से होता हो... मैं भी देखती हूं जोर तेरा.... बड़ा आया सरदारी वाला!''

बचनी शेरनी बनकर डटी हुई थी।

अनुवाद : अशोक भाटिया

कीमत

''मैंने कहा जी! आप दारू पीने में लगे हो.... पता है समय कितना हो गया?.... रात के बारह बजने वाले हैं... अपना श्याम आज पहली बार फैक्टरी गया है और अब तक नहीं आया। मेरा मन तो बहुत घबरा रहा है...'' भागवंती ने अपने पति सेठ रामलाल से कहा।

''वह कौन-सा बच्चा है, आ जाएगा.... तू तो ऐसे घबरा रही है.... थोड़ी देर और देख ले... नहीं तो फोन करके पता कर लूँगा।''

कुछ देर बाद दरवाजे की घंटी बजी तो भागवंती को चैन मिला।

''क्यों बेटा, इतनी देर कर दी? आजकल वक्त बहुत बुरा है.... मेरी जान

ही मुठ्ठी में आई हुई थी।'' भागवंती बेटे से बोली।

''अरे कोई फोन ही कर दिया कर... तेरी माँ चिंता कर रही थी... अच्छा बता तुझे अपनी फैक्टरी कैसी लगी?'' रामलाल ने बेटे से कहा।

''फैक्टरी तो ठीक है पापा, पर मुझे यह बताओ कि फैक्टरी में सभी बाहर के मज़दूर ही क्यों रखे हुए है, जबकि हमारे पंजाबी लोग बेरोजगार फिर रहे हैं।''

''अरे बेटे, अभी तेरी समझ में नहीं आएँगी ये बातें।''

''नहीं पापा, बताओ?''

''बेटे, तुझे पता है कि अपनी फैक्टरी में कैसा काम है। जरा सी लापरवाही से आदमी की मौत हो जाती है... अगर कोई प्रवासी मज़दूर मर जाए तो ये दस-बीस हज़ार रुपये लेकर समझौता कर लेते हैं.... लेकिन अपने वाले तो लाखों की बात करते हैं.....''

सेठ रामलाल ने खचरी हँसी हँसते हुए शराब का एक और पैग अपने गले के नीचे उतार लिया।

साँप

कई दिनों से बरसात रुकने का नाम ही नहीं ले रही थी। लोग पशुओं के चारे के लिए भी परेशान थे। साहसी लोग सिर पर खाली बोरियाँ ओढ़ खेतों में से चारा लेने जा रहे थे।

अपने इकलौते बेटे जीत को खेत की ओर जाते देख, प्रीतम कौर के मुख से निकल गया, ''पुत्तर! जरा देख कर जाना.... इस मौसम में ससुरे साँप-संपोलिए सब बाहर निकल आते हैं...''

इस एक वाक्य ने उसके जीवन के पिछले जख़्मों को हरा कर दिया। उसे याद आया कि पति की रस्म-पगड़ी के बाद रिश्तेदारों ने ज़ोर देकर उसके जेठ के बड़े बेटे को उनके पास सहारे के रूप में छोड़ दिया था। एक रात अचानक उसकी नींद खुल गई। उसने देखा कि वह लड़का उसकी सो रही जवान बेटियों के सिरहाने खड़ा कुछ गलत करने की चेष्टा कर रहा था।

''जा निकल जा मेरे घर से.... ज़रूरत नहीं है मुझे तेरे सहारे की... मैं तो अकेली ही भली... भगवान के सहारे अपनी मेहनत मज़दूरी से बच्चों को पाल लूँगी... जा तू दफा हो जा...'' अगली सुबह रोते हुए उसने जेठ के लड़के को घर से बाहर कर दिया था।

जानवर तो छेड़ने पर ही कुछ कहते हैं, उसका तो पता होता है कि भई

नुकसान पहुँचा सकता है, पर आस्तीन के साँप का क्या पता कि किस वक्त डस ले....। अतीत की बातों को याद करते हुए प्रीतम कौर का मन भर आया।

बस और नहीं

जब किसी का इंतजार करना हो तो एक-एक पल भी एक साल जैसा लगता है। होटल के कमरे में रूपा के इंतजार में सिगरेट की बलि दे रहे शाम का चेहरा रूपा को अंदर आते हुए देखकर एक दम खिल गया।

''आज क्या हो गया मेरी जान को... बड़ी देर लगा दी.... साला सारा मूड ही ऑफ कर दिया... कहाँ पर रह जाती हो...'' एकदम ही कई सवाल शाम ने उस पर दाग दिए।

''क्या बताऊँ अब नहीं घर से निकला जाता.... बच्चे बड़े हो गए हैं.... तरह-तरह के सवाल पूछते हैं.... '' रूपा ने जवाब देते हुए कहा।

''कह दिया कर कि अपनी सहेली के घर जा रही हूँ... और क्या... कहते हैं कि औरतों का भेद तो खुद भगवान भी नहीं पा सका.. बच्चे तो किस खेत की मूली हैं...'' खिसियानी हँसी हँसते हुए शाम ने रूपा को खींच कर अपनी तरफ कर लिया।

''नहीं शाम अब और नहीं, देख वह वक्त और था... जब हम जवानी के नशे में सब कुछ करते रहे और हम अपनी शादियों के बाद भी उसी तरह मिलते रहे पर अब और नही... मुझसे झूठ की जिंदगी सहन नहीं होती....।'' उसने शाम के पल्लू से अपने को छुड़ाते हुए कहा।

''ऐसा कौन सा पहाड़ टूट पड़ा कि तू फिलासफी घोटने लग पड़ी... सच्च बता कि क्या बात हुई है... तुझे मेरी कसम यदि झूठ बोले... आज मूड क्यों अपसेट है मेरी जानेमन का....।''

''तुझे बता तो दिया है अब और नही.... यदि नहीं चैन आता तो सही बात सुन.... शाम यदि हम इसी तरह करते रहे तो अपने बच्चों को खो देंगे।''

''कैसे....?'' वह एकदम बोला।

''आज सुबह मैं जब अपनी बेटी के कमरे की सफाई कर रही थी तो...?''

''तो क्या....?''

''उसके कमरे में से कंडोम का पैकट देखकर मेरे पैरों तले जमीन खिसक गई।''

इतना कहते हुए रूपा होटल के कमरे के दरवाजे को जोर से धक्का देते हुए बाहर चली गई।

जसबीर चावला

विधान

मौका पाते कार्त्तिकेय ने मुकदमा ठोंक दिया–''मेरे साथ नाइंसाफी हुई है... बल्कि, धोखाधड़ी की गई है। प्रतियोगिता के नियम और शर्तों के मुताबिक अपने मनपसंद वाहन पर हकीकत में संसार का एक पूरा चक्कर लगाना था। यह नहीं कि संसार का मॉडल बनाकर उसकी प्रदक्षिणा करना। फिर गणेश वाहन पर भी नहीं था, पैदल था। उसके वजन से घबराकर भागा चूहा मेरे साथ गवाह है। कायदे से गणेश क्वालीफाई ही नहीं करता। पिता उर्फ शंकर, माता उर्फ पार्वती ने घोर पक्षपात किया है। देवाधिदेव मैं हूँ, गणेश नहीं।'' केंद्रीय अदालत से खारिज होकर काशी नरेश की अदालत में अपील पर कारवाई शुरू हुई।

प्रतिपक्ष के वकील ने दलील दी– ''पहली बात, यह घरेलू प्रतियोगिता थी। दूसरी बात, इसके नियमानुसार राज्य की सीमाओं के भीतर इस मामले को उठाया जाना चाहिए था। शिकायत केंद्र तक क्यों पहुँचाई गई? तीसरी बात, एक महीने के अंदर नालिश दर्ज होनी चाहिए थी। विश्व–भ्रमण से लौटने के बाद यह मियाद खत्म हो चुकी है।''

जज ने निर्णय सुना दिया–''शंकर इस नगरी के संस्थापक देव हैं। उन्होंने जिसे मान्यता दी हो, वही आदिदेव है। मुकदमा तकनीकी आधार पर खारिज किया जाता है। चूहे के वाहन बने रहने की घोषणा राजकीय तौर पर की जा चुकी थी। उसे मुखबिर बनाने की साजिश के इल्ज़ाम मे कार्तिकेय को राज्य से निष्कासित किया जाता है।''

कार्त्तिकेय उबल पड़ा। गुस्से में गृह त्याग दिया। उसने नारद को पकड़ा। नारद पसीजे। बात नारायण से ब्रह्मा के कानों तक पहुँची। उन्होंने सुलह–सफाई करवाई– ''आदिदेव गणेश ही होगा। हाँ, विधान यह होगा कि पूजा के पहले कार्त्तिकेय की स्वर्ण–प्रतिमा रखी जाएगी।''

जसबीर ढंड

छमाहियाँ

उमर चौरासी वर्ष, जर्जर काया, निगाह... बस धुँधली-सी झलक दिखाई देती है। मुँह में दाँत कोई नहीं रहा। सुनाई देता है.... जब कोई बहुत ऊँची आवाज़ में बोलता है। मल-मूत्र सब बिस्तर पर ही। पता नहीं अब क्या करवाना है मुझसे? ऊपर वाला बुलाता क्यों नहीं? चार बेटे हैं मेरे, अफसर हैं, कोठियों वाले भी हैं, पर मेरा कोई घर नहीं है। हर छह माह बाद मेरा ठिकाना बदल जाता है। मुझे उठाए फिरते हैं... बसों, कारों, गाड़ियों में। सामान के नाम पर मेरे पास एक पुरानी अटैची है, एक बैग, एक थैला और एक लाठी है। बस यही मेरी पूँजी है, साथ लिये फिरती हूँ।

बेटों का पिता बीस साल पहले चला गया था। अच्छा रहा, नहीं तो वह भी मेरी तरह ही धक्के खाता फिरता। जैसे कागा गुलेल से डरता है, वैसे ही आजकल के लड़के बहुओं से डरते हैं। छोटे का तबादला कभी कहीं हो जाता है, कभी कहीं। एक शहर में भी वह किराये के मकान बदलता रहता है। मैं भी उसके साथ सूत के गोले की तरह उधड़ती फिरती हूँ। दूसरे सामान के साथ मुझे भी नए घर में ले जाकर रख देते हैं।

अर्ध-निद्रा की अवस्था में हूँ कि अचानक गर्मी लगने लगती है। थोड़ी देर बाद पता लगता है कि कोई कमरे में से गुज़रता हुआ पंखे के बटन पर उँगली रख गया। फिर बिजली के बड़े-बड़े बिल आने के बारे में ऊँची-ऊँची बोलने की समझ आती है।

भूख लगी है, आँतों में कुलबुलाहट हो रही है। दलिया पता नहीं कब बनेगा? एक तो वैसे ही आवाज़ नहीं निकलती, दूसरा सुनता भी कोई नहीं। पानी भी सिरहाने पड़ा-पड़ा गरम हो जाता है। वही पी लेती हूँ दो घूँट, गला गीला हो जाता है।

लगता है यहाँ छह महीने पूरे होने वाले हैं, या हो चुके हैं। अब कौन ले जाएगा? प्रतीक्षा कर रही हूँ। भगवान करे अगली छमाही आने से पहले ही ऊपर से बुलावा आ जाए।

छोटे–छोटे ईसा

'शिंदर, तू कल क्यों नहीं आई?'

'जी, कल मेरी माँ बहुत बीमार थी।'

'क्यों क्या हुआ तेरी माँ को?'

'जी, उसकी न बगल के नीचे की नस भरती है। कल मानसा दिखाने जाना था।'

'दिखा आए फिर?'

'नहीं जी।'

'क्यों?'

'जी, कल पैसे नहीं मिले।'

'फिर?'

'जी, आज लेकर जाएगा मेरा बापू।'

'आज कहाँ से आ गए पैसे?'

'जी, जमींदारों से लाया है उधार।'

पहली कक्षा में पढ़ रही शिंदर अपने अध्यापक से सयानों की तरह बातें करती। साँवला रंग, मगर सुंदर नैन–नक्श। अपनी उमर के बच्चों से समझदारी में दो–तीन वर्ष बड़ी। उसकी माँ ने स्वयं तंगी भोग शिंदर को स्कूल बैठाया ताकि चार अक्षर सीख जाए।

अगले दिन वह एक घंटा देर से स्कूल पहुँची।

'लेट हो गई आज?' अध्यापक ने पूछा।

'जी, माँ आज फिर ज्यादा तकलीफ में थी। रोटियाँ पका कर आई हूँ और पहले सारा घर सँभाला।'

अध्यापक उसके मुख की ओर देखता रहा, 'तू रोटियाँ पका लेती है?'

'हाँ जी! सब्जी भी बना लेती हूँ। मेरी माँ लेटी–लेटी बताती रहती है, मैं बनाती रहती हूँ।' लड़की के चेहरे से आत्मविश्वास झलक रहा था।

'आज तेरी माँ ने तुझे घर रहने को नहीं कहा?'

'न जी! आज तो माँ मेरे बापू को कह रही थी– अगर मैं मर गई तो शिंदर को पढ़ने से न हटाना।'

कक्षा में चालीस–पचास बच्चों के बावजूद अध्यापक के भीतर एक खामोशी छा गई। सुन्न–सा हुआ वह लड़की की ओर देखता रहा! कितने ही छोटे–छोटे ईसा सूली पर लटक रहे हैं।

प्रलय से पहले

छत वाला पंखा, रस्सी, पैरों तले रखने के लिए मेज–सब कुछ तैयार।

मन में बहुत बड़ा तूफान अब भी चल रहा था।

बहुत ही निराशाजनक और अपमान–जनक परिस्थितियों में घिर गई थी जिंदगी।

शुरू से ही बहुत संवेदनशील और पढ़ाई में बहुत होशियार हूँ। किताबें पढ़ने का शौक था, परन्तु घर के हालात साजगार नहीं थे।

माँ और बाप के रोज के कलेश के कारण उसका मन न लगता। तालमेल नहीं बैठता था दोनों का आपस में। ना ही माता अपना औरतों वाला तिरिया हठ त्यागती और ना ही पिता मरदानगी सोच। हालात तो यहाँ तक पहुँच गए थे कि माँ शहर में अलग रहने लगी थी। घर के दो टुकड़े हो गए थे। लोग तरह–तरह की बातें बनाने लगे थे।

उस दिन तो इन्तहा ही हो गई थी।

मेरे ही सहपाठी ने माँ के बारे में बड़ी गलत बात कही थी, मेरे दूसरे साथी के पास। जैसे बारूद से भरे टोकरे को आग लगा दी हो उसने। एक बार तो मन आया कि सिर फोड़ डालूं उस हरामखोर का। मैं उठकर खड़ा हुआ तो वह दाँत निकालता भाग खड़ा हुआ।

'अब क्या शेष रह गया है इस जलालत भरी जिंदगी में.... ? किस–किस के मुँह पर ताला लगाता रहेगा? बस! अब और नहीं...।'

स्वाभाविक ही उस समय घर में कोई नहीं था।

उस आग के सेंक में जलते हुए पता ही नहीं चला कि कब मैं मेज पर चढ़ कर पंखे के साथ रस्सी बाँधने लगा था। रस्सी की गांठ बांध कर एक दफा खींच कर देखा।

बस! अब रस्सी को गले में डालकर मेज को पैर के साथ दूर धकेल देना था और सब कुछ खत्म हो जाना था।

अचानक रैक में पड़ी हुई किताबों को देखकर न जाने मेरी नजर कैसे अटक गई। एक दम घने अंधेरे में रोशनी की किरण दिखाई दी।

'अंत कभी नहीं आता। बहुत बड़ी तबाही के पश्चात् भी कुछ न कुछ तो बच ही जाता है और उस बचे–खुचे से ही मनुष्य नए सिरे से फिर जिन्दगी शुरू करता है।...'

अपने मनपसंद लेखक के शब्द बिजली जैसे उसके दिमाग में कौंध गए।

‘गंदे नाले में जाकर गिरें सारे.... मुझे क्या! आखिर कसूर ही क्या है मेरा? मैं अपनी जिंदगी अच्छी तरह से जीऊंगा... कुछ बन के दिखलाऊंगा... इस सब को।’

अगले ही पल मैंने मेज को दूर धकलेने की बजाए गले में पड़े फंदे को दूर गिरा दिया।

जोगिन्दर सिंह 'निराला'

कहानी लेखक

उस दिन वह कहानी लेखक मेरे पास आया तो गहरी चिन्ता में डूबा हुआ था। उसके चेहरे पर अपनी ही तरह का भय और आंतक–सा छाया हुआ था।

जब मैंने इसका कारण पूछा तो वह और भी भयभीत हो गया। फिर ऐसे बोला जैसे कुएं में से बोल रहा हो, "दोस्त, मैंने अश्लील कहानियां लिखनी छोड़ दी हैं।"

यह सुनकर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। कहानी के क्षेत्र में उसकी पहचान, औरत–मर्द के जायज़–नाजायज़ कामुक सम्बन्धों के बारे में कहानियां लिखने के कारण बनी थी। पिछले दिनों ही उसका कहानी संग्रह छपा था, जिसमें कुछ एक कहानियां तो सीधी ही मर्द–मर्द या औरत–औरत के समलैंगिक सम्बन्धों या औरत–मर्द के पशुलैंगिक सम्बन्धों के बारे में थीं। उसको ऐसे वर्जित एवं अमानवीय विषयों के बारे में न लिखने के लिए मैंने प्रेरित किया तो उसने बड़े ही फख्र से कहा था, "दोस्त यही नई कहानी है, तुम तो परम्परावादी हो।"

पर आज उसकी अश्लील कहानियां लिखना छोड़ने की बात सुनकर तो मैं आश्चर्यचकित रह गया।

"क्या बात है, कोई धमकी–पत्र आ गया है जो एकदम फैसला कर लिया?" मैंने मुस्कराते हुए कहा।

"नहीं यार," उसने कांपती आवाज़ में कहा, "आज रात, जब पेशाब के लिए उठा तो देखा मेरी बेटी रीता मोमबत्ती की लाइट में मेरी कहानियां पढ़ रही थी और पसीने से भीगी हुई थी।"

जोगेन्दर पाल

मनुष्य की महानता

अपनी एक हाल की ही प्रेस कांफ्रेंस में शैतान का रूप बहुत शरीफाना था और बोलने का लहजा बहुत सभ्य।

''अभी तक मानव मेरी पढ़ाई पट्टियों का शिकार था।'' वह संवाददाताओं को बता रहा था, ''इसलिए वह अपने आप मेरे जहन्नुम की तरफ खिंचता चला आता था।'' वह अपनी थकी-हारी मुस्कुराहट से उनकी तरफ देखने के लिए रुक गया, ''लेकिन अब यह स्थिति है कि उसकी पढ़ाई पट्टियों का शिकार होके मैं ही यहां उसकी दुनिया में चला आया हूँ।''

ताल

एक शर्मीला-सा लौंडा झिझकते हुए कोठे वाली के करीब आकर बोला ''क्या आप स्टूडैन्ट कन्सेशन भी देती हैं?''

कोठे वाली उस स्टूडेंट को बड़ी ममता भरी आंखों से देखकर मुस्कराने लगी और उसके मुंह से बेइख्तियार निकल गया ''हां बेटे, क्यों नहीं?''

मशीनें

वह अभी जिन्दा था, लेकिन क्योंकि कम्प्यूटर के रिजल्ट के अनुसार वह मर चुका था, इसलिए डॉक्टर ने बेझिझक उसकी मौत के सर्टिफिकेट पर हस्ताक्षर कर दिये।

''मगर मैं तो अभी जिंदा हूँ।''

''इस पर बाद में गौर किया जाएगा कि मौत के बावजूद तुम्हारी सांस क्यों जारी है, शायद तुम्हारी दवा में कुछ गड़बड़ हो गई है।''

पेशेवर

मैंने डरते-डरते सुसज्जित अजनबी से पूछा, ''आप क्या काम करते हैं?''

''हुकूमत।'' उसने मुस्कराते हुए जवाब दिया।

मेरी समझ में कुछ न आया तो अपनी मुस्कराहट को गहरा करके उसने जोड़ा–''क्या बताऊँ, कितना मुश्किल काम है ? इतने पैसे और पर्क्स न मिलते हों तो फौरन छोड़ दूँ।''

तरसेम गुजराल

पहाड़ों पर चढ़ने वाली

दिनेश साहब का कैबिन कुछ इस तरह था कि कांच की दीवारें चारों तरफ ज्यादा-से-ज्यादा कर्मचारियों पर नज़र रख सकें।

पिछले कुछ दिनों से पार्वती माई पर उनकी खास नज़र थी। पार्वती पिछले दस सालों से वहां काम कर रही थी। पहले चरखे पर ऊन अटेरती थी, बाद में उसे रफू के काम पर लगा दिया गया। पर उसकी सेहत लगातार बिगड़ती जाती थी। मशहूर था कि साहब के दादा ने अपने बीमार घोड़े को गोली मरवा दी थी। पर उस दादा का पोता होने पर भी वह इतना निर्मोही व पत्थर दिल नहीं था।

पार्वती को लगातार बीमार-सी व सुस्त देखकर उसने उसकी तनख्वाह कम करवा दी, पर उसने नौकरी पर आना नहीं छोड़ा। दो-तीन महीने बाद उन्होंने फिर उसकी तनख्वाह कम कर दी। पार्वती माई ने कोई शिकायत न की। बस, गुज़रते हुए पहले जो हाथ जोड़कर नमस्कार करती थी वह बन्द कर दी।

पिछले कई दिनों से दिनेश साहब ने नोट किया कि पार्वती माई का बेटा रोज सुबह रिक्शा से उसे फाटक तक छोड़ जाता है और शाम को रिक्शे पर ले जाता है।

अगले दिन उन्होंने उसको टोका, ''तुम्हें पता है तुम्हारी मां बीमार है?''

''हां साहब, उन्हें टी. बी. है।''

''तुम इलाज क्यों नहीं करवाते? यह उम्र उसके काम करने की है?''

''मैं रोक भी कैसे सकता हूं साहब, मेरी तीन जवान बेटियां हैं। पेट का नरक भरने से ही फुर्सत नहीं। हाथ पीले करने के लिए कहां से लाऊं। माई ने तो मेरा घर कोठा बनने से रोका हुआ है।''

दिनेश साहब की नज़र पार्वती माई पर पड़ी। गिरते कदमों से भी वह भार उठाती, पहाड़ पर चढ़ने वाली औरत से कम नहीं लग रही थी।

तृपत भट्टी

अच्छा बीजी

अब वह अमरीका की नागरिक है। पचासेक साल की कड़क पंजाबन। बच्चे उड़न-छू हो गए थे - ब्याहे गए। कोई कहीं कोई कहीं। अपनी-अपनी 'जॉब' पर। वह घर में अकेली। बच्चों के कहने पर उसने किराएदार के लिए ऐड दे दी। किराएदार पंजाबी या भारतीय हो।

एक तीसेक साल का जवान आया। पंजाबी था। वह पेइंग गैस्ट के तौर पर रहने लगा। खान-पान, रहन-सहन, पानी-बिजली सब का पांच सौ डॉलर। आमदनी की आमदनी, रौनक की रौनक।

किराएदार कभी एक संत बाबे के साथ (लाखों देकर) चेला बनकर अमरीका आया था। कई साल हो गए, अभी तक उसे ग्रीन कार्ड नहीं मिला था। उसका कोई भविष्य नहीं था।

एक दिन लड़के ने विनती की... बीजी, अगर आप मेरे साथ कोर्ट-मैरिज कर लो तो मैं यहां पक्का हो जाऊंगा। मेरी घरवाली भी आ जाएगी। जितना पैसा आप कहें, मैं देने को तैयार हूँ।

बीजी ने कहा, ''तुझे ग्रीन कार्ड मिलने के बाद भी तेरी घरवाली को आने में छ:-सात साल लग जाएंगे।

''मुझे मालूम है बीजी।''

''तो फिर, एक शर्त पर मैं तेरे साथ कोर्ट मैरिज करने को तैयार हूँ।''

''बताओ जी।''

''जितने साल तेरी घरवाली नहीं आती, उतने तक तू मुझे अपनी घरवाली समझेगा।''

''और जब वो आ गई ?''

''तब मैं उसकी सास बन जाऊँगी।''

''अच्छा बीजी।''

दर्शन जोगा

जालों वाली छत

आज फिर ससुर और बहू दोनों दफ्तर पहुँचे। बुजुर्ग बेचारा पहाड़–सी मार का मारा, बड़ी उम्र और कमज़ोर सेहत के कारण दम लेने के लिए कमरे के बाहर पड़े बैंच की ओर हुआ। साँसो–साँस हुए ससुर की दशा देख बहू ने कहा, ''आप बैठ जाओ बापूजी, मैं पता करती हूँ।''

कमरे में दाखिल होते ही उसकी निगाह पहले की तरह ही पड़ी तीन–चार मेज़ों पर गई। जिस मेज़ पर से वे कई बार आकर मुड़ते रहे थे, उस पर आज सूखे–से बाबू की जगह भरे शरीर वाली एक लड़की गर्दन झुकाए बैठी कागज़ों को उलट–पलट रही थी। लड़की को देखकर वह हौसले में हो गई।

''सतश्री अकाल जी!'' उसने वहाँ बैठे सभी का साझा सत्कार किया। एक–दो ने तो टेढ़ी–सी नज़र से उसकी ओर देखा, पर जवाब किसी ने नहीं दिया। उसी मेज़ के पास जब वह पहुँची तो क्लर्क लड़की ने पूछा, ''हाँ बताओ?''

''बहनजी, मेरा घरवाला सरकारी मुलाजम था। पिछले दिनों सड़क पर जाते को कोई चीज़ फेंट मार गई। उसके भोग की रस्म पर महकमे वाले कहते थे, जो पैसे–पूसे की मदद सरकार से मिलनी है, वह भी मिलेगी, साथ में उसकी जगह नौकरी भी मिलेगी। पर उस पर निर्भर उसके वारिसों का सर्टीफिकट लाकर दो। पटवारी से लिखाके कागज यहां भेजे हुए हैं जी, अगर हो गए हों तो देख लो जी।''

''क्या नाम है मृतक का?'' क्लर्क लड़की ने संक्षेप और रूखी भाषा में पूछा।

''जी, सुखदेव सिंह।''

कुछ कागज़ों को इधर–उधर करते हुए व एक रजिस्टर को खोल लड़की बोली, ''कर्मजीत कौर विधवा सुखदेव सिंह?''

''जी हाँ, जी हाँ यही है।'' वह जल्दी से बोली जैसे सब कुछ मिल गया हो।

''साहब के पास भीतर भेजा है केस।''

''पास करके जी ?'' उसी उत्सुकता से कर्मजीत ने फिर पूछा।

''न....अ.... अभी तो अफसर के पास भेजा है, क्या पता वह उस पर क्या लिख कर भेजेगा, फिर उसी तरह कारवाई होगी।''

''बहन जी, अंदर जाकर आप करवा दो।''

''अंदर कौन-सा तुम्हारे अकेली के कागज़ हैं, ढेर लगा पड़ा है। और ऐसे एक-एक कागज़ के पीछे फिरें तो शाम तक पागल हो जाएँगे।''

''देख लो जी, हम भगवान के मारों को तो आपका ही आसरा है।'' विधवा ने काँपते स्वर में विलाप-सी मिन्नत की।

''तेरी बात सुन ली मैंने, हमारे पास तो ऐसे ही केस आते हैं।''

औरत मन-मन भारी पाँवों को मुश्किल से उठाती, अपने आपको सँभालती, दीवार से पीठ लगाए बैंच पर बैठे बुजुर्ग ससुर के पास जा खड़ी हुई।

''क्या बना बेटी ?'' उसे देखते ही ससुर बोला।

''बापूजी, अपना भाग्य इतना ही अच्छा होता तो वह क्यों जाता सिखर दोपहर !''

बुजुर्ग को उठने के लिए कह, धुँधली आँखों से दफ्तर की छत के नीचे-लगे जालों की ओर देखती, वह धीरे-धीरे बरामदे से बाहर की ओर चल पड़ी।

दर्शन मितवा

कुत्ते का खाना

आयकर अधिकारी को तीन–चार मातहतों के संग अपनी दुकान की ओर आते देख दुकानदार ने अपनी ऐनक ठीक की और तेजी से गद्दी से उठकर खड़ा हो गया। हाथ जोड़कर उसने नमस्ते की और उनको बिठाने के लिए अपनी धोती के पल्लू से कुर्सियां साफ करने लगा। जब तक वे लोग कुर्सियों पर सजे, तब तक खाने के लिए काजू और पीने के लिए फलों का जूस आ गया। खाने–पीने के उपरांत, आयकर अधिकारी ने अपनी मूंछों पर हाथ फेरते हुए दुकानदार से हिसाब–किताब की बहियां लीं और औपचारिकतावश उनको उलटने–पुलटने लगा। एक पन्ने पर उसकी नज़र अटक गई। वह हैरान भी हुआ और मुस्कराया भी। उसने वह पन्ना अपने मातहतों को दिखाया। वे भी मुस्कराए बिना न रह सके, ''कैसे–कैसे लोग हैं जो आयकर बचाने के लिए कुत्ते को डाली गई रोटी का खर्च भी किताबों में डाल देते हैं!''

खुले हुए पन्ने पर खर्च वाली लाइन इस प्रकार लिखी हुई थी– 'तारीख 17–2–89। कुत्ते का खाना–पचास रुपये।'

खर्च की लाइन पढ़कर दुकानदार भी ही–ही करता हुआ उन सबके साथ हँसने लगा।

थोड़ी देर बाद, वे सब चले गए। दुकानदार ने अपने हिसाब–किताब वाली बही खोली। काजू से लेकर जूस का सारा खर्च जोड़ा और किताब में उसने एक नयी लाइन लिखी– तरीख 29–8–89। कुत्तों का खाना–एक सौ पचास रुपये।

जसबीर बेदर्द लंगेरी

लाल बूटियों वाला सूट

पति की मौत के भोग के समय गाँव के सभी लोगों ने जसप्रीत के सिर पर हमदर्दी भरा हाथ रखा और इसे 'भगवान की मर्जी' कह ढाढ़स बँधाया। उसे सभी लोग अपने बाजुओं जैसे लगे। उनके साहस से ही उसने अपनी बिखरी हुई जिंदगी का छोर फिर से पकड़ लिया।

कुछ समय बाद जसप्रीत को पति की जगह दफ्तर में क्लर्क की नौकरी मिल गई। संयोग से दफ्तर की अधीक्षक भी एक सुलझी हुई औरत थी।

''जसप्रीत, जिंदगी में कई घटनाएँ घटती हैं। कुछ तो जल्दी भूल जाती हैं, कुछ देर से... और कुछ बहुत भुलाने से भी नहीं भूलतीं। पर इसके बावजूद, जिंदगी और रंगों का रिश्ता बहुत गहरा होता है। रंगों के बिना जिंदगी का कोई अर्थ नहीं। मेरा भाव यह है कि तूने जिंदगी को जो बेरंग-सा बना रखा है, वह ठीक नहीं। अगर तू बुरा न माने तो ये सफेद-से कपड़े पहन कर मत आया कर। अभी तुम्हारी उम्र ही क्या है!'' एक दिन लंच के समय अधीक्षक ने जसबीर को प्यार से कहा।

''बुरा क्या मानना है, मैडम जी! दिल तो मेरा भी वही कहता है, जो आपने कहा। पर मैं डरती हूँ कि गाँव वाले क्या कहेंगे। विधवा होना औरत के लिए शाप है।'' जसप्रीत की आँखें भर आईं।

''लोगों की परवाह नहीं करते। लोगों की खातिर अपनी बची हुई खुशियों की बलि मत दे। सम्मान से जीना सीख।'' अधीक्षक ने जसप्रीत के कंधे पर हाथ रखते हुए कहा।

फिर वे कोसी-कोसी धूप में से उठकर अपनी-अपनी सीटों पर चली गईं।

जसप्रीत देर रात तक सोचती रही। सुबह बच्चों को स्कूल भेजने के बाद वह विशेष रूप से तैयार हुई। उसने संदूक में दबा पड़ा पति का लाया हुआ लाल बूटियों वाला सूट पहना। गली में लोगों की तिरछी निगाहों की परवाह न करते हुए, वह ड्यूटी पर जाने के लिए बस-स्टैंड की ओर चल दी।

दर्शन सिंह बरेटा

प्रतिबिंब

मनजीत चूल्हे चौके का काम निपटा कर दोपहर के खाने के लिए गुबारे की फलियों को छांटने लगी। फली ज्यादा पक्की होने के कारण छँटाई ज्यादा करनी पड़ रही थी। छांटी करते हुए उसका ध्यान अतीत से जा जुड़ा।

मनजीत की दोनों बहनें और एक भाई सभी बढ़िया पढ़ लिखकर अच्छी नौकरियों पर लग गए थे।

हरदीप मैडम ने एक दिन स्कूल का काम न करने की वजह से उसकी पिटाई की। एकाएक हाथ पीछे करने से डंडा उसकी उंगली पर क्या लगा कि उंगली उतर गई।

बस फिर क्या था, वह कभी स्कूल न गई। पढ़ाई बीच में रह गई।

मैडम ने कई दिन संदेशे भिजवाए, पर अनपढ़ माँ ने पैरों पर पानी नहीं पड़ने दिया। कहती 'बेटी तो नहीं मरवानी इन डायनों से। छोड़ बेटा ऐसी पढ़ाई को।'

आज कभी मुझे हरदीप मैडम पर गुस्सा आता है तो कभी अपनी माँ की ना-समझी पर।

मेरी पढ़ाई छुड़ाने वाली वे दोनों ही हैं। मैं तो बच्ची थी उन्होंने मेरे भविष्य के बारे में नहीं सोचा। वे तो बड़ी थीं। कुछ तो सोचतीं।

कुछ पलों के लिए मुझे लगा मैडम हरदीप जिम्मेवार है। पर मैडम ने तो काफी संदेश दिए। मेरे भाई और बहनों को अलग से कहा। बच्चा यदि काम न करे मैडम तो डाँटेगी ही।

नहीं नहीं मैडम की कोई गलती नहीं। मेरी माँ ने ही मुझे जाने नहीं दिया। वह ही इसके लिए दोषी है। माँ का ही दोष है।

पर माँ ने बाकी बच्चे तो पढ़ाए ही हैं। फिर मेरे साथ ही ऐसा क्यों करेंगी?

नहीं नहीं सारा दोष तो अपना ही है। स्कूल चली जाती, बैग उठाकर, क्या कोई जबरदस्ती रोकता।

अब तो भई अपनी की हुई गलतियाँ आप को ही भुगतनी पड़ेंगी। चल छोड़। क्यों दु:खी होती है। अब तो जो बनना था, बन गया। ज्यादा बीत गई,

थोड़ी बाकी है।

टर्न–टर्न...बजती घंटी ने उसकी तंद्रा को तोड़ा। बाहर देखा तो रिंदी बेटी को स्कूल ले जाने के लिए रिक्शा तैयार था।

''मम्मा मम्मा मुझे नहीं जाना स्कूल, कल मेरी टीचर ने मुझे बिना किसी बात के पनिश किया। मेरे थप्पड़ लगाए। मैं नहीं जाती स्कूल में आज,'' रोते हुए रिंपी ने स्कूल न जाने की गुहार लगाई।

''न मेरी लाडली बिटिया, ऐसे नहीं कहते, मैं किसी दिन तुम्हारी टीचर के पास आऊँगी और साथ में आज ही मोबाइल पर बात करूँगी....बेटा टीचर की डाँट का कभी गुस्सा नहीं करना चाहिए। गुरु हैं तुम्हारे। तुम्हें पढ़ा लिखा कर बड़ा अफसर बनाएंगे। बेटा मैंने नहीं तुम्हें पीछे रहने देना,'' कहते हुए मनजीत ने अपनी लाडली को रिक्शे पर बिठाया।

रिक्शा लगातार दूर जा रहा था।

मनजीत को अपनी बेटी को बाय–बाय कहते हुए ऐसा आभास हो रहा था कि जैसे वह खुद रिक्शे में बैठकर स्कूल पढ़ने जा रही हो।

बगावत

प्रदेश की सरकार बनाने के लिए आज मतदान होना था। हर तरफ जोर लगा हुआ था।

''भगवान का नाम लो, पहले मतदान आपने परिवार के सभी सदस्यों ने ही करना है। तैयार हो जाओ सारे।''

मंत्री रोआब में सुरजीत के पिता ने हुक्म दिया। सुरजीत को रात में नींद कम ही आई। सुबह उठते ही अखबार की सुरखियों पर नज़र मारते हुए उसका मन अतीत में जा जुड़ा।

उस का दादा एक बार विधायक चुना गया था। उसके पिता ने दो दफा एम.एल.ए. बन कर और एक दफा मिनिस्टर बनकर लोगों की सेवा करते हुए सत्ता सुख भोगा। पीढ़ी दर पीढ़ी सत्ता प्राप्ति की बदौलत परिवार के नाम और धन में वृद्धि होना तो परिस्थितियों के अनुसार स्वाभाविक ही था। जरूरत के अनुसार प्रत्येक छोटी बड़ी वस्तु उनके घर में मौजूद थी।

आज तीसरी दफा फिर उसके पिता की कुर्सी के निर्णय का दिन था।

नानी मां की संगत में रहते हुए सुरजीत को धार्मिक प्रवचन सुनने और टीवी पर समाज और धर्म सुधार के आते इक्का–दुक्का प्रोग्राम देखने ही अच्छे लगते।

सुबह की प्रार्थना में प्रिंसीपल सक्सेना द्वारा भांति-भांति के विषयों को लेकर होती तकरीरों ने उसकी सुधार की प्रवृत्ति की ओर परिपक्वता की पान चढ़ाई।

धीरे-धीरे उसकी प्रगतिशील सोच उभरती गई।

'देश का भविष्य नवयुवकों की सीख पर निर्भर करता है। भ्रष्ट नेता चुनना देश के लिए गद्दारी है।'

प्रिंसीपल सक्सेना के शब्द उसके भीतर ऊधम मचा रहे थे। "जो भी करना पड़े, करो... जीत हमारी होनी चाहिए। पैसे भी जितनी जरूरत हो, ले जाओ....बांट दो....पर मतदान हक में होना चाहिए। नशेड़ी को दारू (शराब) से नहला दो पर मतदान....कुछ भी करो-इस बार फिर से मिनिस्टर बनना है। फिर तुम सभी जैसे मर्जी...।"

रात्रि के समय उसके पिता के बोल सुरजीत के भीतर खलल डाल रहे थे।

'अरे पढ़ाकू इस बार तुम्हें भी वोट डालने जाना है.. और तुम्हारे साथियों की भी...। '

'नहीं नहीं, मैंने नहीं देश के साथ गद्दारी करनी, मैं तुम्हें वोट नहीं डालता... नहीं...नहीं।'

'क्या हुआ बेटा किसके साथ बातें कर रहा है। जा बाथरूम में जाकर नहा ले। तुम्हारा पानी भर गया है।' माता की आवाज से उसका ध्यान टूटा।

अपने पिता को वोट न डालने के बुलन्द इरादे के साथ वह नहाने के लिए चल दिया।

अनुवादः ज. रा. कु.

जागृति

धार्मिक संस्थाओं का उचित प्रबंध करने वाली कमेटी का चुनाव सिर पर आ चुका था। कई अपनी उम्मीदवारी सुनिश्चित करने के लिए बड़े नेताओं के पास पहुँच रहे थे।

प्रत्येक क्षेत्र के लिए योग्य उम्मीदवारों के नामों पर सहमति बनाने के लिए बैठक शुरु हो चुकी थी। दिग्गज नेता बैठक में शामिल सदस्यों के विचार ध्यान से सुन रहे थे।

"इस बार विपक्ष पहले के मुकाबले अधिक शक्तिशाली लग रहा है। मुकाबला बराबरी का रहेगा। फैसला ध्यान से करना।" एक बड़ी उम्र के पुराने कार्यकर्ता ने अपने अनुभव के आधार पर कहा।

''बिल्कुल ठीक। राजनीति में निपुण, दो पैसे खर्चने वाला और ज़रूरत पड़ने पर दो-दो हाथ करने वाला आदमी ही चुनाव जीत सकता है। चुनाव के माहौल का क्या पता... !'' राजनीतिक पैंतरेबाज़ कार्यकर्ता ने अपना तीर छोड़ा।

एक तेज़तर्रार उभरते नेता ने सिरे की बात करते हुए कहा, ''केवल शरीफी-शरूफी नहीं चलती अब चुनाव में। चुनाव चाहे कोई भी हो, अब टेढ़े-मेढ़े ढंग से ही जीते जाते हैं। यूँ ही कहीं केवल धार्मिक प्रवृत्ति देखकर....''

बैठक में खुसर-फुसर होने लगी। तीन-चार बड़ी उम्र के व्यक्ति मीटिंग में से उठकर जाने लगे।

''क्या बात, ऐसे कैसे बीच में ही छोड़ कर जा रहे हो... कोई बात तो बताओ?'' दिग्गज नेता को चुप्पी तोड़नी पड़ी।

''बात तो तब बताएँ अगर कोई मुद्दे की बात हुई हो। बैठक धार्मिक-कमेटी के चुनाव की है या फिर.... ?''

''पैसा, नशा, टेढ़-मेढ़, लड़ाई-झगड़ा, राजनीतिक पैंतरेबाज़ी... अब और क्या धार्मिक-कमेटी के चुनाव में शामिल करोगे?'' कहते हुए बुजुर्ग की साँस उखड़ गई।

''आ भई चलें। परमात्मा इन्हें सुमति बख़्शे। धार्मिक प्रवृत्ति वालों की अब यहाँ कोई ज़रूरत नहीं रह गई।'' कहते हुए वे मीटिंग से चले गए।

दलीपसिंह वासन

रिश्ते का नामकरण

उजाड़ से रेलवे स्टेशन पर अकेली बैठी लड़की को मैंने पूछा तो उसने बताया कि वह अध्यापिका बनकर आई है। रात को स्टेशन पर ही रहेगी। प्रातः वहीं से ड्यूटी पर उपस्थित होगी। मैं गाँव में अध्यापक लगा हुआ था। पहले घट चुकी एक-दो घटनाओं के बारे में मैंने उसे जानकारी दी।

''आपका रात को यहाँ ठहरना उचित नहीं है। आप मेरे साथ चलें, मैं किसी के घर में आपके ठहरने का प्रबंध कर देता हूँ।''

जब हम गाँव में से गुज़र रहे थे तो मैंने इशारा कर बताया, ''मैं इस चौबारे में रहता हूँ।''

अटैची ज़मीन पर रख वह बोली, ''थोड़ी देर आपके कमरे में ही ठहर जाते हैं। मैं हाथ-मुँह धोकर कपड़े बदल लूँगी।''

बिना किसी वार्त्तालाप के हम दोनों कमरे में आ गए।

''आपके साथ और कौन रहता है?''

''मैं अकेला ही रहता हूँ।''

''बिस्तर तो दो लगे हुए हैं?''

''कभी-कभी मेरी माँ आ जाती हैं।''

गुसलख़ाने में जाकर उसने मुँह-हाथ धोए। वस्त्र बदले। इस दौरान मैं दो कप चाय बना लाया।

''आपने रसोई भी रखी हुई है?''

''यहाँ कौन सा होटल है!''

''फिर तो खाना भी यहीं खाऊँगी।''

बातों-बातों में रात बहुत गुज़र गई थी और वह माँ वाले बिस्तर पर लेट भी गई थी।

मैं सोने का बहुत प्रयास कर रहा था, लेकिन नींद नहीं आ रही थी। मैं कई बार उठकर चारपाई तक गया था। उस पर हैरान था। मुझमें मर्द जाग रहा था, परंतु उसमें बसी औरत गहरी नींद सोई थी।

मैं सीढ़ियाँ चढ़कर छत पर जाकर टहलने लग गया। कुछ देर बाद वह भी

छत पर आ गई चुपचाप टहलने लगी।

''जाओ सो जाओ, सुबह आपने ड्यूटी पर हाज़िरी देनी है।'' मैंने कहा।

''आप सोए नहीं?''

''मैं बहुत देर तक सोया रहा हूँ।''

''झूठ।''

''...''

वह बिल्कुल मेरे सामने आ खड़ी हुई, ''अगर मैं आपकी छोटी बहन होती तो आपको उनींदे नहीं रहना था।''

''नहीं-नहीं, ऐसी कोई बात नहीं।'' और मैंने उसके सिर पर हाथ फेर दिया।

धर्मपाल साहिल

आखिर औरत ही

शाम नर्सिंग होम से लौटते ही वह एक अजीब-सी कशमकश में फँस गया था। तीन लड़कियों के बाद बेटा होने की टैस्ट-रिपोर्ट ने उसे खुशी से भर दिया था, लेकिन साथ ही डाक्टर द्वारा दी गयी चेतावनी-''बड़े आप्रेशन के बिना डिलीवरी सम्भव नहीं है। जच्चा बहुत कमजोर है, इसलिए आप्रेशन के दौरान माँ की जान को खतरा है। तुम्हें माँ-बेटे में से एक को चुनना होगा।'' सुनते ही उसकी सारी खुशी काफूर हो गयी थी। आधी रात बीतने पर भी वह असमंजस में फँसा करवटें बदलता सोच रहा था, कि डाक्टर ने ठीक ही तो कहा है, इस टैस्ट से पहले भी नेगेटिव रिपोर्ट के कारण लगातार दो अबॉर्शन करवाने से चलता-फिरता पिंजर ही नज़र आने लगी थी उसकी पत्नी।

डिलीवरी के समय किसी अनहोनी की कल्पना मात्र से ही वह भीतर तक काँप गया था। कभी उस पर पुत्र-प्रेम हावी हो जाता तो कभी पत्नी-प्रेम, और कभी तीन लड़कियों के कारण नित्यप्रति का क्लेश। खानदान चलाने के लिए दूसरे विवाह का दबाव। इसी बेचैनी में उसने पुनः करवट बदली तो उसकी करवटों के कारण निकट पड़ी जागती पत्नी ने उसकी मानसिक अवस्था को भाँपते हुए पूछा। ''हाँ, तू ही बता, मैं क्या करूँ?'' वह दुखती रग पर दबते गुब्बारे की भाँति फट पड़ा।

''खामखाह परेशान न हों। बेटे कौन-सा रोज पैदा होते हैं, पता नहीं कैसे भगवान मेहरबान हुआ है हमारे पर। आप मेरी चिन्ता छोड़ो। मेरे जैसी तुम्हें बहुत मिल जाएंगी।'' पत्नी ने अन्तिम वाक्य व्यंग्यमय स्वर में कहा।

''तुझे पता है, तू क्या कह रही है?'' वह गम्भीर हो गया।

''हाँ, अच्छी तरह जानती हूँ, अगर मेरी कोख में लड़के की जगह लड़की होती तो भी हमेशा की तरह एक औरत को ही बलि चढ़ना पड़ता न।'' कहते हुए पत्नी का गला रुँध गया।

व्यापार

मैं अपना चैकअप करवाने के लिए मैटरनिटी होम गयी तो कई महीनों के बाद अचानक वहाँ अपनी कुँवारी सहेली मीनो को जच्चा-बच्चा वार्ड में दाखिल देखकर हैरानी से पूछा, ''मीना, तू यहाँ? कहीं कोई गड़बड़ तो नहीं हो गयी तेरे साथ?''

''नहीं, ऐसी तो कोई बात नहीं। बस मैंने खुद ही अपनी कोख किराए पर दे दी थी।'' उसने चेहरे पर मुस्कराहट लाते हुए कहा।

''ऐसा क्यों किया तूने?'' मैंने हैरानी से पूछा।

''तुझे तो पता ही है कि मेरा एक सपना था कि मेरी आलीशान कोठी हो। अपनी कार हो, ऐशोआराम की हरेक चीज हो।''

''फिर तूने यह सब कैसे किया?''

''मैंने अखबार में एक इश्तिहार पढ़ा। पार्टी से मुलाकात की। एग्रीमेंट हुआ, नौ महीने के लिए कोख का किराया एक लाख रुपये प्रति माह के हिसाब से। बच्चा होने तक मेरी सेहत निगरानी का खर्च उनका।''

''इसलिए तूने गैर मर्द के साथ...।''

''नहीं-नहीं-डॉक्टरों ने फर्टिलाइज्ड एग आप्रेशन द्वारा मेरी कोख में रख दिया। समय-समय पर मेरा चैकअप कराते रहे। आज पूरी पेमेण्ट करके बच्चा ले गये हैं।''

''ना, अपनी कोख से जन्मे बच्चे के लिए तेरी ममता नहीं तड़पी, तुझे जरा भी दु:ख नहीं हुआ?''

मेरी बात को हँसी में उड़ाते हुए मीनो ने कहा, ''बस इतना-सा दुख हुआ जितना एक किराएदार द्वारा मकान छोड़ देने के समय होता है।''

निरंजन बोहा

नये क्षितिज

देवेन्द्र साथी के साथ निर्मल देवी के विवाह की चर्चा कई दिन चलती रही। उसके आसपास के समाज और नज़दीकी रिश्तेदारों के लिए यह विवाह एक गम्भीर चुनौती की तरह था। पिछले दस वर्षों से विधवा का जीवन व्यतीत कर रही निर्मला बारह साल की बेटी की मां भी थी। अपनी उम्र के चालीस वर्ष पार कर, उसने अपने ही हम-उम्र, एक लेखक व यूनियन कार्यकर्ता से अन्तर्जातीय विवाह करवाकर निश्चय ही उस लक्ष्मण रेखा को पार कर लिया था, जो उसकी परवरिश के माहौल ने खींची थी।

इस विवाह की खुशी में उसने अपने स्कूल-स्टाफ को चाय की पार्टी भी दी थी। एक ही स्कूल में पढ़ाते होने के कारण व आपसी मेल-मिलाप का सहारा लेकर, मैंने इस विवाह के बारे में अपनी प्रतिक्रिया दी-''बहन जी, मीना की उम्र अभी बारह साल है, दो-चार साल में उसका विवाह करना होगा। आपका इस उम्र में करवाया अन्तर्जातीय विवाह उसके लिए योग्य वर ढूंढने में कितनी रुकावट बनेगा, क्या आपने इस बारे में भी सोचा है?''

''क्या इतनी बड़ी दुनिया में एक ही देविन्दर साथी है?'' गम्भीर आवाज़ में बोलते, उसने निगाह ऊपर उठाई जैसे किसी नये क्षितिज की तरफ इशारा कर रही हो।

अपनी मिट्टी

महानगर के सरकारी दफ्तर में एक क्लर्क से दूसरे क्लर्क की सीट तक चक्कर काटता, सरपंच जागीर सिंह सुबह से परेशान था। धँसी-सी नाक वाला डीलिंग क्लर्क तो उस पर टूट ही पड़ा था, 'बाबा! तुझे कह तो दिया कि दो दिन बाद आना, फिर भी तू पीछा नहीं छोड़ता।'

गाँव में सरदार कहलाने वाला सरपंच उसके सामने बेचारा-सा बनकर रह गया था। भीड़भाड़ वाले इस महानगर में अजनबी लोगों के बीच घिरे हुए, उसे महसूस हो रहा था जैसे उसका अपना कोई अस्तित्व ही न हो।

ज्यादातर वह अपनी पंचायत के सचिव या अपने कॉलेज में पढ़ रहे बेटे को ही सरकारी दफ्तर के काम के लिए भेजता था, पर आज काम के लिए उसे आप ही महानगर आना पड़ा था। इस शहर का प्रत्येक व्यक्ति उसे भाग-दौड़ में दिखाई दिया। उससे बात करने के लिए किसी के पास फुर्सत ही न थी। भीड़ में घिरे हुए भी स्वयं को अकेला महसूस करने का इतना तीव्र अहसास उसे पहले कभी नहीं हुआ था। इसलिए वह जल्दी से गाँव लौट कर अपनी खोई पहचान हासिल करना चाहता था।

''बस-स्टैंड को किस नंबर की बस जाएगी?'' उसने सड़क किनारे खड़े एक बाबू से पूछा।

''आगे से पता करो।'' रूखा-सा जवाब पाकर, पहले से ही परेशान सरपंच और बेचैन हो उठा। आगे जाकर पूछने की हिम्मत उसमें न रही। बस की प्रतीक्षा करने की बजाय उसने रिक्शावाले को आवाज दी और बिना पैसे पूछे ही रिक्शा में बैठ गया। उसने सोचा झगड़ा करने की बजाय, रिक्शावाला जितने पैसे माँगेगा, वह दे देगा। अपने आप में खोये को पता ही न चला कि कब बस स्टैंड आ गया।

''हाँ भई! कितने पैसे?'' उसने अपना बटुआ खोलते हुए पूछा।

''पैसे रहने दो सरदार जी।'' रिक्शावाले ने उसका बैग उतारते हुए कहा। पराए शहर में इतने अपनत्व-भरे शब्दों की तो उसे बिल्कुल उम्मीद नहीं थी। वह आश्चर्यचकित रह गया। उसने हैरानी से रिक्शावाले की तरफ देखा। वह तो उसके गाँव का लड़का प्रीतू था जो पाँच साल पहले घर से भाग गया था।

''अरे प्रीतू तू!'' सरपंच ने उसे बाहों में भर लिया। प्रीतू हैरान था कि गाँव में रूखे स्वभाव वाला सरदार यहाँ आकर इतना नर्म कैसे हो गया।

रिश्तों के अर्थ

खद्दर के मैले कपड़ों में लिपटे अपने बापू की पगड़ी मे से बाहर झाँकती लटों की ओर देखते हुए उसकी निगाहें नीची हो गईं।

''ये गाँव में मेरे बापू का सीरी(बटाईदार) है।'' उसने दफ्तर के सहयोगियों से अपने बापू की जान-पहचान कराई। बूढ़ा बाप कुछ नहीं बोला। उसकी आँखें गुस्से से लाल हो आयीं। जिस बेटे को पढ़ाने के लिए उसका बाल-बाल कर्ज़ में डूब गया है, वह उसे बाप मानने से इन्कार कर रहा है!

''बापू, तू कुछ तो मेरी पोजीशन का ख़याल करता। अगर ढंग के कपड़े तेरे पास नहीं हैं तो दफ्तर आने की क्या जरूरत थी?'' बेटे ने बापू को एक

ओर ले जाते हुए झिड़का।

‘‘हूँ... तेरी पोजीशन! नौकरी लगने के बाद तू अपनी और अपनी बीवी की पोजीशन बनाने में ही लगा रहा। कभी उस कर्जे के बारे में भी सोचा है, जो तुझे पढ़ाने की खातिर मैंने अपने सर पर चढ़ाया है.... ?’’ बूढ़े बाप की आवाज में तल्खी आ गई।

‘‘शहर में रहने के लिए पोजीशन जरूरी है। तुम गाँववालों को क्या पता? जब मेरा अपना ही गुजारा नहीं होता तो तुमको कहाँ से भेजूं?’’ बेटा अपनी असलियत पर आ गया।

‘‘तो ठीक है। अगर तुझे अपनी पोजीशन का इतना ख़याल है तो बंदा बनकर हर महीने 500 रुपये मुझे दे दिया कर, नहीं तो मैं तेरे दफ्तर में चीख-चीख कर कहूँगा कि मैं इसका बाप हूँ और इसकी खातिर ही मैंने अपनी यह हालत बनाई है।’’

शीशा

सुबह से ही मैं अपनी नई कहानी लिखने की कोशिश कर रहा हूं। कहानी के पात्रों की उलझी डोर को सुलझाते सुलझाते मैं आप ही उलझ कर रह गया। कहानी का प्रभावशाली अंत मुझे सूझ नहीं रहा। दिन के बारह बजने को हैं, पर मेरी तरफ से लिख-लिख कर कागज फाड़ने का काम जारी है।

‘‘आप ने अभी तक नाशता भी नहीं किया है और मैंने सरला के यहाँ उसकी बेटी का शगुन देने भी जाना है,’’ श्रीमती ने डरते-डरते मेरे कमरे का दरवाजा खोला।

‘‘कितनी दफा बोला है कि जब मैं लिखता हूं...तो मुझे परेशान न किया कर....पर तुम पर कोई असर नहीं,’’ मैंने गुस्से से पत्नी को कहा।

वह कुछ न बोल सकी, पर उसके चेहरे पर मायूसी का भाव स्पष्ट दिखाई पड़ रहा है। मैं फिर कहानी के प्लॉट में नया मोड़ देने के लिए किसी नए नुकते के बारे सोचने लगा।

‘‘पापा! आज छुट्टी है आपने हमें रोज़ गार्डन घुमाने का वायदा किया था,’’ मेरी पांच वर्षीय बेटी जसमीत ने पीछे से मेरे गले में बाजू डालते हुए कहा।

कहानी में अपनी मुद्रा दोबारा भंग होते देख मैंने बेटी को धक्का दिया और जोर से बोला, ‘‘इन को संभाल कर रखा कर....सारे परिवार का दिमाग काम ही नहीं करता।’’

जसमीत जोर–जोर से रोने लगी। श्रीमती ने उसे उठाया और गंभीरता से कहने लगी, ''आप घर के जिंदा पात्रों की भावनाओं से तो इंसाफ नहीं कर सकते....कहानी के कल्पित पात्र से क्या उम्मीद रखें....।''

कलम मेरे हाथ से छूट गई। मैंने हैरानी से श्रीमती की तरफ देखा। मुझे लगा कि अभी तक मैं अपने लेखक होने का भ्रम ही पालता रहा हूँ।

प्रताप सिंह सोढ़ी

संरक्षण

बड़ी मशक्कत के बाद एक मित्र की सहायता से प्रसिद्ध मूर्तिकार घोष साहब से भेंट का अपाइंटमेंट लिया। उनके घर पहुँच कॉलबेल बजाई। एक अधेड़ महिला ने दरवाज़ा खोला और पूछा, ''आप दादा से मिलने आये हैं?''

हमने हाँ भरी! एक सँकरे-से गलियारे से वह हमें घोष साहब के एक बड़े-से कमरे में ले गयी। घोष साहब आरामकुर्सी पर बैठे सामने रखी दुर्गाजी की मूर्ति को टकटकी लगाये देख रहे थे। कुर्सी की पीठ पर उनकी छड़ी टँगी थी। उनकी धोती जमीन को छू रही थी। लम्बी श्वेत दाढ़ी और कुर्ते के बटन खुले थे। आयु अस्सी वर्ष के करीब थी।

उस महिला ने घोष साहब को छूकर उनका ध्यान हमारी तरफ मोड़ा।

पास पड़ी कुर्सियों की ओर इशारा करते हुए धीमे स्वर में उन्होंने कहा,

''क्या आप पत्रकार हैं?''

हमने उत्तर दिया, ''नहीं।''

''जो कुछ पूछना हो, जल्दी पूछ लो। मेरी तबीयत ठीक नहीं है।'' घोष साहब ने अपनी विवशता प्रकट की।

''आप इस आयु में भी काम कर रहे हैं, लेकिन अभी तक आपको कोई पुरस्कार नहीं मिला।''

''मैंने कभी पुरस्कार के लिए मूर्तियाँ नहीं बनायीं। फिर पुरस्कार प्राप्त करने के लिए जो हथकण्डे अपनाने पड़ते हैं, मैं हमेशा उनसे दूर रहा।''

''क्या आप अपने काम से सन्तुष्ट हैं?''

''नहीं, बहुत-सी खामियाँ रह गयी हैं, जिन्हें अगले जन्म में दूर करूँगा। आप एकाध सवाल और पूछकर विदा लें तो बड़ी मेहरबानी होगी।''

''आखिरी सवाल घोष साहब, आपके बारे में अफवाह है कि इस आयु में भी आपने एक महिला को रखा हुआ है।''

उनका बर्फ़-सा सर्द कांपता हाथ मेरे हाथों में आ गया और रुँधे कण्ठ से बोले, ''क्या इन हाथों में किसी को थामने की शक्ति है। न मुँह में दाँत, न पेट में आंत, बुझी हुई आंखों की रोशनी और तिल-तिल गलती मेरी जर्जर काया।

मैं तो मौत के दिन गिन रहा हूँ!''

इतना कह वह चुप हो गए और अपनी मूर्तियों को निहारने लगे। फिर अपनी धोती के छोर से आंखों में तैरनेवाले आंसुओं को पोंछते हुए बोले, ''जिस औरत के बारे में मनघड़ंत इल्जाम मुझ पर लगाये जा रहे हैं, वह एक विधवा औरत है। दीपा को सरंक्षण की आवश्यकता थी और मुझे बुढ़ापे में सहारे की। अब आप जाइए। मैं विश्राम करना चाहता हूँ।''

दीपा हमें छोड़ने बाहर तक आयी ओर बोली, ''दादा जल्दी स्वस्थ हो जायें, आप ईश्वर से प्रार्थना करें।''

अब तक सम्भाले दीपा के आंसू टप-टप झर पड़े।

प्रीत नीतपुर

गरीब की बेटी

ससुराल से पहली बार वह मायके आई थी। गांव के बस-अड्डे पर उतरी तो उसे बस-अड्डा कुछ बदला-बदला सा लगा। यह वही बस-अड्डा था, जहाँ से वह रोज़ाना घास की गठरी लेकर गुज़रती थी।

"इतनी जल्दी, इतना कुछ कैसे बदल गया?" वह बुड़बुड़ाई। वास्तव में तो कुछ भी नहीं बदला था, बस उसका भ्रम ही था।

"बेटी भुच्चो, ठीक है?" फलों की रेहड़ी लगाने वाले, दलितों की बस्ती में रहते, रिश्ते के ताऊ ने उसका हालचाल पूछा।

उसे यूं लगा जैसे ताऊ ने उसका अपमान किया हो। उसका मन बुझ सा गया। वह कहना चाहती थी, 'ताऊ! अब मैं भुच्चो नहीं, भूपिंदर कौर हूं...भूपिंदर कौर....'

"हाँ ताया, मैं ठीक हूं।" कहकर वह अपने पति के नज़दीक होती बोली- "बच्चों के लिए कोई चीज़ ले लें।"

"हां, ले ले।" पति को भी याद आया कि पहली बार ससुराल खाली हाथ नहीं जाते।

भुच्चो के पूछने पर रेहड़ी वाले ने बताया, "केले चौदह रुपये दर्जन...संतरे चौबीस रुपये...और सेब...."

'बड़े तीन भाइयों के कितने बच्चे हैं, दर्जन केलों में से तो एक-एक भी हिस्से नहीं आएगा।' भुच्चो ने सोचा और धीमी-सी आवाज़ में घरवाले से पूछा- "फिर कितने लें?"

"देख ले....अगर दस से ज्यादा खर्च लिए तो वापसी का किराया नहीं बचेगा..."

"हाय रब्बा!" एक लंबी आह उसके भीतर आग की लपट की तरह फिर गई।

"हम गरीबों की जाई, मायके में भी भुच्चो और ससुराल में भी भुच्चो!"

भुच्चो को यूँ महसूस हुआ जैसे वह बिवाई-फटे नंगे पांव घास की पहले से भी भारी गठरी उठाए अड्डे में से गुज़र रही हो।

गरीबों का गहना

साइकिल बाहर खड़ा कर, सिर झुका मैं झोपड़ीनुमा उस छोटी-सी दुकान में दाखिल हुआ। अंदर ज्ञानी तो था ही नहीं। अड्डे पर बैठा बारह-तेरह वर्ष का एक लड़का, जनाना सैंडिल की स्ट्रैप को टांके लगा रहा था।

अंदर पत्थर की बनी सीट पर बैठते हुए मैंने पूछा, ''बेटे तेरे डैडी.... ?''

लड़के ने मेरी ओर सरसरी व पांव में पहने जूते की ओर हसरत भरी नज़र डालते हुए कहा, ''वह तो जी, ब्याह में गया है, साथ मम्मी भी। मेरे मामा की लड़की का ब्याह है, उधर बहुत दूर बठिंडे की तरफ़, मेरी ननिहाल।''

''ननिहाल में ब्याह था.... तू क्यों नहीं गया?''

''डैडी हम में से किसी को भी लेकर नहीं गया।'' लड़का किसी अनाड़ी व्यक्ति के बनाए गोले की तरह उधड़ता चला गया- ''वह कहता, अगर सभी जने गए तो किराया बहुत लगेगा। और मम्मी कह रही थी कि यहाँ हमारे गुरुद्वारे में यज्ञ होना है। जलेबियां बनेंगी, जितनी मर्जी खाओ, पेट भर। वहां ब्याह में तो पता नहीं....''

''फिर तू जलेबियां खाने क्यों नहीं गया?''

''मेरे सभी भाई-बहन तो गए हुए हैं, सुबह से ही। मुझे दादी कहती, तू दुकान खोल ले। बस गुड़-चाय के लिए पांच रुपये बन जाएं, फिर तू भी गुरुद्वारे चले जाना....''

''कितने पैसे बन गए अब तक?''

''अभी तो कोई तीन रूपये ही हुए हैं।''

''बेटे!'' लड़के की पीठ थपथपाते हुए मैंने कहा—''गरीबी आदमी के लिए सबक है, एक परीक्षा है। डगमगाना नहीं....मेहनत ही गरीबों का असली गहना है। ले पकड़, मेरे जूते पालिश कर।''

पालिश करते समय लड़के का चेहरा लाल गुलाब बना हुआ था।

प्रीतम बराड़ लंडे

गरीबमार

मैले-कुचैले कपड़े, फैली हुई जट्टों वाली पगड़ी। वह काम कराने के लिए रोज़ शहर के दफ्तर आता और लौट जाता था। काम कभी नहीं बना था, न ही उम्मीद थी।

जब वह चक्कर काट-काटकर थक गया, तो उसे एक तरीका सूझा। बाबू को बीस का नोट पकड़ा कर उसने कहा, ''ले बाबू, चाय पी लेना, काम की कोई बात नहीं। जब मौका लगे कर देना, ऐसी क्या जल्दी है!''

ऐनक के ऊपर से चूहे-सा देखता बाबू 'ही-ही' करता हुआ बोला, ''रण्डी चाय...ही-ही, एकदम रण्डी।''

जट्ट ने उदास फ़सल जैसा सांस भरकर कहा, ''नहीं बाबू! रण्डी क्यों-हद हो गयी है।'' उसने बीस का एक और नोट निकालकर बाबू की मेज़ पर रख दिया। बाबू ने हैरान नज़रों से करमे के मुंह की तरफ़ देखा, फिर दोनों शरीफ़-से नोट अपनी पैंट की चोर-जेब में ठूंस लिए। अब उसके हाथ बड़ी फुर्ती से फ़ाइलें उलट-पलट करने लगे, जैसे बरसों का काम वह आज ही कर डालेगा।

मिनटों में कागज़ तैयार करके बाबू ने करमे के हाथ में पकड़ा दिये और कहा, ''लो सरदार जी, तुम भी क्या याद करोगे? बड़ी माथापच्ची करनी पड़ी है। थक गया हूं आज तो।''

करमे ने कागज़ ज़मीन पर फेंककर बाबू को कॉलर से पकड़ कर ललकारा, ''बाबू तुझे पता है सर्दियों की कड़कदार रातों में गेहूं को पानी कैसे दिया जाता है? डीज़ल की कमी पड़ने पर काम छोड़कर लाइन में किस तरह नंगे पांव....''

कांपते हाथों से बाबू जेब से पैसे निकालकर करमे की जेब में डालकर रिरियाया, ''जाने दो सरदार जी, क्यों ग़रीबमार करते हो?''

''हुँह! ग़रीबमार!''

और वह रुपये पगड़ी के नीचे सम्भालता दफ्तर से बाहर निकल गया। शायद गांव को जाती आखिरी बस मिल ही जाय।

ऐनकों वाला टिड्डा

वह शेर से टक्कर ले सकता है, ज्वारभाटे में तैर सकता है, पागल हाथी के साथ सफ़र कर सकता है, छत पर रेंगती छिपकली की आँखों में देख सकता है, पर उस बाबू की तरफ़ नहीं देख सकता। वही बाबू, जो काग़ज़ों का दुश्मन है— बाबू किशन लाल कैशियर। ऐनकों के ऊपर से झांकती चूहे-सी कमीनी आंखें, फ़िजूल बात पर हंसने वाले दांत, किचमिच-सा कटा-फटा चेहरा। शर्मा का डूबा हुआ बकाया, तरेन की तरक्की लगनी है, मिस आरती की सर्विस-बुक भेजनी है।

—क्यों, आरती जी, फिर भेज दें सर्विस बुक?

—भेज दो कैशियर साहब!

—ऐसे नहीं!

—और कैसे?

बस अब उसके चेहरे को देखना कितना मुश्किल है। खचरे चूहे जैसी आंखें, ही-ही करते दांत, फ़िजूल घसीटे मारता हुआ पुराना पेन।

आरती समझती है। बीस का नोट निकाल कमीने की ट्रे में रखवा देती है।

—चाय पी लेना बाबू जी!

— ही-ही जी—

कैशियर खचरी हंसी हंसता है।

ही-ही जी-आरती दिल में ही नकल उतारती है।

वह देखता है और डर जाता है। सचमुच कैशियर के सामने बैठना कितना मुश्किल है। पर वह उधर नहीं देखता। वह खिड़की में से बाहर देखता है— कितने अच्छे पेड़ हैं। कितने अजीब बादल हैं। वह उठकर खिड़की के पास आकर खड़ा हो जाता है। वह क्या? कुछ नहीं बस, आक का एक पौधा है— ऊपर बैठा आक का टिड्डा पत्ते कुतर रहा है। वह कैशियर की सीट की तरफ़ देखता है—वहां भी एक टिड्डा बैठा है। ऐनकों वाला टिड्डा, जो अभी-अभी मिस आरती की सर्विस-बुक कुतर रहा था। डर के मारे वह आंखें बंद कर लेता है। शेर से लड़ना आसान है, ज्वारभाटे में तैरना आसान है, पर आक के टिड्डे को देखना...कितना मुश्किल है।

पृथ्वीराज अरोड़ा

कथा नहीं

वह पेशाब करके फिर बातचीत में शामिल हो गया।

दीदी ने कहा, ''पिताजी को बार-बार पेशाब आने की बीमारी है, इनका इलाज क्यों नहीं करवाया?''

उसने स्थिति को समझा। फिर सहज भाव में बोला, ''मैं अलग मकान में रहता हूं, मुझे क्या मालूम इन्हें क्या बीमारी है?''

मां बीच में बोली, ''तो क्या ढिंढोरा पिटवाते?''

उसने मां की बात को नज़रअन्दाज करते हुए कहा, ''देखो दीदी, अगर वह बताना नहीं चाहते थे तो खुद ही इलाज करवा लेते।'' थोड़ा रुककर आगे कहा, ''इन्होंने बहुत रुपए सूद पर दे रखे हैं, पैसों की कोई कमी नहीं इन्हें।''

पिता चिढ़े-से बोले, ''जवान बेटे के होते इस उमर में डॉक्टर के पीछे-पीछे दौड़ता?''

इस हमले को तल्खी में न झेलकर उसने गहरा व्यंग्य किया, ''आप सुबह-शाम मीलों घूमते हैं, मुझसे अधिक स्वस्थ हैं, फिर डॉक्टर के पास क्यों नहीं जा सकते थे?''

दीदी ने चौंककर देखा। आनेवाली विस्फोटक स्थिति पर नियन्त्रण करने की गरज से बीच में ही दखल दिया, ''आखिर मां-बाप भी अपनी सन्तान से कुछ उम्मीद करते ही हैं!''

वह अपनी स्थिति को सोचकर दु:खी होकर बोला, ''तुम नहीं जानती कि मेरा हाथ कितना तंग है। ठीक से खाने-पहनने लायक भी नहीं कमा पाता। तुम्हारी शादी के बाद तुम्हें एक बार भी नहीं बुला पाया।'' आंखों के गिर्द आए पानी को छुपाने के लिए उसने खिड़की से बाहर देखते हुए गंभीर स्वर में कहा, ''सूद का लालच न करके मुझे कुछ बना देते तो मैं इनकी सेवा के लायक न बन जाता!''

पिताजी ने रूआंसे होकर बताया, ''मेरे दो दांत खराब हो गए थे, उन्हें निकलवाकर नए दांत लगवाए हैं, देखो!'' उन्होंने दांत बाहर निकाल दिए।

मां बार-बार रोने लगी, ''क्या करते हो? तुम्हारा सारा जबड़ा भी बाहर

निकल आए तो किसी को क्या?''

''दांत न रहने पर आदमी ठीक से खा नहीं पाता।''

दीदी भी रोने लगी, ''दीपक, क्या तुम्हें मां-बाप पर जरा भी तरस नहीं आता?''

दीपक का चेहरा बुझते-जलते लट्टू की तरह होने लगा। दुःख और आक्रोश में वह कांपने लगा। अगले ही क्षण उसने नकली दांतों का सैट मेज पर रख दिया और सिसकता हुआ गुसलखाने की ओर बढ़ गया।

दुःख

उसने पास आकर पुकारा, ''माँ!''

मां ने सिलाई मशीन के रिंग को हाथ से रोकते हुए कहा, ''क्या है बेटा?''

''पिताजी कब लौटेंगे मां?''

''आज तुम फिर वही रोना ले बैठे। वह अब क्या आएंगे बेटा!'' फिर थोड़ा मुस्कुराकर बोली, ''तू चिन्ता क्यों करता है...मैं अपने लाल को पढ़ा-लिखाकर बड़ा आदमी बनाऊँगी। मेरे यह हाथ और यह सिलाई मशीन सलामत रहें। अपने बेटे के जीवन में कोई अभाव नहीं आने दूंगी।''

''मां, पिताजी गए क्यों?''

''क्या कहूं...?''

''बताकर भी नहीं गए मां?''

''नहीं।''

''क्यों...क्यों मां?''

''तूने सिद्धार्थ की कहानी सुनी है...नहीं? ले, सुनाती हूं....सिद्धार्थ कपिलवस्तु के राजकुमार थे। उनकी एक पत्नी थी।''

''तुम्हारी जैसी मां?'' बेटे ने बीच में टोका।

''ऐसे ही समझ ले। उनका तेरे जैसा एक चांद-सा बेटा था। सब कुछ होते हुए भी सिद्धार्थ सांसारिक दुःखों को देखकर बहुत उदासीन रहते थे। इसलिए एक रात अपनी पत्नी और बच्चे को सोता छोड़कर वन की ओर चले गए...संन्यासी हो गए...''

''परन्तु मां! वह तो कपिलवस्तु के राजकुमार थे, खूब धन-दौलत के मालिक।''

''तो?''

''पिताजी तो कहीं के राजकुमार नहीं थे। उनके घर तो केवल दो जून का खाना पकता था। फिर वह क्यों चले गए?''

''लगता है बेटे, दोनों ही दु:खों से डर गए।'' कहते हुए मां ने मशीन के रिंग पर उँगलियां रखकर उसे घुमा दिया।

पल

रमा ने सुलेखा की आंखों का अनुसरण किया। सुलेखा को ऐसा आभास हुआ कि रमा उसे ताक रही है। उसने उसकी ओर देखा। मुस्कराते देख पूछा, ''मुस्कुरा क्यों रही हो?''

''ऐसे ही।'' उसके चेहरे पर शरारत थी।

दोनों ने सुना, एक रिक्शावाला किसी यात्री पर उबल रहा था कि सड़क के बीचोंबीच ऐसे चल रहा था, जैसे बाप की सड़क हो। टकरा जाता तो....

''ऐसे ही क्या मतलब समझूँ। कौन है वह?''

उनके पास से एक आदमी गुजरा। वे चुपचाप हो गईं। शैड से निकलकर वे वहां खड़ी हो गईं, जहां कोई नहीं था।

''मेरे कॉलेज का है।''

''क्या हर रोज आता है?''

''हाँ।''

चीं-चीं... करती एक बस बस-स्टैण्ड की ओर घूम गई। उनका ध्यान क्षणभर के लिए उचट गया।

''कभी उसने बात करने की कोशिश की?''

''की, परन्तु....''

''मैंने उसे रूखा-सा जवाब दे दिया।''

''क्यों?''

''सामाजिक भय से।''

''तब भी वह आता है?''

''हाँ।''

''वैसे वह तुम्हें अच्छा लगता है?''

वह झेंपी फिर हौले से कहा, ''हाँ।''

''सेक्टर छहवाली बस अभी नहीं आयी'', कोई दूसरे को बता रहा था।

''तब तो तुमने अच्छा नहीं किया।''

''क्या कह रही हो तुम?''

''मैं ठीक कह रही हूं।'' कहकर रमा चुप हो गई। शायद किसी गहरी खाई में उतर गई हो। रुँधे कण्ठ से आगे बोली, ''ऐसी ही भूल मुझसे भी हुई थी।''

सुलेखा ने चौंककर रमा की ओर देखा।

''वह आता था, लगातार। सामाजिक डर से मैंने कभी उससे बात नहीं की। एक बार उसने बात करनी चाही तो मैंने तुम्हारी तरह उसे डांट दिया। फिर वह कभी नहीं आया।''

उसने फिर विराम लिया। मन के दर्द को उलीचते हुए बताया, ''उसने कभी मुझ पर छींटाकशी नहीं की। कभी मेरा रास्ता नहीं रोका। कभी कोई शरारत नहीं की। कभी किसी मित्र के साथ नहीं आया। मुझे अच्छा भी लगता था। मेरे सामाजिक डर ने एक सभ्य और मर्यादित व्यक्ति को गंवा दिया, जो शायद मुझसे कुछ पल चाहता था, अपना दुःख या सुख बांटने के लिए....और शायद मुझे उसके लिए उपयुक्त समझता हो!'' उसने गहरा निःश्वास छोड़ा और आगे कहा, ''सच मानो सुलेखा, अब मैं हर रोज़ उसकी राह देखती हूं। एक खालीपन का-सा अहसास होता है। कल जो मुझसे कुछ पल चाहता था, आज तक मैं उन्हीं दो पलों की चाहना कर रही हूं।''

प्रेम विज

अनुत्तरित

एक मकान में आधी रात को आग लग गई। लोग जाने किधर से निकल आए और चारों तरफ हाहाकार मच गया। आग बुझाने के लिए लोग इधर-उधर भागने लगे। जल रहे मकान में एक स्त्री और एक पुरुष गोद में बच्चा उठाये सहायता के लिए पुकार रहे थे। लेकिन भीड़ में से कोई भी आगे बढ़ने के लिए तैयार नहीं था।

अचानक एक युवक निकला और सीढ़ी लगाकर औरत से बच्चा लेकर आ गया।

स्त्री और पुरुष भी सीढ़ी से उतर आये। उन्होंने नीचे आकर बताया कि नौकर तो अन्दर ही रह गया है।

देखते ही देखते युवक फिर अन्दर चला गया। नौकर का कहीं पता नहीं चल रहा था, उस की तलाश में युवक का शरीर भी झुलस गया। झुलसी अवस्था में उसे अस्पताल पहुंचाया गया।

बेहोशी की हालत में युवक बड़बड़ा रहा था, ''क्या नौकर बच गया?''

लेकिन उस के यक्ष प्रश्न का उत्तर देने के लिए वहां कोई नहीं था।

प्रेम सिंह बरनालवी

मुर्दे का धर्म

वक़्फ़ बोर्ड की ज़मीन का झगड़ा चल रहा था।

सिख वीर नारे लगा रहे थे—"ऐह मसान साडा है।"

हिन्दू भाई चिल्ला रहे थे—यह श्मशान भूमि हमारी है'

मुसलमान बिरादर भी अड़े थे—'यह कब्रिस्तान हम ले के रहेंगे।'

तभी कमेटी की वैन में चार आदमी एक मुर्दा ले कर आए। लाश देख लोग चुप हो गए। कुछ डर तो कुछ सम्मान भाव के कारण।

आगुन्तकों ने बताया कि यह लाश लावारिस है।

जब उसके मुंह से कपड़ा हटाया गया तो दाढ़ी देख कर सिख वीर आगे आए, "हम इसका गुरमत रीति से ससकार करेंगे। गुरसिख कभी लावारिस नहीं होता।"

तभी बीच में किसी ने पूछा, "भरावा, इसदा नां की है?

"कहा न, लावारिस है। फिर भी देख लो, शायद बाजू वगैरह पर लिखा हो।"

बाजू से कपड़ा हटाया तो सब पीछे हट गये। "हूं, हम रामलाल का ससकार नहीं करेंगे।"

रामलाल के नाम से हिन्दू भाई आगे आये। जब उसे नहला रहे थे तो सहसा एक ज़ोर से चीख़ा, "अरे देखो तो!"

देखा तो उसकी सुन्नत हुई थी। उन्होंने घृणा से मुंह बिचका लिये।

अब लाश मुसलमानों के कब्जे में थी। वे उसे दफ़नाने की तैयारी करने लगे। तभी मौलवी साहब मेंहदी रंगी दाढ़ी पर हाथ फेरते बोला, "ठहरो भाइयो हम इसे नहीं दफ़नाएंगे।"

"क्यों? एक ने पूछा।

"हम मानते हैं कि यह पैदायश से मुसलमान था, पर इसने तमाम उम्र काफिरों संग काटी है और उनका ही नाम अपनाया सो, उनके संग रहते इसकी रूह भी नापाक हो गई थी। इसका मुसलमान होने का रूतबा व हक जाता रहा।"

वहां बिगड़े हालात को देख कर वैन वालों ने तय किया कि मुर्दे को दूसरे श्मशान घाट ले जाया जाए। मुर्दे को वैन में लिटा दिया।

अब वहां पहले का सा दृश्य था।

थोड़ी देर बाद एक बड़ी कार वहां आकर रुकी। एक नेता किस्म के सज्जन बाहर निकले और कहा, ''वह डैड बॉडी कहां है जो लावारिस......''

''क्यों ? उस लाश में ऐसा क्या था जो....'' एक ने अनमने स्वर में पूछा।

''अरे भाई वह तो महान स्वतंत्रता सेनानी था जो आज़ादी के बाद किसी कारण गुमनामी में जी रहा था.....''

''हैंय!''.....सब चौंक गये। अब वे थूककर चाटने की सोचने लगे।

बापू के बंदर

बापू के बंदर गुम होने की ख़बर गर्म हुई। पुलिस ने देश का चप्पा-चप्पा छान मारा पर बंदर थे जो न जाने कहाँ छलांग लगा गये। शायद वे एक स्थान पर एक पोज में बैठे-बैठे बोर हो गए थे।

विरोधियों ने इस मुद्दे को सत्ता पक्ष के विरुद्ध खूब उछाला। सत्ता पक्ष ने स्थिति की गंभीरता को देखते, जैसा कि यहां का चलन है, एक जांच आयोग बैठाया।

कमीशन ने लम्बी छानबीन के बाद रिपोर्ट दी। उसमें लिखा था—एक बंदर जिसने अपने कानों पर हाथ रखे हैं, राजनेताओं ने और जिसने आंखों पर हाथ रखे हैं, सरकारी अफसरों ने अपने पास छुपा रखे हैं। और तीसरा बंदर जिसने मुंह पर हाथ रखे हैं, गरीब जनता के यहां छुपा है। साथ टिप्पणी दी-पुलिस को तीनों बंदरों की ख़बर है, मगर मौन है और बापू की आत्मा परेशान है।

अमानत

एक नंग-धडंग आदमी को देख नेताजी का चेहरा फक्क पड़ गया, ''अरे बापू जी आप!''

''हां, मैं!'' स्वर में खिन्नता थी।

धैर्य की मूर्ति बापू जी के ये तेवर उन्हें असह्य लगे। व्यंग्य किया, ''महात्मा जी देश आज़ाद हुए बड़ा समय बीत गया है अब दूर किसी गुलाम मुल्क में सत्याग्रह का शंख फूंको।''

''मुझे तुम्हारे उपदेश की जरूरत नहीं। मैं अपनी चार चीज़ें वापस लेने आया हूं।''

''कहिए महाराज समस्त भारत आपके चरणों में.....''

''मुझे मुल्क सत्ता नहीं चाहिए। मेरे पांव देखते हो। मेरी चप्पलें लौटा दो!''

नेताजी के माथे पर तीन शिकनें उभरीं, ''महात्मा जी उसे तो मैंने राज्य चिह्न यानि कि स्टेट सिंबल बना लिया है। जैसे कि भरत ने राम की....''

महात्मा जी चीखे, ''दुष्ट तूने ऐसा क्यों किया?''

नेता जी ने मुलायम स्वर में कहा, ''महात्मा जी जूते को सबसे तिरस्कृत कहा गया है पर इसके बिना हम एक पग भी नहीं चल सकते। यह गति, शक्ति और धैर्य का प्रतीक है। यह तो अब हम देने से रहे, हां कहें तो बढ़िया से बढ़िया....''

''यह सब नहीं चाहिए।''

कहिए आपकी दूसरी क्या चीज़ है?''

''आधे से ज्यादा जीवन मैंने अधनंगा काट दिया। समझ रहे हो न!''

''ओह तो आपका मतलब धोती से है। देखो महात्मा जी! मैं एक गरीब मुल्क पर हुकूमत करता हूँ। उनके बीच उन जैसा बन कर रहने व उनका दिल जीतने का इससे बड़ा अस्त्र और भला क्या हो सकता है। यह मेरे लिए वस्त्र नहीं शस्त्र है। वह तो अब हम आपको देने से रहे। कहें तो कीमती से कीमती....''

''नहीं....नहीं....नहीं!''

''तों महात्मा जी फरमाइये आपकी तीसरी चीज़ क्या है?''

''इस अवस्था में मुझे अब राह तक सुझाई नहीं देता। मुझे मेरी ऐनक लौटा दें।''

''महात्मा जी! आप बड़े भोले हैं। आपका हृदय बालक सा कोमल व निर्मल है। आप आज के राजनेता की तीसरी आंख की समस्या नहीं समझते। सत्ता के नशे में उसकी दोनों आंखें बंद रहती हैं। आपके लिए तो वह एक मामूली सी ऐनक है पर हमें वह तीसरे नेत्र का काम देती है। कहें तो स्वर्ण फ्रेम में जड़ी अति सुन्दर....''

''यह सब मुझे नहीं चाहिए।''

''शान्ति रखिए महात्मा जी। कहिए, आपकी अन्तिम वस्तु क्या है?''

''बेटा, कभी तुझ जैसे लोग मेरा सहारा बना करते थे। अब तो लाठी के

बिना एक एक पग....''

''ओफ्फ महात्मा जी! आप कहें तो हीरे रत्न जड़ित संसार की सबसे बेशकीमती छड़ी....''

''वह सब मुझे नहीं चाहिए।'' महात्मा जी का धैर्य अब जवाब दे गया था, स्वभाव के विपरीत तल्ख स्वर में कहा, ''जल्दी बताओ वरना....''

महात्मा जी का रौद्र रूप देखकर वे नर्म हुए ''महात्मा जी वो तो अब मेरे पास नहीं है।''

''नहीं है तो कहां है?''

''बात यह है कि आप शान्तिपूर्ण आन्दोलनों से लाखों-करोड़ों लोगों का दिल जीत लिया करते थे। आपके एक इशारे पर लाखों लोग मर मिटने को तैयार रहते थे। पर अब चारों ओर हिंसा और अराजकता का वातावरण है।''

''मुझे इस सब से क्या! जल्दी बता कहां है वर्ना....''

उसने हाथ जोड़ते कहा,'' बापूजी! माफ कीजिएगा, वो तो मैंने जनता की पीठ पर लगा रखी है।''

महात्मा जी ने लम्बी निश्वास छोड़ी और 'हे राम' कह धड़ाम से फर्श पर गिर पड़े।

''बाप...बापू....बापू!!!'' हड़बड़ाहट में नेता जी की आंख खुल गई। उन्होंने आंखें मलते इधर-उधर देखा और कहा, ''मालिक तेरा लाख-लाख शुक्र है, कोई मौके का गवाह नहीं।''

दीवार पर तस्वीर से महात्मा जी मंद-मंद मुस्करा रहे थे।

पांधी ननकानवी

गिफ्ट

बलजीत ने सोचा कि अगर नीटू की स्कूल–ड्रेस नकद खरीद ली तो आखिरी हफ्ता होने की वजह से घर का खर्चा चलाना मुश्किल हो जाएगा। इसलिए वह सीधी अपने जीजा की दुकान पर चली गयी, जो रेडीमेड ड्रेसों का काम करते थे। दुकान पर पहुंची तो पता चला कि जीजाजी कहीं गए हुए हैं और काउंटर पर उसकी बहन खड़ी है। दोनों बहनें जब इधर–उधर की रस्मी बातें कर चुकीं तो बलजीत ने नीटू के लिए स्कूल–ड्रेस की मांग की। ड्रेस नीटू को ठीक आ गयी। बलजीत ने कहा, ''बहन, इसके पैसे मैं पहली तारीख को दे जाऊँगी।''

''क्यों?....भई ये बात नहीं चलेगी।'' मनजीत ने नाक–भौं सिकोड़कर कहा।

बड़ी बहन की यह बेरुखी देखकर उसका रंग फीका पड़ गया। उसने गले की थूक निगलते हुए कहा, ''बहन, आगे कभी तेरी पैसा रखा है हमने? हफ्ते की तो सारी बात है।''

''लेकिन तेरे जीजाजी ने मना कर रखा है कि चाहे सगे क्यों न हों—पर उधार नहीं देना। चल तू अस्सी नहीं तो चालीस ही दे दे, बाकी फिर दे दियो।''

''पर बहन, जो पैसे होते तो सारे ही न दे जाती? मैंने तो आगे भी देने हैं और पीछे भी।''

बलजीत का मन उखड़–सा गया था। ड्रेस लेकर जब वह घर पहुँची तो पड़ोसन ने पूछा, ''बहन, कितने की लाई है?''

''अस्सी रुपये की।''

''कपड़ा तो अच्छा है।... किस दुकान से ली है।''

''अपने जीजाजी की दुकान से।''

''अच्छा... फिर तो तुझे गिफ्ट में मिल गयी होगी? तेरी तो मौज बन गयी।''

''हां... बहन'' कहते–कहते बलजीत की आंखों से दो आंसू निकलकर ड्रेस पर आ गिरे।

न्याय

मनसा सिंह कई दिनों से पुलिस चौकी के चक्कर लगा रहा था। कभी थानेदार न होता और कभी कोठी वाला सरदार न पहुँचा होता। सरदार की कोठी का डिस्टेंपर करने का ठेका उसने दो महीने पहले लिया था, पर सरदार था कि पैसे देने का नाम ही नहीं लेता था। आख़िर एक दिन तीनों संयोगवश चौकी में इकट्ठे हो ही गए। थानेदार ने सरदार से पूछा, ''क्या बात है सरदार जी! आपने पैसे क्यों नहीं दिए इस ग़रीब के!''

''ऐ जी....पैसे किस बात के दें, इसने काम हमारी मर्जी के मुताबिक नहीं किया।''

''बताइये न महाराज, कौन-सा काम नहीं किया। मैंने कोठी चमका कर रख दी है....तो भी कहते हैं....'' मनसा सिंह बोल उठा।

''जी, रंग निखरा ही नहीं। हम पैसे किस बात के दें?''

''देखिए, यह ज्यादती है। यह ग़रीबमार अच्छी नहीं। यह चौकी है।....यहां ऐसी शिकायतें आती रहती हैं कि काम करा लिया जाता है, पैसे नहीं दिए जाते।''...थानेदार ने सोच-सोचकर अपना फ़ैसला सुना दिया।

''जनाब! आप कहते हैं तो पैसे दे देते हैं, लेकिन काम हमारी मर्जी मुताबिक नहीं हुआ है।''

''सुनो भाई, कितने का ठेका था?''

''पांच सौ का जी.....''

''दीजिए....साढ़े चार सौ।''

और बिना कुछ बोले सरदार ने साढ़े चार-सौ के नोट मनसा सिंह के हाथ में थमाये और लिखा-पढ़ी करवाने के बाद चौकी से बाहर आ गया।

मनसा सिंह कह रहा था, ''हुजूर ने बड़ी समझदारी से पैसे निकलवाये हैं। हुजूर के इंसाफ की धूम पहले भी मैं सुन चुका था। मुझे कोई सेवा हो तो बताइए।''

''अरे नहीं भाई! मैंने रिश्वत कभी नहीं ली। मैंने तो इंसानियत के नाते तुम्हारा काम किया है। यों यार, मेरे कमरों में भी सफ़ेदी की जरूरत है। अगर, एक-आधा दिन मेरे घर लगा सको...बस, दो कमरे हैं, छोटे से, एक बरामदा है...रसोई, गुसलखाना तो हैं ही...यही बस थोड़ा-बहुत डिस्टेंपर सा...''

''जी...जी...'' बड़ी मुश्किल से मनसा सिंह के मुंह से निकला।

''बैठ यार! पता बताता हूं अपना।...तुम समझदार आदमी हो जरा अच्छे चमक जाएंगे कमरे....।''

और मनसा सिंह को थूक निगलनी मुश्किल हो रही थी।

फूलचन्द मानव

सख्ती

अधिकारी ने भ्रष्ट कर्मचारी को ठीक से काम करने का आदेश दिया।

दूसरी बार शिकायत पर गरीब मातहत की जवाब-तलबी की गयी।

और तीसरी बार लिखित चेतावनी कर्मचारी को 'सर्व' हुयी।

अब भला कर्मचारी चुप कैसे बैठता, उसने जोर लगाया, जोर लगवाया और अधिकारी का तबादला करवा दिया।

बरसात का पानी फिर वैसा ही था।

बलदेव सिंह खहरा

उलटी गंगा

एक्सरे फिल्म को जांचते हुए डॉ. सिंह बाहर खड़े मरीज के रिश्तेदारों के पास आ गए।

''सरदारजी! मां की कूल्हे की हड्डी टूट गई है-ऑपरेशन के बिना ठीक नहीं हो सकती....और ऑपरेशन भी जल्दी करना होगा।''

अपने को सम्भालते हुए, रिटायरमेंट के नज़दीक पहुंचे हरभजन सिंह बमुश्किल बोले- ''माताजी की उम्र काफी हो गई है....क्या इस उम्र में...?''

डॉ. सिंह ने समझाया, ''इसके अलावा कोई चारा नहीं...रिस्क तो लेना होगा....मैंने इनसे भी बूढ़े लोगों के ऑपरेशन किए हैं...वे ठीक-ठाक चलते-फिरते हैं।''

''डॉ. साहब, माताजी मुझे बहुत प्यारी हैं....अगर कहीं...अगर ऑपरेशन न करवाएं तो कोई खतरा तो नहीं?''

''नहीं....इस वक्त तो नहीं, लेकिन अगर वे ज्यादा लंबे वक्त तक चारपाई पर पड़े रहे तो कॉम्प्लीकेशंस हो जाएंगी।''

''फिर भी डॉ. साहब। हौसला नहीं पड़ता। और खर्चा कितना होगा?''

''ऑपरेशन और अस्पताल-स्टे वगैरा मिलाकर कोई साठ-सत्तर हजार तो हो जाएगा।...आप फिक्र न करें...मैं कुछ कम करवा दूंगा...फैमिली फ्रैंड होने का फायदा आपको जरूर दूंगा।''

''सलाह करके बताता हूं,'' घबराते हुए हरभजन पत्नी और दोनों बेटों को एक तरफ़ ले गया। गंभीर विचार-विमर्श हुआ। आखिर सरदार जी डॉक्टर के पास आकर बोले- ''हम मरीज को घर ले जाते हैं.....इस उम्र में ऑपरेशन में कोई ऊंच-नीच हो गई तो लोगों को क्या जवाब देंगे?''

डॉ. साहब अपने शांत स्वभाव के विपरीत तैश में आ गए। ''तुम्हें मालूम है कि तुम क्या कर रहे हो.....तुम इनको तिल-तिल मरता देखोगे। और कॉम्प्लीकेशंस के इलाज पर इससे ज्यादा पैसा खर्च करोगे।''

''नहीं-नहीं डॉ. साहब....मेरे गांव वाला भाई गिला करता रहता है कि मां हमारे पास नहीं रहती। हमने सोचा है कि इसे वहीं छोड़ आते हैं। वहां

डिस्पेंसरी वाला डॉक्टर रोज़ देख जाया करेगा। हमें आज छुट्टी दे दो और बताओ, आपकी फीस कितनी हो गई ?''

अनुवादः अशोक भाटिया

पीढ़ी का अन्तर

ज्योंही शादी की रस्में पूरी हुईं, रामेश्वर प्रसाद ने भगवान का शुक्र अदा किया। मां की सेहत भी ठीक नहीं थी और बेटे की शादी भी आगे नहीं की जा सकती थी। लेकिन अब सब ठीक हो गया था। कल नव-दम्पत्ति का स्वागत समारोह भी ठीक हो गया था।

आज सुबह-सुबह घर में भाग-दौड़ मची हुई थी। बेटा अखिलेश और बहू आज घूमने-फिरने मसूरी जाने वाले थे।

रामेश्वर प्रसाद चाय लेकर मां के कमरे में पहुंचे तो सुन्न रह गए। मां ठंडी हो चुकी थी। वह बदहवास-सा खड़ा था कि अखिलेश आ गया।

''बेटे...तेरी दादी....'' उसका गला रूंध गया था।

''तुम अगले हफ़्ते चले जाना, मां की रस्म-क्रिया पूरी होने तक रुक जाओ।''

अखिलेश ने झटके से दरवाजा बंद किया।

''डैडी....अभी किसी को पता नहीं कि दादी ने प्राण त्याग दिए हैं। टैक्सी आ गई है। आप जानते ही हैं कि हमारा जाना कितना जरूरी है। क्या आप चाहते हैं कि मैं शादी करवाकर मातम में बैठा रहूं ?''

''लेकिन बेटा....''

''बस डैडी। सिर्फ आधा घंटा दादी की मौत को छुपा लो, कह दो कि वह सो रही है।''

और अगले ही पल अखिलेश कमरे से बाहर था।

बलवीर परवाना

किसान और उसकी बीवी

शाम हो गयी थी। सूरज दूर पश्चिम की तरफ़ डूब चुका था, पर अभी अंधेरा नहीं हुआ था। चारों तरफ़ सलेटी रंग फैला हुआ था, जब सारे काम से थका-हारा एक किसान अपने घर लौटा। उसके सिर पर चारे की गांठ थी और हाथों में परैण। चारे की गांठ टोके के आगे फेंक उसने बैलों के गले से पंजाली उतार कर उन्हें खुरली पर बांधा।

''आज काफ़ी देर कर दी।'' रसोई में बैठी घरवाली ने पूछा।

''वह कीकर वाला खेत जोत रहा था। सोचा अब जोतकर ही चलता हूं सारा...क्या छोड़कर जाना है।'' उसके चेहरे की तरह उसकी आवाज़ से भी थकावट झलक रही थी।

''यह पानी रखा है गर्म...हाथ-पांव धो लेने थे।''

''पशुओं को चारा डाल लूं पहले, जिन्हें सारा दिन जोता है।'' उसको एहसास नहीं था कि पशुओं के साथ वह भी सारा दिन चलता ही रहा है।

उसकी जवान बीवी रोटी बनाने लगी और वह टोका चलाने लगा। चारे की गांठ कुतरकर उसमें तूड़ी मिला बैलों की खुरली में डाली। बैल चारा खाने लगे और वह पानी बर्तन में डाल हाथ-पांव धोने लगा। चार और सात साल के उसके दोनों बच्चे कभी के सो चुके थे।

गहरी रात गए वह रोटी खाकर फ़ारिग हुआ। बैलों को फिर और चारा डाला और पंजाली के रस्से ठीक कर, परैण ठीक जगह पर संभाल वह चारपाई पर लेटते अपनी घरवाली से कहने लगा, ''सुबह जरा जल्दी जगा देना, मुर्गे की बांग के साथ....वह रोटी वाला खेत खत्म करना है।''

सुरमे से भरी पलकों से उसकी बीवी ने उसकी तरफ़ झांका, पर वह करवट लेकर सो चुका था। और खिले तारों की तरफ़ झांकती वह रात जैसी एक आह भरकर रह गई।

बलवंत कौर चांद

बेगानी रोटी

शरनी के विवाह को यद्यपि बारह वर्ष हो गए थे, परंतु अभी तक उसे अपने पति के वेतन का ही पता नहीं लगा था।

वेतन वाले दिन बेबे दरवाज़े पर खड़ी प्रतीक्षा करती और गुरदयाल भी वेतन मां को थमा कर ही अपने कमरे में जाता।

आज वेतन का दिन था। इस बार शरनी ने पहले ही पति को मना लिया था कि अब वेतन उसे दिया करे क्योंकि मां ने तो सभी लड़कियों की शादी कर दी है। अब तो उनकी जीती भी बड़ी हो चली है और बच्चों की ट्यूशन फीस भी उसे मां से मांग कर देनी पड़ती है। कई बार तो मां के पास छुट्टे पैसे नहीं होते और बच्चे रो-रो कर स्कूल जाते हैं। उनकी अध्यापिका उन्हें क्लास में खड़ा कर देती है और कई बार तो वापस घर ही भेज देती है।

गुरदयाल सिंह ने 'हां' में सिर हिला तो दिया, लेकिन बेबे को छोड़कर पत्नी को वेतन देना, उसे एक गहरी खाई पार करने के समान लग रहा था।

वही बात हुई। बेबे हर बार की तरह दरवाजे पर खड़ी थी।

''बेबे, अब मैं वेतन शरनी को दिया करूंगा।''

''न बेटा! बेगानी बेटियां कब घर बनाती हैं....ये तो उजाड़ा करती हैं। यह तो मैं ही हूं जिसने सारा घर संभाल रखा है।'' यह कहते हुए मां ने आज भी वेतन पकड़ लिया।

शरनी भी दरवाजे के पीछे खड़ी, सब देख-सुन रही थी। 'बेगानी बेटी' सुन कर उसका कलेजा फट गया। उसने दरवाज़े के पीछे से निकल, सास के हाथों से पैसे उठाते हुए कहा, ''बेबे, आप भी इस घर में ब्याहकर आई थीं, इसलिए 'बेगानी बेटी' ही हुईं।''

फिर वह अपने पति को जीत का अहसास कराती अंदर चली गई।

बिक्रमजीत नूर

इस बार

बाबू कुलदीप राय ड्यूटी के लिए लेट हो रहा था और इधर पंडित जी के आने का कोई रंग-ढंग नहीं था। वह तो सुबह से कई चक्कर लगा आया था। वैसे तो उसने रात भी गुज़ारिश कर दी थी।

पिछले कई वर्षो से श्राद्धों में वे इसी पंडित को न्योता देते आए हैं। आज भी कुलदीप राय के पिता का श्राद्ध था।

लगभग आठ बज चुके थे। खीर-पूरियां व हलवा वगैरा सब कुछ दो-ढाई घंटों से तैयार पड़ा था। कुलदीप राय खीझने लगा। पति-पत्नी के साथ दोनों बच्चे भी बिना कुछ खाए बैठे थे। फिर बच्चों ने तो स्कूल भी जाना था।

कुलदीप राय के पास तो छुट्टी भी कोई नहीं बची थी। ऊपर से दफ्तर में हिसाब-किताब की पड़ताल चल रही थी। आज तो समय से पहले जाना जरूरी था।

कुछ देर पहले फटे-हाल, बिखरे बालों वाले, भिखारी से दिख रहे एक आदमी ने अपने मुँह की ओर इशारा करते हुए उससे खाने को कुछ माँगा था। कुलदीप ने उस बुजुर्ग की ओर ध्यान नहीं दिया था। बुजुर्ग भी जल्दी ही आगे चला गया था।

''बच्चों को तो तैयार कर स्कूल भेज, खाना बाद में वहीं पकड़ा आना।'' कुलदीप राय ने ऊँची आवाज़ में पत्नी को कहा, जो उसकी तरह ही परेशान थी।

बच्चों को स्कूल भेजने के पश्चात् कुलदीप राय को लगा जैसे पंडित जी आ गए, पर वास्तव में वह भिखारी-सा दिखता बुजुर्ग ही था।

कुलदीप राय ने बिना समय गँवाए बुजुर्ग को अंदर बुलाया। उसके हाथ-पाँव धुलवाए और पोंछने के लिए नया तौलिया आगे कर दिया। चादर-बिछी दरी पर बैठाकर बुजुर्ग को बहुत ही श्रद्धा से भोजन करवाया। एक सौ एक रुपये नगद भेंट किए।

पेट भर खाने के बाद बेतहाशा संतुष्टि और खुशी के कारण बुजुर्ग से कुछ भी बोला नहीं जा रहा था।

उदारीकरण

मीनू की कहीं से भी खबर न मिली थी। बेवकूफ ने माता-पिता की नाक कटवा दी थी। कितनी सुन्दर लड़की थी मीनू। बी.ए. तक पढ़ी हुई।

घरेलू आर्थिक मजबूरियों के कारण उसको आगे पढ़ाया न जा सका। बड़ी नीना की शादी भी तो 'बड़ी' आयु में पहुँच कर ही हुई थी। छोटी भी कोई ज्यादा न पढ़ सकी। एकलौता बेटा अभी नवमी कक्षा में पढ़ रहा था।

पर मीनू को चुपचाप बैठे यह क्या सूझा कि वह एक लफंगे और दो बच्चों के बाप के साथ भाग खड़ी हुई।

थाने में रिपोर्ट लिखवाई, पर सब व्यर्थ। पिता खीझता और कुढ़ता रहा। मां रोती रही,कुरलाती रही। आखिर कौन-सा पहाड़ टूट जाना था। जैसे कैसे बड़ी की शादी हो गई, ऐसे ही एक न एक दिन मीनू के साथ छोटी का भी विवाह कर ही देना था।

...यदि कहीं हाथ लग जाए तो दोनों के टुकड़े-टुकड़े कर दूँगा। खून पिता के सिर को चढ़ता और उतरता रहता। वह सिर उठा कर चलने लायक नहीं रहा था।

कभी-कभी वह बैठा-बैठा ही रोने लगता....इंसान से गलती हो जाती है। मीनू! तू अब तो घर लौट आती! मीनू की मां और दु:खी हो जाती।

पूरा वर्ष निकल गया। मीनू तो नहीं आई, एक दिन मीनू का खत जरूर आ गया। पहले मां ने पढ़ा, फिर पिता ने। मीनू पहले तो कुछ देर अपने उन के साथ दिल्ली रही थी और आजकल बंबई में काम कर रही थी। वह माडलिंग करने लगी थी। उस के द्वारा दलेराना ढंग से की गई तरह-तरह की आइटमों की इश्तहारबाजी अखबारों में छपने लगी थी- पूरे के पूरे पन्नों में। टी.वी. के एक 'खास-चैनल' पर उस द्वारा की हुई नहाने के साबुन की एड भी आनी थी।

मीनू के 'टाइम टेबल' का कोई हिसाब किताब नहीं था। रजिस्टर्ड डाक से पहुंचे बड़े लिफाफे में स्टूडियों में खिचवाई और अखबारों इत्यादि में छपी बहुत सारी 'रंगीन' तस्वीरों की कतरने भी थीं। साथ में ही पिता के नाम पर मीनू द्वारा भेजा गया पचास हजार रूपये का ड्राफ्ट भी था। 'छोटी' और भाई के लिए अगली दफा बहुत सी वस्तुएं भेजेगी– यह पंक्ति एक अलग कागज पर लिखी थी।

'जुग-जुग जीती रहे मेरे बेटी' कहते मीनू की मां ने ड्राफ्ट को माथे से छूकर पति के हाथ मे पकड़ा दिया।

कुछ समय पश्चात् मीनू का पिता अपनी गर्दन अकड़ा कर बैंक की ओर जा रहा था।

लोक लाज

सुरजीत सिंह का किसी कारण अपनी पत्नी से झगड़ा हो गया था। काफी कहा सुनी हुई। पत्नी ने भी सख्त रुख अपनाते हुए कह दिया था 'पका लो रोटी आपने आप, मुझ से नहीं यह रोज–रोज के तुम्हारे नखरे सहे जाते।'

उसको शिकायत थी कि वह सारा दिन रसोई के काम में ही उलझी रहती है और पति बच्चों के साथ बैठकर आराम से टी.वी. देखते हैं।

सुरजीत सिंह ने भी आज कुछ करने की 'ठान' ली थी। उसने भी पूरे तैश में आकर कह दिया था, ''अच्छा अच्छा, ज्यादा रोअब झाड़ने की जरूरत नहीं, हमें पकानी आती हैं रोटियाँ।''

और सच में दोनों बाप–बेटे रसोई के भीतर घुस गए थे। पत्नी कपड़ा लपेट कर पड़ गई थी। बेटी किसी और काम में मशगूल थी।

गली वाला दरवाजा खुला रह गया था, इस का सुरजीत सिंह को पता ही नहीं चला और उसका एक करीबी दोस्त रसोई के दरवाजे के सामने आ खड़ा हुआ था।

''क्या बात आज खुद ही हाथ फूँक रहे हो? भाभी जी से कहीं झगड़ा तो नहीं हो गया?''

सुरजीत सिंह झेंप गया था, जैसे कोई अनहोनी हो गई हो। ''मायके गई है यार!'' अभी वो यह छोटा–सा वाक्य बोल कर अपना स्पष्टीकरण देने ही लगा था कि पत्नी ने सिर से कपड़ा उतार कर बाहर देख लिया था कि कौन आया है। इस लिए सुरजीत ने कह दिया, ''बीमार है आज कुछ! अभी दवाई लेकर आए हैं। डाक्टर ने आराम बताया है।''

बेटी पता नहीं कब आँख बचा कर माँ का सिर दबाने लगी थी और फिर पत्नी भी जोर से कराहने लगी थी।

''ठीक है फिर तो....'' दोस्त ने सहानुभूति से कहा और जाने लगा।

''बैठ यार।''

''नहीं, फिर कभी।'' दोस्त बाहर की तरफ चल दिया।

सुरजीत सिंह ने बेटे को जोर से बोल कर यह तो कह दिया 'जा अंकल को दरवाजे तक छोड़ आ' परन्तु कान में यह बात भी डाल दी थी कि 'आते समय दरवाजा अच्छी तरह से बन्द कर आना।'

कदर–कीमत

काफी सारे रुपयों के नोटों में से कुछ नोट दुकानदार को पकड़ाते हुए उसके हाथ से एक रुपऐ का सिक्का नीचे गिरा और नाली में जा गिरा।

''सेठ जी तुम्हारा एक रुपए का सिक्का गिर गया है।'' दुकानदार ने इशारा करते हुए कहा था।

''जाने दो यार'' सेठ ने बड़ी लापरवाही से उत्तर दिया ''कौन सी बुक्कत रह गयी रुपये साले की आज कल? मिलता ही क्या है?''

सेठ के चले जाने के पश्चात् एकाएक उस दुकानदार की नजर साथ में एक कबाड़ी की दुकान पर जा पड़ी। यहां पर मिट्टी घट्टे से मैले उलझे बालों और फटे पुराने कपड़े पहने हुए एक लड़की ने गलियों, रूदियों से इकट्ठे किए हुए प्लास्टिक के लिफाफों और छोटे मोटे समान को तुलवाते हुए मालिक से पूछा 'जी कितना पईसा?'

'गुड्डी कुल एक रुपए बना।'

कबाड़िये से खुशी–खुशी एक रुपए का नोट पकड़ कर लड़की ने मुट्ठी में भींच लिया और फिर नजदीक की एक दुकान से उसने पचास पैसे वाली कुलफी कम से कम दो बार रंगदार शरबत डलवा कर चुसकी ले–ले कर खाई। पच्चीस पैसे की दो मोटी–मोटी संतरे की गोली भाई के लिए खरीदी और बचे चार आने उसने कल को 'काम' पर जाने से पहले खर्च करने के लिए चुन्नी के पल्लू से कस कर बाँध लिए।

अनुवादः जगदीश राय कुलरियाँ

भीम सिंह गरचा

अक्ल का काम

बाबा मिल्खा सिंह का भोग पड़ चुका था। आए हुए लोग आंगन में बैठे जलपान में मशगूल थे।

मिल्खा सिंह सीधे-सादे स्वभाव का मालिक था। उसने सारी जिंदगी खेतों में मिट्टी के साथ मिट्टी होकर गुजार दी थी। लेकिन उसका इकलौता बेटा धीरा बड़े टेढ़े स्वभाव वाला था। उसने अपने बाप को कभी बाप नहीं समझा था। उसके साथ वह नौकरों से भी बुरा बर्ताव करता था।

मरने से कुछ दिन पहले गांव के कई लोगों ने मिल्खा सिंह को कड़ाके की ठंड में पशुओं के बाड़े में टूटी चारपाई पर घिसे हुए खेस में पड़ा देखा था। निमोनिया होने से उसकी मौत हो गई थी।

तीन नौजवान अचानक ही जलपान करते लोगों के पास से गुजरे। उनमें से एक के कंधे पर छत वाला पंखा, दूसरे के सिर पर चारपाई और तीसरे के कंधे पर बिस्तर रखा हुआ था। एक बुजुर्ग जब उनकी तरफ़ ध्यान से देखने लगा तो पास बैठा एक नौजवान बोला- ''बाबा जी, ये तीनों चीजें धीरे ने अपने पिता की याद में गांव के गुरुद्वारा साहब को दान में दी हैं।''

सुनकर वह बुजुर्ग निःश्वास लेता हुआ बोला- ''काश! अगर धीरा अपनी जिंदगी में एक काम ही अक्ल का कर देता?''

''कौन-सा काम?'' नौजवान ने उत्सुकता से पूछा।

बुजुर्ग बोला- ''अगर ये कंजर यही बिस्तर अपने बाप को दे देता तो शायद वो बेचारा दो-चार साल और निकाल देता।''

अनुवादः अ. भा.

भुवनेश कुमार

आत्म–परीक्षा

एक लड़के ने अपनी आवाज़ में मिश्री–सी घोलते हुए किसी दुकान पर लगे सार्वजनिक टेलीफोन–बूथ से किसी औरत को फोन करके कहा–''मैडम, क्या आप मुझे अपने बग़ीचे की देख–भाल और साफ़–सफ़ाई करने का काम दे देंगी.... ?''

दूसरी ओर से जवाब आया–''नहीं, मैंने तो पहले ही एक लड़के को इस काम पर रखा हुआ है....''

लड़के ने अपनी आवाज़ की मिठास थोड़ी और बढ़ते हुए कहा–''मैडम, मैं उस लड़के को मिलने वाले वेतन से आधे में ही आपका काम करने को तैयार हूँ...''

औरत ने कहा–''मैं उस लड़के के काम से पूरी तरह सन्तुष्ट हूँ...''

लड़के ने अपने स्वर में और विनम्रता भरके कहा–''मैडम, मैं अपने वेतन में ही आपके घर की सफाई भी कर दिया करूँगा....''

औरत ने कहा–''माफ़ करना बेटे, मुझे फिर भी तुम्हें काम पर नहीं रखना...''

दोनों की बात–चीत को ध्यान से सुन रहे दुकानदार ने उस लड़के से कहा–''बेटे, मैं तुम्हारी लगन और व्यवहार से बहुत खुश हूँ... तुम चाहो, तो मैं तुम्हें अपनी दुकान में नौकरी दे सकता हूँ...''

''इस मेहरबानी के लिए आपका शुक्रिया...'' लड़के ने कहा–''लेकिन मुझे नौकरी नहीं चाहिए....''

''लेकिन अभी–अभी तुम नौकरी के लिए विनती कर रहे थे....'' दुकानदार ने हैरान होते हुए कहा–

''नहीं जनाब, मैं तो यह जानने की कोशिश कर रहा था, कि मैं अपना काम ठीक से कर रहा हूँ,'' उस लड़के ने कहा–''जिस मैडम से मैं नौकरी माँग रहा था, मैं उन्हीं के यहाँ काम करता हूँ...''

काबुलीवाला

काबुलीवाला सजा काटकर वतन लौटा, तो उसकी बेटी जवान हो चुकी थी। उसने उसका निकाह कर दिया। बेटी के जाने के बाद वह बहुत दिनों तक घर के झमेलों में फँसा रहा। कुछ दिन बाद उसने कोलकाता जाने की सोची, तो उसकी बीवी ने कहा–''तुम बहुत बूढ़े हो गये हो। अब तो हमारा पोता भी जवान हो गया....''

एक दिन उसने अपने बेटे से कहा, कि उसे नहीं तो उसके पोते को ही कोलकाता भेज दे, पर उसकी लाख कोशिशों के बावजूद, बेटा नहीं माना। उसने कहा–''मेवे का धन्धा अब ठीक नहीं रहा। कोलकाता में भी अब पहले जैसे हालात नहीं रहे। आज़ादी मिलने के बाद, वहाँ जाने के लिए पाकिस्तान से होकर जाना पड़ता है। उस मुल्क की हालत बहुत खराब है। पता नहीं कब किस ड्रोन से कोई रॉकेट गिर पड़े.... और फिर न तो पहले की तरह गलियों में मेवा बिकता है, न ही कोई ख़रीदता है। वैसे भी महँगे मेवों की बजाय आजकल लोग मूँगफली और चने खाने लगे हैं। रेलों और बसों का भाड़ा बहुत बढ़ गया है... पासपोर्ट बनवाना पड़ता है,.... जगह–जगह तलाशी देने के बावजूद पुलिस को बड़ी रकम घूस में देनी पड़ती है। हिन्दुस्तान भी पहले जैसा नहीं रहा! क़दम–कदम पर शक, गली–गली में आगज़नी, फ़िरकेवाराना दंगे–फसाद, कारखानों का जहरीला धुआँ, सड़कों पर होने वाले ऐक्सीडैण्ट, लूट–मार...''

एक दिन उसने पोते से अपने दिल की बात कही, तो उसने कहा–''दादा जान, आप जब मेरे अब्बा और चचा को वहाँ नहीं भेज सके, तो मुझे मेवे और मिनी की कहानी सुनाकर फुसलाने लगे हैं... मैं हिन्दुस्तान तो ज़रूर जाऊँगा, लेकिन....''

''लेकिन क्या.... ?'' काबुलीवाला ने हैरान होकर अपने पोते से पूछा.

''मैं कोलकाता नहीं, कश्मीर जाँऊगा...'' दादा को खुश देखकर पोते ने कहा–''मैंने पाकिस्तान में एक साल की ट्रेनिंग ली है। वहाँ से मेरे सरहद पार करने का पूरा इन्तज़ाम भी हो गया है। एक बार वहाँ पहुँच जाऊँ, तो मैं कोलकाता क्या, पूरे हिन्दुस्तान में घूम लूँगा। आप कोलकाता के अपने कर्ज़दारों और मिनी के बाप का पता मुझे लिखकर दे दें, ताकि आपका वास्ता देकर मैं पुलिस की गिरफ्त से बच सकूँ....''

''लेकिन उनके पते–ठिकाने तेरे किस काम आयेंगे ? अब तक तो वे लोग

मर–खप गये होंगे...''

''उनके रिश्तेदार तो होंगे... उनके नाम बताकर मैं पुलिस से बच जाऊँगा...'' पोते ने कहा।

''लेकिन तुझे तो वहाँ जाकर मेवे बेचने है... इस काम में पुलिस से बचने की क्या जरूरत.... ?'' काबुली वाले ने अपने पोते से पूछा।

''अब वहाँ मेवे कौन ख़रीदेगा? मैं तो बम, गोले, रॉकेट और बन्दूकें बेचने जाऊँगा... दंगा–फसाद और चुनाव में इनकी माँग बहुत बढ़ जाती है। पिछले साल पंजाब में मैंने कारोबार तो ख़ूब किया, पर सरहद पार नहीं कर सका। अब मेरे कमाण्डर ने मुझे कश्मीर के रास्ते से कोलकाता भेजने का बन्दोबस्त कर दिया है...''

काबुलीवाले का दिल छटपटाने लगा, आँखों के आगे अँधेरा छा गया और उसका सिर चकराने लगा...

भूपिंदर सिंह

पहुँचा हुआ फ़कीर

एक कमरा कह लो।

या छोटा घर।

वहीं पर सास–ससुर, वहीं पर ननद। वहाँ ही छोटा देवर और एक तरफ पति–पत्नी की दो चारपाइयाँ।

बहू को दंदल पड़ने लगे। पलों में ही हाथ–पैर ढीले हो जाते, हाथों की उंगलियाँ मुड़ जातीं। ओठों का रंग नीला पड़ जाता। हकीमों की जड़ी बूटियाँ देखीं, डाक्टरों के टीके भी कराए, पर फ़ायदा कुछ न हुआ।

किसी ने एक फ़कीर के बारे में बताया। सात मील पर उसका डेरा था। पति ने साइकिल पर उसे बिठाया और चल दिया। रास्ते में एक छोटा–सा बग़ीचा आया। हैंडल चुभने का बहाना लगाकर पत्नी उतर गयी। दोनों बैठ गए। जी भर कर बातें कीं। फिर उनकी आत्माएँ एक हो गयीं। रोकने–टोकने वाला नहीं था, जो मन में आया किया।

''आज की यात्रा से फूल–सा हल्का महसूस कर रही हूँ बाबा जी, जैसे कि कोई रोग ही न हो।'' डेरे पर पहुँचकर उसने कहा।

''तो हर बुधवार, बीस चौकियाँ भरो बेटी! दवा–दारू की ज़रूरत नहीं। महाराज भली करेगा।''

रोटी का टुकड़ा

बच्चा पिट रहा था, लेकिन उसके चेहरे पर अपराध का भाव नहीं था। वह ऐसे खड़ा था जैसे कुछ हुआ ही न हो। औरत उसे पीटती जा रही थी, ''मर जा जाकर... जमादार हो जा... तू भी भंगी बन जा... तूने उनकी रोटी क्यों खाई?''

बच्चे ने भोलेपन से कहा, ''माँ, एक टुकड़ा उनके घर का खाकर क्या मैं भंगी हो गया?''

''और नहीं तो क्या?''

''और जो काकू भंगी हमारे घर में पिछले दस सालों से रोटी खा रहा है,

तो वह क्यों नहीं 'बामन' हो गया?'' बच्चे ने पूछा।

माँ का उठा हुआ हाथ हवा में ही लहराकर वापस आ गया। वह अपने बेटे के प्रश्न का जवाब देने में असमर्थ थी। वह कभी बच्चे को तो कभी उसके हाथ में पकड़ी हुई रोटी के टुकड़े को देख रही थी।

मंगत कुलजिंद

फ्रीज़

चालीस वर्षों की शैलजा आज अपने नवजात शिशु को दूध पिला रही थी पर उसे वह उत्तेजना महसूस नहीं हो रही थी जो उसने किताबों में पढ़ी थी अथवा जो उसकी सखियों ने बताई थी।

वैसे तो उसे आनन्दमई उत्तेजना अपने प्रेमी से शादी कर उससे सुहागरात मनाते, बच्चा जनते भी नहीं हुई थी, सब कुछ मशीनी–सा लग रहा था।

अपने बिजनैस में जाने का सरूर, नए कीर्तिमान स्थापित करने का नशा उसमें जवानी की आयु में ही था। उसके मन की बड़ी उलझन का उपाय उस की सखी ने यह बता कर दिया, ''शैलजा! वैज्ञानिकों ने नई तकनीक की खोज कर ली है, जिससे औरत अपनी ढल रही जवानी के अंत तक धन दौलत शोहरत प्राप्त करने के लिए निश्चिंत होकर काम कर सकती है।'' पैसों का कोई मसला नहीं था। इंटरनेट पर सर्च कर आयु के सब से उपजाऊ वर्ष 23 वर्ष की आयु में शैलजा अपने अंडों को लैबारटरी में फ्रीज करवा आई थी और उनसे ही प्राप्त बच्चे को आज वह छाती से लगाए बैठी थी।

अंडों को फ्रीज करवा कर इतने सालों तक उनकी शक्ति को तो बरकरार रख लिया पर शरीर के दूसरे अंगों को तो फ्रीज करवाना संभव नहीं था।

मधु संधु

बिगड़ैल औरत

पिता ने पुचकारकर, भाई ने लताड़कर, पति ने गुर्राकर, पुत्र ने तरेरकर, कवियों ने दूध–पानी का हवाला देकर, गुरुजनों ने मंत्रवादी शान्त स्वर में, समाज वैज्ञानिकों ने अबला कहकर उसे उसकी औकात बताई; पर बिगड़ैल औरत मानी नहीं।

उन्होंने कहा, ''औरत की अक्ल चोटी के पीछे होती है।''

उसने बाल कटवाकर लहरा दिए।

उन्होंने कहा, ''औरत पांव की जूती है।''

वह जगमग करते हीरों में बदल गई। अब पांव में डाले या गले में?

उन्होंने कहा, ''औरत तो आटे का दीपक होती है, बाहर आते ही कौवे नोच खांएगे।''

वह दीप–ज्योति से ज्वाला बन गई।

उन्होंने उसे ढोल–सा पीटा। उसने भारी स्वर में उनके कानों के पर्दे फाड़ दिए।

उन्होंने गंवार कहा।

वह विश्वविद्यालय में प्रथम आ फेलोशिप ले विदेश यात्रा कर आई।

उन्होंने उसे शूद्र कहा।

उसने धन–सम्पदा में हिस्सा ले, महाभोज करवा, गोत्र बदल लिया और पाश इलाके में बंगला खरीदकर ठाठ से रहने लगी।

थके–हारे वे माथे पर हाथ रखकर शिथिल–से बैठ गए।....अब?

महिन्द्र फराग

विज्ञापन

छोटा भाई बड़े को कह रहा था, ''मैंने तो सोचा था छबील बड़े चौराहे में लगाते। पर वहां तो चौराहे वालों ने अपनी लगाने की सोच रखी है।''

''हम फिर उस बैंक के शैड के नीचे लगा लेंगे। सड़क के कोने पर पानी का भी सुख रहेगा। जैट पम्प साथ ही है।''

''हां, यही ठीक रहेगा... काफी खुली जगह है... पांच-छः तख्तपोश भी आसानी से रखे जाएंगे।'' छोटे ने सहमति प्रगट की।

इतने में लड़कों की रोटी लेकर उनका बाप आ गया। आते ही उसने रोटी का डब्बा काउंटर पर रख, अपनी तसल्ली के लिए पूछा, ''दूध का याद करवाया? यह भी कह दिया ना दूध खालस हो... और चीनी वालों को भी... भई कम न हो... यह तो धर्म का काम है।''

लड़कों ने हामी भर दी।

फिर उसने पहले दाएं देखा, फिर बाएं। फिर सामने की तरफ और फिर जैसे किसी निर्णय पर पहुंचकर कहा, ''भला छबील दाएं लगाई जाए या बाएं... क्या सोचा है?''

''उधर सामने...।'' बड़े लड़के ने गर्दन घुमाकर इशारा किया-''वहां पानी की भी कमी नहीं है।''

''पता नहीं, किस दिन अक्ल आयेगी तुम्हें!'' बाप भीतर से उखड़ गया। खीझ आई, ''लोग रुपयों के रुपये उड़ाते हैं जाहिर होने के लिए... तुम्हें तो मुफ्त का मौका कमाना भी सिखाना पड़ेगा...'' उसने आंखें घुमाईं और ठोस सुर में कहा, ''उधर लगाओ बाएं... पता तो चले भीड़ को कि यहां भी ज़रूरी वस्तुओं की एक अच्छी-खासी दुकान है... कल पर्व पर लोग इकट्ठे होंगे... सामने लगाई तो हर किसी की पीठ न होगी इस तरफ?''

मित्र सेन मीत

चालाक लोग

किसी बड़ी फर्म के लिए मजदूरों की जरूरत है। रोजगार दफ्तर के बाहर मजदूर बड़ी संख्या में अंदर से पड़ने वाली आवाज की प्रतीक्षा में बैठे हैं। उनके हाथों में इंटरव्यू कार्ड है।

''हरनाम सिंह बई'' अंदर से आवाज आई है और एक दुबला सा मजदूर तेजी से चिक को उठाते हुए अंदर जाता है।

मेज पर बैठे मजदूर की तरफ नफरत भरी निगाहों से देखते हुए अफसर पूछता है ''नशेड़ी लगता है?''

''जी..जी... सरकार। पर अब नहीं। वह तो मैंने कुछ कर्ज लिया था। पिता का साया न था। बहन की शादी की। अधिक काम कर सकूं इस लिए नींद की गोलियां....''

''बस! बस! चला जा। हमे नशेड़ी नहीं चाहिए।''

जिस तेजी से मजदूर आया था, उसी तेजी से वापिस लौट जाता है।

''कैसे देख रहा है? साफ दिखाई देता है?'' भीतर धँसी पड़ी मैली आंखों की तरफ देखकर अफसर दूसरे मजदूर से पूछता है।

''थोड़ा कम दिखाई देता है। एक बार सड़क पर काम कर रहे थे। तारकोल को गर्म करते हुए सेंक लग गया था। बस जी....थोड़ी रोशनी चली गई। बच्चे अब कई....''

''जा चला जा... तू क्या काम करेगा, जब पूरा दिखता ही नहीं है?'' अफसर जोर से बोलता है।

''कितना पढ़ा है? साइन करने आते है?'' स्वस्थ मजदूर को देखते हुए अफसर फंसा हुआ महसूस करता है।

''नहीं जी।''

''कुछ तो पढ़ना था यार।''

''जी हम गरीबों को कौन पढ़ाता है। पिता ने जन्म के पश्चात् ही नौकर लगा दिया....।''

''मैं फिर क्या करूं। कम से कम साइन तो करने आते हों। तू चला जा

फिर।''

''तूने प्री मैडीकल की परीक्षा दी है?'' अफसर अपना सिर खुजला रहा है।

''जी।'' लड़का अफसर की निगाहों में इन्कार देखता है।

''हुऊ। तुझे पता है कि नौकरी किसकी है। मजदूरी। सारा दिन भट्ठी के आगे सड़ना होगा।''

''कोई बात नहीं जी, पेट की खातिर सब कुछ...''

''चुप्प कर चुप्प...। पहले तेरे जैसे सभी ऐसे ही कहते है। मेरी बीस वर्षों की सर्विस है। पढ़े लिखे फिर एक दिन नहीं टिकते।''

''आप मौका तो...''

''तू जा सकता है।'' अफसर ने बीस वर्षों के तजुर्बे का रोआब डाला। लड़का जलता भुनता वापिस हो गया।

''तुझ में खून नहीं दिखता। यदि सरकार को जरूरत पड़ जाए।'' खिझा हुआ अफसर पांचवें मजदूर से पल्ला छुड़वा रहा है।

''हमें सरकार ने खून दिया ही कब है, जो हम उसे देंगे।''

''तू तो कोई नक्सलवादी लगता है। हमें मजदूर काम के लिए चाहिए। फैक्टरी को आग लगाने को नहीं।''

''अभी तक तो कुछ नहीं। तुम जैसे बना जरूर देंगे।''

और वह जवाब की प्रतीक्षा किए बिना ही चला जाता है।

छठा मजदूर इंटरव्यू कार्ड के साथ-साथ एक लिफाफा देता है और सत श्री अकाल (नमस्कार) की जगह किसी अफसर का नाम लेता है।

''अच्छा! अच्छा! बैठा जा! तुम्हें उन्होंने भेजा है। कितने है इसमें?'' अफसर खुश है।

''पच्चास। कम अधिक फिर समझ लेंगे।''

''तू बड़ा चतुर है। ऐसे बन्दे ही चाहिए।''

अफसर उस के कार्ड पर साइन करता है। रुपये वाला लिफाफा उसकी जेब में धंस गया है।

अनुवादः जगदीश राय कुलरियाँ

रमेश बत्तरा

सूअर

वो हो–हल्ला करते एक पुरानी हवेली में जा पहुंचे। हवेली के हाते में सभी घर के दरवाजे बंद थे, सिर्फ एक कमरे का दरवाजा खुला था। सब दो–दो, तीन–तीन में बंटकर दरवाज़े तोड़ने लगे और उनमें से दो आदमी उस खुले कमरे में घुस गये।

कमरे में एक ट्रांजिस्टर हौले–हौले बज रहा था और एक आदमी खाट पर सोया हुआ था।

''यह कौन है?'' एक ने दूसरे से पूछा।

''मालूम नहीं, दूसरा बोला, ''कभी दिखाई नहीं दिया मुहल्ले में।''

''कोई भी हो।'' पहला ट्रांजिस्टर समेटता हुआ बोला, ''टीप दो गला।''

''अबे, कहीं अपनी जात का न हो?''

''पूछ लेते हैं इसी से'' कहते–कहते उसे जगा दिया।

''कौन हो तुम?''

वह आंखें मलता नींद में ही बोला, ''तुम कौन हो?''

''सवाल–जवाब मत करो। जल्दी बताओ वरना मारे जाओगे।''

''क्यों मारा जाउंगा?''

''शहर में दंगा हो गया है।''

''क्यों, कैसे?''

''मस्जिद में सूअर घुस आया।''

''तो नींद क्यों खराब करते हो भाई! रात की पाली में कारखाने जाना है।'' वह करवट लेकर फिर से सोता हुआ बोला, ''यहां क्या कर रहे हो? जाकर सूअर को मारो न!''

लड़ाई

ससुर के नाम आया तार बहू ने लेकर पढ़ लिया है। तार बतला रहा है कि उनका फौजी–बांका बहादुरी से लड़ा और खेत रहा... देश के लिए शहीद हो

गया!

''सुख तो है न, बहू!'' उसके अनपढ़ ससुर ने पूछा, ''क्या लिखा है?''

''लिखा है, इस बार हमेशा की तरह इन दिनों नहीं आ पाऊंगा।''

''तेरे वास्ते क्या लिखा है?'' सास ने मजाक किया।

''कुछ नहीं!'' कहती वह मानो लजाई हुई-सी अपने कमरे की तरफ भाग गयी।

बहू ने कमरे का दरवाजा आज ठीक उसी तरह बंद किया जैसे हमेशा उसका ''फौजी'' किया करता था। वह मुड़ी तो उसकी आंखें भीगी हुई थीं। उसने एक भरपूर निगाह कमरे की हर चीज़ पर डाली... मानो सब-कुछ पहली बार देख रही हो।

अब कौन-कौन सी चीज़ काम की नहीं रही!-सोचते हुए उसकी निगाह पलंग के सामने वाली दीवार पर टंगी बंदूक पर अटक गयी। कुछ क्षण खड़ी वह उसे ताकती रही, फिर उसने बंदूक दीवार पर से उतार ली। उसे खूब साफ करके अलमारी की तरफ बढ़ गयी। अलमारी खोलकर उसने एक छोटी-सी अटैची निकाली। अपने पहने हुए वस्त्र उतारकर अटैची में रखे और एक जोड़ा पहन लिया जिसमें फौजी ने उसे पहली बार देखा था, प्यार किया था।

संज-संवरकर उसने पलंग पर रखी बंदूक उठायी...फिर लेट गयी और बंदूक को बगल में लिटाकर उसे चूमते-चूमते सो गयी!

कहूं कहानी

- ऐ रफीक भाई! सुनो... उत्पादन के सुख से भरपूर थकान की खुमारी लिए रात मैं कारखाने से घर पर पहुंचा तो मेरी बेटी ने एक कहानी कही- एक लाजा है वो बोत गलीब है!

रघबीर सिंह महमी

दीवारें

मेरा एक दोस्त कई वर्षों बाद मुझे गुरुद्वारे जाते हुए मिल गया। मुझे ध्यान से देखता हुआ बोला, ''दीदार सिंह! तुमने अभी तक अमृत नहीं छका?''

''नहीं!'' उसके द्वारा अचानक सवाल पूछने से मैं शरमा गया।

''तू कैसा सिक्ख है अगर अमृत ही नहीं छका?'' तुझे पता है जो सिक्ख अमृत नहीं चखता, गुरु गोबिंद सिंह जी उसको अपना सिक्ख नहीं मानते। वह इस लोक में भी भटकता है, परलोक में भी।''

मेरी आंखों में और शर्मिंदगी छा गई।

''चल छोड़ यार, यह बता कि प्रीती की शादी की कि नहीं?'' मैंने बात का रुख बदलने की कोशिश की।

''कहां यार कोई ढंग का लड़का ही नहीं मिल रहा। तू ही बता दे अगर तेरी निगाह में है कोई। बी.ए. करके बी.एड. की है उसने।''

''अपने बिंदर ने भी तो बी.एस-सी. करके बी.एड. कर ली है। दोनों साथ पढ़ते रहे हैं, एक-दूसरे को अच्छी तरह जानते हैं और दोनों अमृतधारी हैं। विचार कर लो इस बारे में।'' मैंने अपनी राय पेश की।

''ओए, तुझे पता नहीं, हम जाट होते हैं!'' गुस्से में उसकी आंखों से आग की लपटें निकल रही थीं।

रमेश कुमार सन्तोष

कटौती

पांच तारीख को ही बिलों का भुगतान करने के पश्चात् पति जी की जेब में वेतन से जब दस रुपए का नोट बचा तो वह परेशान हो गये। पत्नी को बुलाया और हिसाब लगाने लगे...।

पिछले तीन महीनों में जो राशि बैंक में जमा थी वह निकलवा चुके थे।

''क्या करें...?'' पति ने पत्नी की ओर देखते हुए कहा।

''हुआ क्या है...!'' पूछा पत्नी ने।

''यही बचा है बस....'' पति ने दस का नोट दिखाते हुए कहा।

''क्यों...सब का क्या हुआ...?''

''पता नहीं क्या होता जा रहा है...! वेतन से बनता ही कुछ नहीं।''

''अब तो फिजूल खर्च भी नहीं करते...!''

''यही सिलसिला रहा तो अगले एक–दो महीनों में हम कर्जदार हो जाएँगे। हमें अभी से सोचकर कदम उठाना चाहिए...।''

''बात तो आप की ठीक है...लेकिन किस खर्चे को कम किया जाये...?''

''सोचो तो सही...''

''क्या सोचूँ...? अखबार तो पहले ही बन्द कर चुके हैं...। लवली को अंग्रेजी स्कूल से हटवा कर सरकारी स्कूल में दाखिल करवा दिया है...। दूध एक किलो के स्थान पर आधा किलो लेने लगे हैं...फिल्म के लिए खर्चा बन्द कर दिया है...। घूमने के लिए भी महीने में सिर्फ एक रविवार को ही जाते हैं।... बर्तन साफ करने वाली भी हटवा दी है...आखिर अब क्या बन्द करें...।''

''कुछ तो सोचो...''

''मेरी तो समझ में कुछ नहीं आता...।''

''करना तो कुछ होगा ही...''

''रोटी खाना बन्द कर देते हैं...'' पत्नी की आवाज़ कुछ तेज थी।

''तुम गलत समझ रही हो..., मेरा मतलब...कुछ...तो...मुझे समझने की कोशिश करो...'' पति की बात टुकड़ों में निकली!

''कितने समय से कह रही हूं...कोई पार्ट टाइम काम कर लो...या मुझे कहीं नौकरी में लगवा दो...''

''ओह...हो...तुम तो बहस करने लगी हो...यह बात तो बाद की है...इस समय हमें क्या करना चाहिये...समझी...।''

''मुझे कुछ भी समझ नहीं आता...खुद ही सोच लो...।''

''सुबह का नाश्ता...दोपहर का भोजन...शाम की चाय...रात का खाना...''

पति जी कुछ समय तक सोचते रहे... और फिर एक ही सांस में कहे गये, ''देखो...सुबह परांठे के स्थान पर चपातियाँ बना लिया करो या दो–तीन पराठों के स्थान पर एक–एक परांठे से काम चलाया जाए...। सब्जी दोपहर को ही बनाई जाए...और उसी से रात का काम चलाओ...! और...और...शाम की चाय बन्द...।''

''तो क्या होगा...फिर...''

''कुछ तो अन्तर पड़ेगा...''

''जैसा कहते हो कर लेते हैं...परन्तु कल को रात का खाना बन्द न करवा देना...।''

'प्लीज...ऽ...ज...। मुझे...समझने की कोशिश करो...यह स्थायी नहीं है...।

कुछ समय के लिए...''

''आज तक कौन–सी कटौती अस्थाई हुई है...'' कहती हुई पत्नी अन्दर के कमरे में चली गई। पति उसे देखता रह गया था, बेबस आंखों से...।

राजेन्द्र सिंह 'साहिल'

फोका टिपुर

एक तो एन.आर.आई. ...ऊपर से मल्टी-एक्सल ट्रकों का ड्राइवर... और रिक्शा? पहले उसे अटपटा तो लगा, मगर मजबूरी थी...सो उसने एक अपेक्षाकृत नये-से लगने वाले रिक्शे को आवाज़ दे ही दी।

कनाडा में ट्रक और पंजाब में लक्जरी कारों में चलने वाले को रिक्शे की स्पीड बहुत धीमी लगी। उसने समय काटने के मक़सद से रिक्शेवाले से बात-चीत शुरू कर दी-

''आज सर्दी काफी ज्यादा हो गई है...''

''जी बाबू जी!''

''क्या तुम्हारे बिहार में भी इतनी ही ठंड पड़ती है?''

''मैं बिहार का नहीं यूपी का हूं...''

''यूपी में कौन-सा जिला है?'' उसे स्कूल में ज्योग्राफी से खास लगाव रहा है। नक्शे देखते रहने की आदत के कारण, कहीं न जाकर भी उसे पता है कि कौन-सा शहर कहां पड़ता है...।

''जी हरदोई...''

''अरे! लखनऊ तो तुम्हारे बहुत पास है...तुम वहां रिक्शा क्यों नहीं चलाते...लखनऊ तो लुधियाना से है भी बड़ा...''

रिक्शेवाले की ओर से कोई जवाब नहीं आया तो वह हंसता हुआ बोला-

''अच्छा...अच्छा...समझा...तुम्हें यह लगता होगा कि अगर कोई गांव वाला देख लेगा तो क्या कहेगा...?''

रिक्शे वाले ने स्वीकृति भरी मुस्कुराहट के साथ चेहरा झुका लिया। अपनी बात सही निकलते देख वह ज़ोर से हंस पड़ा। मगर उसे लगा कि वह रिक्शे वाले पर नहीं खुद पे हंस रहा है। ट्रक तो वह पंजाब में भी चला सकता था...पर फिर भी वह ट्रक चलाने के लिए कनाडा क्यों गया हुआ है...?

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते...

''अरे बेटी!... मैं तेरा बाप हूं... और ये दोनों तेरे भाई हैं...हमने कभी आज तक तेरा बुरा चाहा?... कभी नहीं न... ? अब देख .... तू लिटरेचर-विटरेचर पढ़ना चाहती थी...पर हमने तुझे बाइलोजी पढ़वाई....नर्सिंग करवाई...ताकि तुझे अमरीका में सेट होने में आसानी हो...यहां सीनियर सिटीजनों की देखभाल करने के लिए नर्सों की कितनी डिमांड होती है... ?... माना कि तुझे अमरीका भेजने के लिए हमें तेरी शादी कुछ ज्यादा ही उम्र के लड़के से करनी पड़ी थी, पर हमने तेरे अमरीका पहुंचते ही छह-सात महीने में तेरा तलाक भी तो करवा दिया था...तुझे सेट होने में और हमें पंजाब से यहां बुलवाने में चार-पांच साल लग गये...पर हमने कभी धीरज खोया?... जब वाहिगुरु ने चाहा...हम भी अमरीका आ गये।

अब तू अपने छोटे वीर की बात मान ले....इसके बॉस के पास कई स्टोरों की चेन है....70-72 का हो चला है.... न कोई आगे न पीछे...दो-चार साल में 'रिड़' जायेगा... तब सारे स्टोर अपने... उसका छोटा कह रहा था...उसे इंडियन लड़कियों का बड़ा क्रेज है....सारा दिन बैठा इंटरनेट पर इंडियन गर्ल्ज की साहटें देखता रहता है... उस ने तुझे स्टोर पर आते-जाते देखा है....तू उसे पसंद भी बहुत है....अब तू ज्यादा सोच-विचार मत कर.... जल्दी उससे शादी कर ले...रब ने इतना अच्छा मौका दिया है.... सारे स्टोर अपने हो जायेंगे।''

देख! तुझे उससे शादी तो करनी पड़ेगी... कैसे नहीं करेगी तू उससे शादी .... हमने तेरे लिए क्या कुछ नहीं किया.... तू हमारे लिए इतना भी नहीं कर सकती...''

रामसरूप अणखी

पागल

एक शहर में एक पागल रहता था– नंगे, पैर, फटी-पुरानी निक्कर मैला खेस लपेटे, हाथ में बेरी की लाठी लिए हुए।

वह जहाँ किसी माला वाले आदमी या औरत को देख लेता, उसकी माला खींचकर सड़क पर फेंक देता और उसे लाठी मारकर भाग जाता। देखनेवाले तालियां बजाते, हंसते–न जाने मालावाले पर या पागल पर।

कहते हैं, वह बड़ा अमीर आदमी हुआ करता था। उसकी बहुत बड़ी दुकान थी।

फिर वो पागल कैसे हो गया?

उसकी घरवाली को औलाद नहीं हो रही थी। दाई थक कर हांफने लगी थी। पत्नी को अस्पताल ले जाने की बजाए वह माला फेरता रहा था। वह तड़प-तड़पकर मर गई थी।

लड़के को पागल कुत्ते ने काट लिया था। सुरमा और मिर्चे बांध दी गई थीं। वह माला फेरता रहा था। लड़का धीरे-से दम तोड़ गया था।

अब वह था या उसकी बेटी।

बेटी बेल की तरह बढ़ रही थी। उसे बेटी का कोई फ़िकर नहीं थी। वह घर पर दरियां बुनती रहती थी और वह सारा दिन बसाती की दुकान पर। उसको माला पर भरोसा था, जैसे कि कोई आप आकर ही लड़की का रिश्ता मांग लेगा।

लड़की अपने प्रेमी के साथ निकल गई थी। तब उसने माला चलाकर फेंकी थी। बसाती की दुकान को आग लगा दी थी और आप कहीं भाग गया था। तीन साल बाद वह शहर में आया था तो उसका यह हाल था।

रेनू

प्लास्टिक की गुड़ियां

मैं और राजी हमेशा गुड़ियों के साथ खेलती थीं– गुड़ियां प्लास्टिक की..राजी को हमेशा शोख रंग पसन्द था, मैं यदि कभी किसी गुड़िया को हल्के रंग के कपड़े देती तो वह तुरन्त ही बदल देती...और फिर गुड़िया को दुल्हन की तरह सजा देती...मुझे कहती थी 'क्यों, गुड़िया का दिल नहीं होता?'

इस तरह उन प्लास्टिक की गुड़ियों की शादी कराते हुए कब हमारी आयु शादी के योग्य हो गई...और राजी की कुछ समय के पश्चात्... और जब मैं कुछ माह के बाद मायके गई तो पता चला कि राजी भी आई हुई है– मैं भागकर उसे मिलने गई– परन्तु राजी का रंग रूप और पहनावा देखकर मुझ से दहलीज बड़ी मुश्किल से पार हुई।

उसने मुझे बताया कि एक एक्सीडेंट में उसके पति की मृत्यु हो गई और ससुराल वालों ने उसे मायके का रास्ता दिखा दिया। मैं सारा दिन उसके पास बैठी– बातें करती रही और झिझकते–झिझकते कह ही डाला...राजी जिन्दगी यहां रुक तो नहीं जाती...मैं तेरे घरवालों से बात करके समझाती हूं कि वे तुम्हारी खुशियों को लौटाने की कोशिश करें–।'

पर उसने मेरा बाजू पकड़ कर रोक लिया, नहीं, यह मुझ से नहीं होगा....मैंने सिर्फ उस से एक ही प्रश्न पूछा, ''प्लास्टिक की गुड़ियों का दिल होता है और खून और मांस वाली का नहीं?''

उसने मेरे प्रश्न का कोई जवाब नहीं दिया परन्तु शोख रंग उसके चेहरे पर साफ दिखाई देने लगा था।

लाल सिंह कलसी

रिटायर्ड आदमी

'ओह मीते, आज काम वाला लड़का नहीं आया, भैंस के लिए चारा ले आना खेत से...। मुझे दफ़्तर जाना पड़ेगा, मेरी सीट पर नये आए लड़कों को थोड़ा काम समझाना है...'' चलने से पहले हरपाल ने बड़े लड़के से कहा।

''बापू रिटायर तो हो गया है, पर अभी भी तेरे दफ़्तर के चक्कर खत्म नहीं हो रहे। अब तो रुक जाया कर घर पर...'' लड़के ने हां कहने की बजाय पिता पर ही सवाल किया।

''ओ सुक्खे, खेत से भैंस के लिए चारा ले आना। बापू कह कर गया है। आज छिन्दू नहीं आया..।'' मीते ने छोटे को देखते हुए घर के भीतर आते हुए ही आर्डर दे दिया।

''तू कहां पर चला है...सारा दिन घर में खाली डंडे बजाता रहता है...'' सुक्खे ने भी हां कहने की बजाय मीते को ही जवाब दे दिया।

''यार तो अब अखाड़ा देखने चले हैं जीऊण वाले। भोडू शाह की समाधि पर आज मेला है...तुझे क्या कीड़े पड़े हैं, हर समय मुंह में मना ही रखी हुई है।''

''तो भाई मैंने दुकान भी तो खोलनी है, यहां से यदि चार पैसे आएंगे तो ही घर का खर्च चलेगा....अब बापू की हर माह वाली नोटों की गड्डी नहीं आनी....और भाई साहब बता दूं, तुझे अब काम करना ही पड़ेगा.....।'' छोटे ने बड़े को समय की नजाकत से अवगत कराया।

''कोई नहीं दुकान पर कौन-सा भीड़ जुड़ी है...अगर आधा घंटा बंद रहेगी तो कोई आफत नहीं आने लगी। तुम चारा ले आना खेत जाकर...'' इतना कहते हुए मीते ने स्कूटर को किक मारी।

'ओ खसमां यह स्कूटर तो खड़ा रहने दे, मुझे बहुत से काम करने पड़ते हैं। अभी रात को तो ही पैट्रोल डलवाया था मैंने बापू से सौ रुपए लेकर।'

परन्तु मीता अनुसुना करते हुए स्कूटर भगा ले गया। शाम को जब हरपाल सिंह ने घर आकर देखा तो खुरली पर खड़ी भैंस संगली तुड़वा रही थी। जब चारे के बारे में पत्नी से पूछा तो वह बोली– ''लड़के तो अपने काम धंधों पर

गए हैं मीते के बापू, अब तू ही खेत जा आ साइकिल पर। खेत में भी चक्कर लग जाएगा और थोड़ी सैर भी हो जाऐगी। घर अब क्या तूने कपास बेलनी है....फालतू में ही बच्चो को बुरा भला कहेगा।''

''यह तो कमाल ही हो गया यारो....रिटायर क्या हुआ....चार दिनों में ही कैसे कबाड़ की भांति समझने लगे हैं सारे ....'' हरपाल सिंह बड़बड़ाता साइकिल को घसीटता खेत की ओर चल दिया।

अनुवादः ज. रा. कु.

वरियाम सिंह

काली धूप

तीखी दोपहर। किरणों के मुंह से बरस रही आग।

सवेरे सूरज चढ़ने से पहले ही, दोनों मां-बेटी खेत-खेत चलकर कनक के सिट्टे चुन रहीं थीं। सारे दिन की कमर तोड़ मेहनत। मुश्किल से रात के एक वक्त की रोटी।

बूढ़ी मां थककर एक खेत के किनारे छोटी-सी बेरी के नीचे बैठ गई थी। पर बेटी सिट्टे चुनती जा रही थी। चुनती जा रही थी। पसीना उसके सांवले रंग में घुलता जा रहा था।

दूर सड़क से उतरकर, पगडंडी पर, महलों वाले सरदारों की दोनों बेटियां शहर से पढ़कर लौट रही थीं। काली ऐनकें लगाए छाते ताने तंग वस्त्रों में उनके शरीर की गोलाइयां मछलियों की तरह मचल रही थीं। रूमाल से मुंह को हवा देतीं, आपस में बातें करतीं खिलखिला कर हंसती उसके पास से गुज़र गईं।

बेटी उन्हें जाते हुए कितनी देर पीछे से देखती रही। पसीना उसके सिर से पैरों तक चू रहा था। थकावटवश उसकी कमर में दर्द हो रहा था। भूख से पेट में बल पड़ रहे थे। बदन में मानो सूइयां चुभ रही हों।...उसे लगा जैसे वह अभी गिर पड़ेगी। जल्दी-जल्दी वह मां के पास बेरी के नीचे जाकर बैठ गई। बेरी के पत्तों से धूप छन-छनकर आ रही थी।

पैबन्द लगी सलवार को उसने घुटनों से ऊपर उठाया। फिर फटे दुपट्टे से पसीना पोंछा। उसके शरीर का अंग-अंग थकान में निदराया पड़ा था। उसके दिल ने चाहा कि छाया में लेट जाए। सो जाए.....सो जाए।

फिर पता नहीं महलों वालों की गांव में दाखिल हो रही लड़कियों की पीठ पर नज़र टिकाए उसे क्या खयाल आया। मां से पूछने लगी, ''मां, भला जवानी कब आया करती है?''

बूढ़ी मां ने धँसी आंखों से चेहरे को गहराई में देखा। फिर किसी दार्शनिक की तरह बोली, ''बेटी! जब बहुत हंसी आए, खिलखिला के....बिना किसी बात के।''

लड़की के बोलों में जैसे सारे जहान का दर्द इकट्ठा हो गया, ''हाय! हाय! मां, यह तो पिछले साल बहुत आई थी।'' हाथ में पकड़ा सिट्टा उसने उंगलियों में ज़ोर से मसल दिया।

दूर तक चारों ओर काली धूप धरती का बदन झुलस रही थी।

शरन मक्कड़

रिश्वतखोर

काफ़ी गर्मी थी। एक आदमी धूप में बैठा था। पास से गुज़रते मुसाफ़िर ने कहा, ''दस कदमों की दूरी पर पीपल का पेड़ है, जाकर छांव में बैठ जाओ।''

सुनकर धूप में बैठा हुआ वह सरकारी कर्मचारी बोला, ''बोल, छांव में बैठने का क्या देगा?''

श्याम सुन्दर अग्रवाल

राह में पड़ता गांव

साली साहिबां को उनका नया मकान ढूंढ़ने में परेशानी न हो, इसलिए देवेंद्र सुनीता को लेने के लिए दफ़्तर से सीधा ही बस-स्टैंड पहुँच गया। बस की प्रतीक्षा करता, वह सुनीता के बारे में ही सोचता रहा। बस आई, तो उससे उतर रही सवारियों को वह दूर से ही देखने लगा। लगभग पंद्रह-सोलह वर्ष के एक लड़के ने सहारा देकर एक वृद्धा को नीचे उतारा तो उसे अपनी मां याद आ गई।

मां गांव में रहती है, देवेंद्र के बड़े भाई के पास। थोड़ी-सी ज़मीन है। बड़ी गरीबी में दिन व्यतीत कर रहे हैं वे लोग। गांव से कई पत्र आ लिए मां की आंखों के बारे में– ''मोतिया उतर आया है आँखों में, ऑपरेशन जरूरी हो गया है।''

देवेंद्र ने एक भी पत्र का उत्तर नहीं दिया। नए घर का पता देने से तो पत्नी ने ही मना कर दिया था। उनका गांव यद्यपि उसकी ससुराल के राह में ही पड़ता है, तो भी ससुराल आते-जाते वहां कभी नहीं उतरा।

अंतिम सवारी के बस से उतर जाने के बाद भी सुनीता दिखाई नहीं दी। निराश होकर वह वापस मुड़ने के लिए मन बनाने लगा। तब तक लड़का वृद्ध औरत का हाथ थामे उसके काफी करीब आ गया था। उसने ध्यान से देखा तो हक्का-बक्का रह गया– वह मां ही थी।

इससे पहले कि वह नज़र बचाकर एक तरफ हो जाता, लड़का बोल पड़ा-''दादी, चाचा आया है लेने को।''

वृद्धा के झुर्रियों-भरे चेहरे पर मुस्कान आ गई, ''मैं न कहती थी, चिट्ठी डाली है, देबू जरूर आएगा लेने।''

खून का असर

मंगल दलित का कॉलेज पढ़ता लड़का नंबरदार की जवान बेटी जीती के साथ निकल गया। खबर फैली तो गांव में जैसे भूकंप आ गया।

''साले की हिम्मत तो देखो! भगाने को लड़की भी कौन सी ढूँढ़ी।''

''चाहे है तो कुजात, पर सुन्दर बहुत है।''

''गांव की आधी लड़कियां मरती हैं उस पर।''

जितने मुंह, उतनी बातें।

नंबरदार लड़के के घर पहुंचा। लड़के की मां को घूरते हुए बोला, ''लड़के को मेरे सामने पेश कर दे, अगर उसकी जान बचानी है तो। नहीं तो जहां मिल गया, साले कुत्ते को गोली से उड़ा दूंगा। तुझे पता है कुजात ने कितना बुरा काम किया है?''

चेहरे को थोड़ा-सा ढंकते हुए लड़के की मां बोली, ''सिरदार जी, काम तो उसने ज्यादा ही गलत किया है। पर उस बिचारे को पता ही न था कि जीती....''

''जीती क्या?''

''...कि जीती उसकी बहन लगती है।''

लाल-पीला हुआ नंबरदार उछल पड़ा, ''क्या कहती हो कुजात, तेरी जबान खींच लूंगा अगर फिर से कहा तो।''

''कुछ कर लो जी, बेटा तो वह तुम्हारा ही खून है, चाहे टिस्ट करा लो....हमारे गरीब दलतों के लड़कों में इतनी हिम्मत कहां।''

क्रोध में उबल रहा नंबरदार लड़के की मां के एक थप्पड़ मारने के सिवा कुछ न कर सका।

आदमी

''रुक जा, नहीं तो गोली सीने के पार हो जाएगी!'' गर्जती आवाज़ सुनकर साइकिल सवार भीतर तक कांप गया। उसके मस्तिष्क में पिछले दिनों हुए भयानक हत्याकांड की याद ताज़ा हो आई। घबराहट में वह साइकिल से नीचे गिर पड़ा।

''कौन है तू?'' प्रश्न गूँजा।

''आ....द....मी...'' उसके मुँह से बस इतना ही निकला।

जब तक टार्च जलाकर नौजवान उसके पास आए, वह बेहोश हो चुका था। कोशिश करने पर भी वह होश में न आया। आतंकवादी जानना चाहते थे कि वह किस धर्म का है—हिन्दू है या सिख? ताकि वे उस अनुसार ही अगली कार्यवाही कर सकें।

चेहरे पर कटी हुई दाढ़ी व सिर पर पगड़ी। उसके चेहरे-मोहरे से कुछ पता नहीं चल रहा था कि वह किस धर्म का है।

एक ने कहा, ''इसकी तलाशी लें, शायद कुछ पता चला जाए।''

बेहोश आदमी की जेब से दस रुपये के एक नोट व कुछ सिक्कों के सिवा कुछ न मिला। उसकी साइकिल पर टंगे थैले में से उसका राशन-कार्ड मिला।

टार्च की रोशनी में राशन कार्ड में दर्ज व्यक्तियों के नाम पढ़े गए।

भगवान सिंह	पुत्र	नानक चंद
केसरो	पत्नी	भगवान सिंह
रामचंद	पुत्र	भगवान सिंह
सुरजीत कौर	पत्नी	रामचंद

दोनों नौजवान आतंकवादियों के अब भी कुछ समझ नहीं आया। बेहोश आदमी को देखकर कभी उन्हें लगता कि वह हिन्दू है तथा कभी लगता है वह सिख है।

''अब क्या किया जाए?'' एक आंतकवादी ने दूसरे से पूछा।

''देखता क्या है, निकाल दे इसमें से तीन-चार गोलियाँ।'' दूसरा गर्म था।

''और अगर कहीं यह अपने ही धर्म का हुआ तो?''

''फिर क्या करें?''

''चल स्कूटर स्टार्ट कर, चलें। मुझे तो यूँ लगता है जैसे हम अंधेरे में भटक गए हैं।'' पहले ने स्कूटर की ओर जाते हुए कहा।

अपना-अपना दर्द

साठ वर्षीय मिस्टर खन्ना अपनी पत्नी के साथ बैठे जनवरी की गुनगुनी धूप का आनंद ले रहे थे। छत पर केवल पति-पत्नी ही थे, इसलिए मिसेज खन्ना ने अपनी टांगों को धूप लगवाने के लिए अपनी साड़ी को घुटनों तक ऊपर उठा लिया।

मिस्टर खन्ना की निगाह पत्नी की गोरी-गोरी पिंडलियों पर पड़ी तो वह बोले, ''तुम्हारी पिंडलियों का मांस काफी नर्म हो गया है। कितनी सुन्दर होती थीं ये!''

''अब तो घुटनों में भी बहुत दर्द रहने लगा है, कुछ इलाज करवाओ न।'' मिसेज खन्ना ने अपने घुटनों को हाथों से दबाते हुए कहा।

''धूप में बैठकर तेल की मालिश किया करो, इससे तुम्हारी टांगें सुंदर हो

जायेंगी।'' पति ने निगाह कुछ और ऊपर उठाते हुए कहा, ''तुम्हारे पेट की चमड़ी कितनी ढलक गयी है।''

''अब तो पेट में गैस बनने लगी है। कई बार तो सीने में बहुत जलन होती है।'' पत्नी ने डकार लेते हुए कहा।

''खाने-पीने में थोड़ा परहेज़ रखा करो और थोड़ी वर्जिश किया करो, देखो न तुम्हारा सीना कितना ढलक गया है।'' पति की निगाह ऊपर उठती हुई पत्नी के चेहरे पर पहुंची, ''तुम्हारे चेहरे पर कितनी झुर्रियाँ पड़ गयी हैं। आंखों के नीचे काले धब्बे बन गये हैं।''

''हां जी, अब तो नज़र भी बहुत कमज़ोर हो गयी है, परंतु तुम्हें तो कोई फिक्र ही नहीं।'' पत्नी ने शिकायत भरे लहजे में कहा।

''अजी फिक्र क्यों नहीं। ऐसा क्यों कहती हो मेरी जान। मैं जल्दी ही तुम्हें किसी बड़े अस्पताल में ले जाकर तुम्हारी प्लास्टिक-सर्जरी करवाऊँगा। फिर देखना तुम कितनी सुदंर और जवान लगोगी।'' कहकर मिस्टर खन्ना ने पत्नी को बाहों में भर लिया।

एक पवित्र लड़की

रंजना, उसकी प्रेयसी, उसकी मंगेतर दो दिन बाद आई थी। आते ही वह सिर झुकाकर कुर्सी पर बैठ गई। इस तरह चुपचाप बैठना उसके स्वभाव के विपरीत था।

''क्या बात है मेरी सरकार!'' कोई नाराजगी है?'' कहते हुए गौतम ने थोड़ा झुककर उसका चेहरा देखा तो आश्चर्यचकित रह गया। ऐसा बुझा हुआ और सूजी आंखों वाला चेहरा तो रंजना के सुंदर बदन पर पहले कभी नहीं देखा था। लगता था जैसे वह बहुत रोती रही हो।

''ये क्या सूरत बनाई है? कुछ तो बोलो?'' उसने रंजना की ठोड़ी को छुआ तो वह सिसक पड़ी।

''मैं लुट गई...एक दरिंदे रिश्तेदार ने ही लूट लिया...।'' रंजना फूट-फूटकर कर रो पड़ी, ''अब मैं पवित्र नहीं रही।''

एक क्षण के लिए गौतम स्तब्ध रह गया। क्या कहे? क्या करे? उसे कुछ समझ नहीं आ रहा था। रंजना का सिर सहलाता हुआ, वह उसके आंसू पोंछता रहा। रोना कम हुआ तो उसने पूछा, ''क्या उस वहशी दरिंदे ने तुम्हारा मन भी लूट लिया?''

‘‘मैं थूकती भी नहीं उस कुत्ते पर... !’’ सुबकती हुई रंजना क्रोध में उछल पड़ी। थोड़ी शांत हुई तो बोली, ‘‘मेरा मन तो तुम्हारे सिवा किसी और के बारे में सोच भी नहीं सकता।’’

गौतम रंजना की कुर्सी के पीछे खड़ा हो गया। उसने रंजना के चेहरे को अपने हाथों में ले लिया। झुककर रंजना के बालों को चूमते हुए वह बोला, ‘‘पवित्रता का संबंध तन से नहीं, मन से है रंजना। जब मेरी जान का मन इतना पवित्र है तो उसका सब-कुछ पवित्र है।’’

रंजना ने चेहरा ऊपर उठाकर गौतम की आंखों में देखा। वह कितनी ही देर तक उसकी प्यारभरी आंखों में झांकती रही। फिर वह कुर्सी से उठी और उसकी बांहों में समा गई।

श्याम सुन्दर दीप्ति

दिन–रात का फर्क

फोन की टर्न–टर्न सुन, उसने आँखें खोलीं। उसे लग रहा था, जैसे अभी ही करमू से बातें करके सोया हो। कौन होगा इतनी सुबह? उसने सोचते हुए फोन उठाया तो उसके कैनेडा वाले बेटे का फोन था।

हाँ! अभी–अभी काम से लौटा होगा, यहां दिन–रात का फर्क जो है। वह उठकर आराम से बात करने के लिए बैठ गया।

आंखों में अभी नींद थी और करमू से हुई बातचीत भी उसके दिमाग में हू–ब–हू घूम रही थी।

''यह तूने ठीक फैसला लिया भाई! हिम्मत तो जुटानी ही पड़ती है।'' करमू ने कहा था।

''हां करमू। पहले मुझे भी अजीब लग रहा था। पर बेटे ने कैनेडा की बातें सुनाकर कि बई, यहां तो पहले सभी काम में मस्त, फिर खाया–पीया और मौज। न लेनी न देनी।''

बापू ने फोन उठा लिया, ''हालो!'' कहकर गला साफ करते खूँ–खूँ किया।

''बापू! कैसे, ठीक तो है। आवाज़ बदली–सी लगती है।'' बेटे की आवाज़ थी।

''बेटा! यहां उठने का समय है, अभी उठा हूं, तूं बता। आज बड़ा सुबह–सवेरे फ़ोन कर दिया। सब खैरियत तो है।''

''यहां तो ठीक है, पर तुझे क्या हुआ है?'' बेटे ने रोष भरे लहजे में कहा।

''मुझे क्या होना है?'' बापू ने कहा और सोचने लगा, उनींदे में आवाज–सी कुछ ठीक न होने के कारण सोच रहा होगा। बापू ने आगे कहा, ''बस यूं ही, रात बड़े दिनों के बाद आ गया था तेरा करमू चाचा।''

''क्या सलाह दे गया फिर?'' बेटे की आवाज़ उसी लहजे की थी।

''कैसी सलाह?'' बापू को जैसे समझ ही न आ रही हो।

''चल छोड़! सुना है तू इस उम्र में हमारे लिए मां लेने चला है।''

बेटे की आवाज़ में अब कुछ अधिक ही तलखी थी।

उखड़ी हुई नींद में बोलते हुए को जैसे झटका लगा। यह किस तरह बोल रहा है? मैं तो इसके बारे में.....। मैं तो करमू से कह रहा था कि यह खबर सबसे पहले बेटे को सुनाऊँगा तो वह कितना खुश... इसे सारी जमीन जायदाद बेचकर भेजा। इसने सुध तो क्या लेनी थी, और अब....।

''क्या बात सुन्न हो गया।'' बेटे ने अपनी बात का जवाब न पाकर कहा।

वैसे बात सचमुच ही सुन्न करने वाली थी। बापू धीरे-धीरे फिर अपनी सुध में लौटा और सहज होते बोला, ''अब बेटा....उम्र ही...सेहत ही....और रात अंधेरे अकेले कुछ हो जाए, कोई आवाज़ सुनने वाला,'' वह अटक - अटक कर बोल रहा था।

इससे पहले कि बापू कुछ और आगे कहता कि... तुम्हारा सहारा तो रहा नहीं, बेटे ने फिर फटकारा, ''यहां पता नहीं कितने फोन आ गए। तूने तो यहीं कैनेडा बना लिया।''

अब बापू से भी न रहा गया। उसने भी हिम्मत जुटाई और बोला, ''और तू भी सुन ले। मैंने बहुत जी लिया तेरे लिए। सुन रहा है। अब मैंने तेरे लिए मरना नहीं। समझा। और बाकी ध्यान से सुन कि मैंने तुझे कहा भी नहीं कि मैं तेरे लिए मां ला रहा हूँ।''

और फोन बंद कर, बिस्तर पर गिर पड़ा।

रिश्ता

'मोगा से रास्ते की सवारी कोई न हो, एक बार फिर देख लो।' कहकर रामसिंह ने सीटी बजाई और बस अपने रास्ते पड़ गई।

बस में बैठे निहाल सिंह ने अपना गांव नजदीक आते देख, सीट छोड़ी और ड्राइवर के पास जाकर धीमे से बोला, ''डरैवर साब जी, जरा नहर के पुल पर थोड़ा-सा ब्रेक पर पांव रखना।''

''क्या बात है? कंडक्टर की बात नहीं सुनी थी?'' ड्राइवर ने खीझकर कहा।

''अरे भई, जरा जल्दी थी। भाई बनकर ही सही। देख, तू भी जाट और मैं भी जाट। बस जरा-सा रोक देना।'' निहाल सिंह ने गुजारिश की।

ड्राइवर ने निहाल सिंह को देखा और फिर उसने भी धीमे से कहा, ''मैं कोई जाट-जुट नहीं, मैं तो मजबी हूं।

निहाले ने जरा रुककर फिर कहा, ''तो क्या हुआ? सिक्ख भाई हैं हम,

वीर बन कर रोक दे।''

ड्राइवर इस बार जरा-सा मुस्कुराया और बोला, ''मैं सिक्ख भी नहीं हूं, सच पूछे तो।''

''तुम तो यूं -ही मीन-मेख में पड़ गए हो। आदमी ही आदमी की दवा होता है। इससे बड़ा भी कुछ है?''

जब निहाले ने इतना कहा तो ड्राइवर ने खूब गौर से उसको देखा और ब्रेक लगा दी।

''क्या हुआ?'' कंडक्टर चिल्लाया, ''मैंने पहले नहीं कहा था? किसलिए रोक दी?'

''कोई नहीं, कोई नहीं। एक नया रिश्ता निकल आया था।'' ड्राइवर ने कहा और निहाल सिंह तब तक नीचे उतर गया था।

हिम्मत

सुबह स्कूल जाने का समय गुजरता जा रहा था और बीरे को इधर-उधर टहलत देख, उसके पिता ने कहा, ''क्या बात है! आज तैयार नहीं हो रहा, स्कूल नहीं जाना क्या?''

बीरे ने पिता की तरफ देखा, पर चुप रहा।

''क्यों! तबीयत तो ठीक है?'' कहता वह बीरे के पास आ गया और उसके मुरझाए चेहरे पर, माथे पर हाथ रखकर देखने लगा कि कहीं बुखार तो नहीं।

''बोलता नहीं बेटे! क्या हुआ?''

''नही बापू, कुछ नहीं। बस यूं ही। मैंने स्कूल नहीं जाना।''

''वो तो दिख रहा है, पर बात क्या है?''

''बापू! मुझे दिहाड़ी पर अपने साथ ले जाना।'' बीरे ने पिता के चेहरे की तरफ निहारते हुए कहा।

''पर बेटा हुआ क्या?'' उसने चिन्तित होते हुए कहा।

''बस बापू! मास्टर बहुत बेइज्जत करते हैं, फिर बाद में बच्चे भी छेड़ने लग जाते हैं।''

पिता समझ गया कि मजहबी होने के कारण, उसे क्या-कुछ सुनना पड़ता होगा। उसने स्वयं अपने साथ ऐसा सब होते देखा व अनुभव किया था।

''मैंने तो बेटा तुझे कई बार कहा कि तुझे जोड़ना-घटाना आ गया है, गुजारे लायक पढ़ भी लेता है। चल छोड़! तू ही जिद करता था। इन्होंने तो यूं

ही बोलते रहना है। हमने अब कौन–सा डी.सी. लगना है। जो नसीब में लिखा है.... ।'' बापू ने कहते हुए, हिम्मत बंधाते उसे अपनी छाती से लगा लिया।

वह बाहर आ कर टहलने लगा तो वहां से नीवीं पत्ती का, उसका सहपाठी, छिन्दा स्कूल जाता मिल गया।

''क्यों बीरे! आज स्कूल नहीं जाना?''

''नहीं यार!'' बीरे ने इतना ही जवाब दिया।

''क्यों! मास्टर वेद प्रकाश का होमवर्क नहीं किया! डरता है पिटाई से!'' छिन्दे ने हंसते हुए कहा।

''मार से क्या डरना, तू भी जानता है।'' बीरा निराश–सी आवाज़ में बोला।

''वो तो मैं मजाक कर रहा था। फिर भी, कोई खास बात है।'' छिन्दे ने गंभीर होते पूछा।

''बापू ने यह भी कहा बीरे। एक लम्बे समय तक, सैकड़ों–हज़ारों ही कह लो, यह सब सहा है, अब थोड़ा समय और बर्दाश्त करो। बापू ने कहा, तुम्हें अवसर मिला है। थोड़ी हिम्मत करो। अगर, अब भी बीच में छोड़ दिया, तो इसका अंत नहीं होगा।'' छिन्दे ने बीरे की आंखों से आंखें मिलाते, मुस्कुराकर कहा, ''चल आ जा चलें।''

बीज

कश्मीर सिंह अपने बेटे का मैडीकल करवाने सिविल सर्जन के दफ़्तर आ पहुंचा था। घर से चलने से पहले, उसने दोस्त सुरजन सिंह को भी संदेशा भेज दिया था और वह भी मिल गया था।

कश्मीर सिंह अपने एस.डी.ओ. सिलैक्ट हुए बेटे दिलदार को मैडीकल बोर्ड की तरफ़ भेज, सुरजन सिंह के साथ चाय पीने चला गया।

''तेरी तो जिंदगी सुधर गई कश्मीरे भाई।'' सुरजन ने कहा।

''हां, वाहगुरु की मेहर हो गई, सच्चे पातशाह की।''

''बहुत मुश्किल है आजकल के जमाने में क्लास–वन गजटेड–पोस्ट मिलनी।''

''मैं तो कई बार सोचता हूं, सुरजन सियां, पता नहीं वाहगुरु का देना कैसे मोड़ेंगे। आज, घोर कलयुग के जमाने में, बिना पैसा–धेला खर्च किए, आसमान पर पहुंचा दिया।'' कश्मीर सिंह जैसे रब्ब की मेहर के आगे झुका जा रहा था।

''वाहगुरु का शुक्र है ही, पर लड़का भी तो लायक है अपना।''

''इसमें कोई झूठ नहीं, कॉलेज का बैस्ट एथलीट और बेस्ट ग्रेजुएट।'' बात बताते कश्मीर सिंह का रंग लाल सुर्ख हो गया था।

इसी तरह बातें करते, हंसते-मुस्कुराते, वापिस मैडीकल बोर्ड के कमरे के सामने आ खड़े हुए। कश्मीर सिंह कह रहा था, ''भई! मैं तो अरदास करता हूं कि वाहेगुरु सभी के घर बढ़िया पौधे ही लगाए।''

कश्मीर सिंह का हंसता चेहरा तब पीला पड़ गया, जब दिलदार ने डॉक्टर की रिपोर्ट बताई कि ब्लड प्रैशर ज्यादा है। कश्मीर सिंह को एकदम गुस्सा आ गया, ''ब्लड प्रैशर ज्यादा है! बेस्ट एथलीट और कह दिया कि ब्लड प्रैशर ज्यादा है....।''

यह सिविल सर्जन के स्टैनो के पास गया जो कि उसके गांव का था।

''कोई न भाई साब! घबराने की कोई बात नहीं। यह कोई बड़ा नुक्स नहीं है। मैं करता हूं बात। लालची है जरा-सा डॉक्टर, और कुछ नहीं।''

स्टैनो डॉक्टर से मिलने चला गया। सुरजन ने आकर पूछा, ''क्या कहता है?''

''कहता है लालची है डॉक्टर, इसलिए ब्लड प्रैशर बढ़ा दिया साले ने....''

''चल छोड़। ये इस तरह ही करते हैं। पांच-चार सौ रुपये मांगता होगा और क्या। मार मुंह पर!'' सुरजन ने कहा।

''पांच-चार सौ की बात नहीं सुरजन सियां! बात यह है कि इसने दिलदार के दिल में बीज गलत वो दिया है और कुछ नहीं।''

सत्यपाल खुल्लर

कलाकृति

रेलवे स्टेशन के विश्रामघर के बाहर बने चबूतरे पर उसे न देख, वह घबरा-सा गया। अभी कल तो वह यहीं था।

पिछले कई महीनों से वह इस दरवेश भिखारी को देख रहा था। वह पहली गाड़ी से अपनी ड्यूटी पर जाता है। वह एक चित्रकार है और अपने रंग तथा ब्रश साथ ही रखता है।

वह भिखारी किसी से कुछ मांगता नहीं। बस जो मिल जाए, वही रख लेता है। आलसी-सा, न नहाने की इच्छा, न दातुन-कुल्ला करने का मन। सदा मिट्टी से सना रहता है। आने-जाने वालों की ओर हसरत भरी नज़रों से देखता। नैन-नक्श सुंदर, आंखों में अजीब-सी चमक। पता नहीं, क्यों वह ज़िंदगी से हार मान बैठा। चित्रकार उसे रोज़ देखता। उसके मन में उसका चित्र बनाने की इच्छा थी। कल उसे समय मिल गया। गाड़ी आधा घंटा लेट थी। वह उसके नज़दीक एक बैंच पर बैठ गया और उसकी तरफ़ देखकर ब्रश चलाने लगा।

चित्रकार को बार-बार अपनी ओर झांकता देख, भिखारी झुँझला गया, ''क्या करते हो?'' मेरे को ऐसे क्यों घूरते हो?''

''कुछ नहीं, कुछ नहीं...बस...''

पंद्रह मिनट में ही चित्र तैयार कर चित्रकार ने उसे दिखाया तो वह बोला, ''यह कौन है?''

''यह तुम हो। तुम्हारा ही चित्र है यह... तुम्हारी फोटो।''

''मैं इतना सुंदर!'' वह चाव से उठ बैठा।

''हाँ, तुम तो इससे भी सुंदर हो... बहुत सुंदर।''

और आज भिखारी को वहाँ न देख, चित्रकार ने उसके बारे में स्टेशन मास्टर से पूछा।

''कल आपके जाने के बाद वह नल के नीचे नहाकर मेरे पास आया था। मैंने अपना पुराना सूट उसे पहनने को दे दिया। सूट पहन कर वह बहुत खुश हुआ।''

''पर वह गया कहाँ?''

''वह देखो, स्टेशन पर नया फर्श लग रहा है। वह वहीं मज़दूरी कर रहा है।''

चित्रकार ने उधर अपनी जीती-जागती कलाकृति की तरफ देखा और मुस्करा दिया।

बंधन

आज सगाई का दिन है। होने वाले दोनों समधी घनिष्ठ मित्र हैं। उनकी मित्रता को सारा शहर जानता है।

''मित्रता हो तो इन जैसी, नहीं तो बिना मित्र ही भले।'' कोई कहता।

''मित्र तो लगते ही नहीं, यूँ लगता है जैसे सगे भाई हों!'' कोई अन्य कहता- ''वे सदा गले लग कर मिलते हैं।''

पिछले दिनों जब ये मित्र मिले तो एक ने कहा, ''यार, क्यों न हम अपनी मित्रता को रिश्ते में बदल लें।''

''तुमने तो मेरे दिल की बात कह दी।'' दूसरे ने खुश होकर कहा था। और फिर रिश्ते की बात पक्की हो गई।

''आज उन्होंने आना है और आप अभी तक उठे ही नहीं।'' बिस्तर पर लेटे पति से पहले मित्र की पत्नी ने कहा।

''फिर क्या हुआ, मेरा मित्र ही तो है!'' वह आँखों को मसलता हुआ उठ कर बैठ गया।

''पहले बात और थी, अब हम लड़की वाले हैं।'' पत्नी ने सिर पर लिया दुपट्टा ठीक करते हुए कहा।

''ठीक है, मैं तैयार होता हूँ, तुम बेटे को बाज़ार से सामान लाने के लिए भेजो।''

''यह क्या पहन लिया, कोई ढंग का सूट पहनो।'' उधर दूसरे की पत्नी ने अपनी रेशमी साड़ी का पल्ला लहराते हुए पति से कहा।

''वे कौनसा हमें भूले हैं, सब जानते हैं, फिर सूट का क्या है!''

''अब पहले वाली बात नहीं रही। हम लड़के वाले हैं।''

''ठीक है, ठीक है।'' वह मूँछों को उमेठता हुआ बोला।

शगुन-व्यवहार की रस्मों के पश्चात् विदा होते वक्त दोनों मित्र गले मिले। दोनों को लगा कि उनकी जफ्फी (मिलनी) में पहले जैसी गर्मजोशी नहीं रही।

विभाजन

वह बहुत दु:खी होता, जब उसका सात साल का बेटा उसके भाई के बेटे के साथ खेलता–खेलता लड़ पड़ता। घर में क्लेश हो जाता। आंगन एक होने की वजह से बच्चे दिन में कई बार लड़ते। वह बच्चे को घूरता, मारता–पीटता थक जाता।

एक दिन तो उसके गुस्से की हद हो गईं। उसने अपने बच्चे को बहुत मारा। बच्चा दहल गया और रोते–रोते सो गया। उस शाम उसने आंगन में दीवार करवा दी। यह सोचा कि रोज का क्लेश खत्म हुआ। वह उस रात इत्मीनान से सोया।

अगले दिन जब वह दफ्तर से लौटा तो बच्चे फिर गली में लड़ रहे थे। उसकी आंखों में खून उतर आया। उसे देख उसका बच्चा डर गया और ऊंची आवाज़ में बोलता हुआ बाप की टांगों से लिपट गया, ''डैडी, यहां दीवार न करना। डैडी , यहां दीवार न करना।''

बाप की आंखों में आंसू थे।

सतीशराज पुष्करणा

मन के साँप

आज रात खाना खाने के बाद उसका मन कैसा–कैसा तो होने लगा। वह मन–ही–मन बड़बड़ाया, ''ये पत्नी भी अजीब है, मायके गई, तो गई। आज सप्ताह होने को आया, उसे इतना भी ध्यान नहीं कि पति की रातें कैसे कटती होंगी।'' वह आकर अपने बिछावन पर लेट गया। नींद तो जैसे उसकी आँखों से उड़ चुकी थी। आज टी.वी. देखने को भी उसका मन नहीं हो रहा था। उसे ध्यान आया कि आज ऑफिस में मिसेज सिन्हा कितनी खूबसूरत लग रही थी। कितनी सुन्दर साड़ी बाँध रखी थी। साड़ी बाँधने का अन्दाज भी गजब का था। क्या हँस–हँसकर बातें कर रही थी। इस स्मरण ने उसे बेचैन–सा कर दिया। उसे अपनी पत्नी पर क्रोध आने लगा, ''यह भी कोई तरीका है! शादी के बाद औरत को अपने घर का ध्यान होना चाहिए।''

वह जैसे–जैसे सोने का प्रयास करता, नींद उसकी आँखों से वैसे–वैसे दूर भागती जाती। इतने में उसकी दृष्टि सामने अलगनी पर जा टिकी, जहाँ उसकी पत्नी की साड़ी लापरवाही से लटकी हुई थी। उसे लगा, जैसे उसकी पत्नी खड़ी मुस्करा रही है। वह उठा और अलगनी से उस साड़ी को उठा लाया और उसे सीने से लगा लिया। फिर एकाएक उसे चूम लिया। उसे लगा, जैसे यह साड़ी नहीं, उसकी पत्नी है। उसने साड़ी को बहुत प्रेम से सरियाया और तह लगाकर अपने तकिए की बगल में रख लिया।

''मालिक! और कोई काम हो, तो बता दीजिए, फिर मैं सोने जाऊँगी।'' अपनी युवा नौकरानी के स्वर से वह चौंक उठा। उसने चोर–दृष्टि से उसके यौवन को पहली बार भरपूर दृष्टि से देखा तो वह दंग रह गया। आज वह उसे बहुत सुन्दर लग रही थी। उसे देखकर फिर न जाने उसका मन कैसा–कैसा तो होने लगा। अभी वह कामुक हो ही रहा था कि नौकरानी ने पुनः पूछा, ''मालिक! बता दीजिए न!''

''तुम ऐसा करो, तुम कहाँ उधर दूसरे कमरे में सोने जाओगी। यहीं इस कमरे में सो जाओ। न जाने कोई काम याद आ ही जाए। जरूरत पड़ने पर तुम्हें जगा दूँगा! हाँ! पीने के लिए पानी का एक जग और एक गिलास जरूर रख

लेना। फिलहाल तो कोई काम याद नहीं आ रहा है।''

''जी अच्छा!''

आज नींद उसकी आँखों से दूर है। कभी पत्नी का खयाल, कभी मिसेज सिन्हा का ध्यान तो कभी नौकरानी के यौवन का नशा। उसने अपने को बहलाने के विचार से एक पत्रिका सामने अलमारी से निकाली। उसे पढ़ने में मन तो नहीं लगा, बस यों ही उलटने-पलटने लगा। पत्रिका के मध्य में उसे किसी सिने तारिका का 'ब्लोअप' नजर आया। उसकी दृष्टि रुक गई। उसे लगा, वह सिने तारिका हरकत करने लगी है। उसने उस 'ब्लोअप' का स्पर्श किया तो यथार्थ के धरातल पर आ गया। उसने पत्रिका बन्द करके एक तरफ रख दी।

वह पानी पीने के विचार से उठा। उसने देखा, उसकी नौकरानी उसकी नीयत से बेखबर गहरी नींद में सोई हुई है। उसकी आती-जाती साँसों से हिलता उसका बदन उसे बहुत भला लगने लगा। उसका मासूम चेहरा! उसे लगा कि वह उसे चूम ले, किन्तु किसी अज्ञात भय से वह पीछे हट गया। वह सोचने लगा, वह समाज का प्रतिष्ठित व्यक्ति है। कार्यालय में भी उसको आदर की दृष्टि से देखा जाता है। बाहरी आडम्बरों ने उसके मन को दबाया, किन्तु फिर मन था कि उसी ओर बढ़ा। तभी एकाएक उसे अपनी पत्नी की आकृति उभरती दिखाई दी। उसकी पत्नी के चेहरे पर मुस्कराहट के स्थान पर घृणा के भाव थे। वह सिहर गया। पुनः अपने पलंग पर लौट आया। नौकरानी को आवाज दी और पानी का गिलास देने को कहा।

उसने पानी पीकर कहा, ''देखो! अब मुझे कोई काम नहीं है। तुम वहीं बगल के कमरे में जाकर सो जाओ। अन्दर कमरा जरूर बन्द कर लेना।'' यह कहकर वह बाथरूम की ओर बढ़ गया। बाथरूम में लटका पत्नी का गाउन देख उसे लगा, पत्नी अब मुस्करा रही है और वह इस अर्द्धरात्रि में स्नान करने लगा।

झूठा अहम्

आज पति-पत्नी एक-दूसरे से रुष्ट हैं। बात कोई विशेष नहीं थी। रामानन्दजी अपने साहित्यिक मित्रों के मध्य बैठे बातचीत में खोए थे और उनकी पत्नी सुशीला देवी पर्दे की ओट से बार-बार संकेत से उन्हें बुला रही थी। रामानन्द देख रहे थे, किन्तु बातचीत एवं उसका विषय कुछ इस प्रकार चल रहा था कि वे उसको बीच में छोड़कर जाना साहित्यिक गोष्ठी एवं मित्रों का अपमान एवं

मर्यादा का उल्लंघन समझ रहे थे। यह उचित भी था। बस, पत्नी ने इसे अपना अपमान एवं प्रतिष्ठा का प्रश्न समझ लिया।

मित्रों के जाते ही वह कमरे में गए और बोले, ''तुम शायद कुछ कह रही थीं!''

सुशीला देवी इतने क्रोध में थी कि कोई उत्तर न दिया। हाव-भाव देखकर रामानन्दजी समझ गए कि आज कैकेयी कोपभवन में है।

अपराधबोध महसूस करते हुए उन्होंने पुनः कहा, ''देखो! तुम्हारी नाराजगी वाजिब हो सकती है, किन्तु मेरी स्थिति एवं विवशता को भी तो समझने की चेष्टा करो। पत्नी होने के नाते ये सब तुम महसूस नहीं करोगी तो कौन करेगा?''

सुशीला देवी ने पति की ओर ऐसे देखा कि यदि उसका वश चले तो शायद उन्हें सूली पर चढ़ा देती।

''अरे भाई! अब गुस्सा थूक भी दो! जो हुआ, सो हुआ।'' आपस में कड़वाहट न बढ़े, यह विचार करके उन्होंने समर्पण करते हुए कहा, ''अच्छा बाबा! अब जाने भी दो, भविष्य में ध्यान रखूँगा, तुम्हारी भावनाओं एवं अहम् को चोट न लगे। अब तो बोलो, कुछ तो बोलो। वह बात तो मुझे बताओ जिसके लिए तुम इतनी नाराज हो गई!''

किन्तु सुशीला देवी न मानी। वह शायद थोड़ी खुशामद और चाहती थी और मन में सोच रही थी कि एक-दो बार मान-मुनव्वल और हो, तो थोड़ा कह-सुनकर नॉर्मल हो जाऊँ। किन्तु रामानन्द आखिर पुरुष थे, साहित्यकार थे। उनका अहम् भी जाग उठा और उन्होंने भी कसम खा ली कि जब तक सुशीला को अपनी भूल का अहसास नहीं हो जाएगा, वह भी बात नहीं करेंगे।

अब स्थिति बड़ी विचित्र थी। घर में केवल दो प्राणी, पति और पत्नी। बीच-बचाव की कोई गुंजाइश नहीं। पत्नी प्रतीक्षा में रही, जब उन्हें भूख लगेगी या चाय की तलब होगी, तो बोलेंगे ही। आज तो बाहर दुकानें भी बन्द हैं। रविवार है न! पत्नी यह सब सोचकर अपने आपमें सन्तुष्ट एवं प्रसन्न है।

रामानन्दजी को भूख बहुत जोर से लगी है। सोचते हैं कि एक तो गोष्ठी में इतना बोलना पड़ा कि थकान हो गई और अब भूख भी कसकर लगी है। वह उठे और उन्होंने एक गिलास भरकर पानी पी लिया। मगर फिर भी मन में कई प्रकार की अजीब-सी बेचैनियाँ हैं, जिन्हें स्पष्ट तौर पर स्वयं वह भी नहीं समझ पा रहे हैं।

उधर पत्नी ने भोजन बनाना आरम्भ कर दिया है। रसोई में हल्के-हल्के

गैस का चूल्हा जलने का स्वर, कुछ बर्तनों की खटपटाहट सुनाई पड़ी। बर्तनों की खटखट से उनके साहित्यिक मन ने उन्हें समझाया, भाई! जहाँ दो बर्तन होते हैं, खटपट तो होती ही है। किन्तु अगले ही क्षण उनका पुरुष-मन फुफकार उठा, ''मैंने तो सद्प्रयास किया ही था, मगर उसी ने मेरी भावनाओं पर तुषारापात कर दिया।''

रसोई से आती सब्जी बनने की सुगन्ध, फिर रोटियों की सौंधी-सौंधी खुशबू। मिला-जुलाकर स्थिति यह थी कि भूख बढ़ती ही जा रही थी। साहित्यिक मन कहता कि छोड़ो! जीवनसंगिनी है। आपस में क्या मान और क्या स्वाभिमान! किन्तु पौरुष है कि समझौते के निकट ही नहीं जाते देता।

सुशीला देवी पति के मनोभावों को समझ रही है और इस प्रतीक्षा में है कि वह बस एक बार बोल दें, तो सारी बात समाप्त।

अब खाना तैयार है। वह परोस रही है। पति का चेहरा इस समय उसे बहुत बेचारा-सा लग रहा है। ऐसा चेहरा देखकर उसके मन में ऐसा प्यार उमड़ रहा है, जो एक बेटे के लिए माँ के मन में उमड़ता है। पत्नी भी तो एक तरह से माँ ही होती है। बस एक ही तो अन्तर.... स्त्री किसी भी भूमिका में हो, मूलत: वह माँ ही होती है।

रामानन्द परोसे जा रहे खाने को इस प्रकार देख रहे हैं कि मन बार-बार ललचा रहा है। उन्हें लगता है कि उनका पुरुष-मन पराजित हो जाएगा। वह अपने को नियंत्रित किए हुए हैं, किन्तु उन्हें बार-बार लगता है कि मन उनके नियन्त्रण से बाहर होता जा रहा है और अब वह समर्पण कर ही देगा।

पत्नी ने टेबल पर खाना लगाते हुए ममता भरी दृष्टि से पति की ओर देखा और कहा, ''आइए! खाना खा लीजिए।''

रामानन्द बाबू थोड़ा इतराते हुए बोले, ''नहीं! मुझे भूख नहीं है।''

''वह तो मैं समझ ही रही हूँ। किन्तु फिर भी मेरी खुशी के लिए खा लीजिए!''

रामानन्द बाबू भीतर तक भीग गए और झटपट खाने की टेबल की ओर बढ़ गए।

जमीन से जुड़कर

तीनों मित्र घूमते-घूमते शहर से काफी दूर निकल आए। गर्मी भयंकर, सूर्य सिर पर आ खड़ा हुआ था। विद्यार्थी जात, तीनों की जेबें खाली। प्यास से कण्ठ सूखने लगे। बेचैनी बढ़ने लगी। दूर-दूर तक पानी का साधन दिखाई

नहीं दिया। क्या किया जाए? इसी ऊहापोह में थे कि उनकी दृष्टि कुछ दूर एक गाँव पर पड़ी।

एक मित्र ने उधर कदम बढ़ाते हुए कहा, ''चलो! इस गाँव में पानी पिया जाए।''

उधर बढ़ते हुए दूसरा बोला, ''पता नहीं, पानी कैसा होगा?''

तीनों इसी गुत्थी में उलझे-सुलझे उस गाँव में पहुँच गए। वहाँ एक पाकड़ का पेड़ था। वहाँ एक व्यक्ति ने, जो चेहरे से किसान लगता था, कहा, ''आओ, बाबू बैठो! किसे ढूँढते हो?''

खड़ी बोली सुनकर उन्हें बड़ा कौतूहल हुआ। मन में सोचने लगे, पढ़ा-लिखा होकर भी इस वेश-भूषा में!

''भाई! आपको किसके यहाँ जाना है?'' किसान ने पुनः प्रश्न दोहराया।

''जी प्यास लगी है, पानी पीना चाहते हैं।''

''आइए बैठिए, मैं पानी लाता हूँ।'' इतना कहकर वह पानी लाने चला गया।

''यार! ये तो पढ़ा-लिखा लगता है। हैरानी है कि पढ़ा-लिखा होकर भी खेती करता है, कमाल है।'' एक मित्र बोला।

दूसरा कुछ कहना ही चाहता था कि किसान पानी व गुड़ लेकर चला आया। तीनों ने गुड़ खाकर पानी पिया।

एक ने पूछा, ''आप पढ़े-लिखे मालूम होते हैं, और खेती करते हैं?''

''हाँ, अच्छी फसल हेतु पढ़ा-लिखा होना जरूरी है।.... मैंने कृषि में ही एम.एस-सी. किया है। अपनी परम्परा से जुड़कर अपना काम करना अच्छा लगता है। जानकारी होने के कारण कम भूमि और कम परिश्रम में ही अच्छा काम हो जाता है। और आप लोग?''

''हम लोग तो अभी बी.ए. कर रहे हैं।''

''भोजन भी तैयार है, करके जाएँ तो प्रसन्नता होगी।''

''नहीं! देर हो गई है, घर के लोग इन्तजार कर रहे होंगे।''

तीनों आश्चर्यमिश्रित प्रसन्नता का भाव लिए लौट पड़े। रास्ते में तीनों अपने-अपने भविष्य के विषय में ही सोच रहे थे। एक तो उस किसान से इतना प्रभावित था कि उसने कहा, ''मुझे तो जीवन का लक्ष्य प्राप्त हो गया।''

''क्या?''

''सहज रूप में कहीं ढंग की नौकरी मिली तो ठीक, वरना गाँव जाकर अपनी परम्परा से जुड़ूँगा।''

सुखचरण सिंह सिद्धू

होठो के निशान

स्कूल का मेन गेट पार कर जब मैं पाचवीं कक्षा के कमरे में जाने लगा तो अचानक मेरी नजर तीसरी कक्षा में पढ़ते समीर पर पड़ी जो दीवार पर होठों के निशान बना रहा था।

मैं उसकी हरकतों को देखने के लिए वहीं पर खड़ा हो गया। मैं सोच रहा था कि ऐसा करते हुए कहीं वह अपना मिट्टी खाने का शौक तो पूरा नहीं कर रहा। उसको मेरे खड़े होने का ज़रा-सा-भी आभास न था।

जब मुझ से रहा न गया तो मैंने उससे पूछ ही लिया,''समीर क्या कर रहा है?''

उसने घबरा कर उत्तर दिया, ''कुछ नहीं सर।''

''दीवार से मिट्टी खा रहा है!'' मैंने थोड़ा गुस्से से पूछा।

उसने मुँह खोल दिया। मुँह खाली था। बिल्कुल साफ-स्वच्छ।

''फिर यह दीवार पर होंठो के निशान क्यों डाल रहा है।'' मैंने बात की तह तक जाने के लिए पूछा।

''जी मैं होठों के निशान बनाना सीख रहा हूँ।''

उसने बड़े गर्व के साथ कहा।

''तुझे इस की क्या ज़रूरत है?'' मैंने उसका सिर पलोसते हुए कहा।

''जी जब मेरे पापा घर से बाहर जाते हैं, तो मेरी मम्मी उनकी कमीज पर हल्के से रंग के दो होंठों के निशान बना देती है।''

''अच्छा'' मैंने कहा।

''साथ में मम्मी कहती है देखो जी जब आपको मेरी याद आए तो इन होठों के निशानों को देख लेना। तुम्हार मन ठीक हो जाएगा।'' उसने बड़ी हिम्मत से उत्तर दिया।

''अच्छा, और।'' मैंने उसकी पीठ थपथपाई।

''जी जब मैं बड़ा होकर, पढ़ कर, बाहर नौकरी करूंगा, तो मैं भी अपनी मम्मी की कमीज पर होठों के निशान बना कर जाया करूंगा ताकि वह खुश होकर काम करती रहे।''

इतना कह कर वह कक्षा की तरफ भाग गया।

सुखचैन थांदेवाला

प्रताप

''बाबे निम्मे ने फिर हँसी-खुशी मना लिया कल रविदास का जन्मदिन?'' गली में आ रहे नंबरदार ने अपने घर के आगे बैठे निम्मे मोची को सरसरी तौर पर पूछा।

नाम तो उसका निर्मल सिंह था, पर गाँव वाले उसे निम्मा कहकर बुलाते थे और पीठ पीछे ''निम्मा मोची'' कहते थे। निम्मा पहले जमींदारों के मज़दूर के तौर पर सारे गाँव के जूते गाँठने का काम करता था। अब उसके बेटे और पोते ने बस-अड्डे पर जूतों की दुकान कर ली थी। निम्मा होश सँभालने के समय से ही अमृतधारी सिक्ख था। अब उसके पास कोई काम न था। वह अक्सर चौपाल पर गुरु-ज्ञान की बातें करने में लगा रहता। वह प्रत्येक वर्ष गुरु रविदास के जन्मदिन पर अपने घर गुरु-ग्रंथ-साहिब के सहज-पाठ का भोग डालता था।

''नंबरदार! हम जैसे गरीब भला क्या मनाएँगे बाबे का जन्मदिन! बेटे ने ऐसे ही मुझसे बाहर हो कार्ड बाँट दिए नगर में। कहता, पुण्य-दान हो जाएगा। लंगर भी बहुत बना लिया, पर लोग नहीं आए। फिर अड्डे पर बसें रोक-रोक कर खिलाया लोगों को। देग (प्रसाद का हलवा) फिर भी बच गई। उसे जल-प्रवाह कर के आया सुबह। क्या बात, इस बार तो तू भी नहीं आया, नंबरदार?'' निम्मे ने उलाहना दे अपनी सारी व्यथा सुनाई।

''बाबा, मेरे तो रिश्तेदारी में मौत हो गई थी, संस्कार पर गया था, नहीं तो मैं ज़रूर आता भोग पर।'' नंबरदार अपना स्पष्टीकरण दे, फिर बोला-''बाबा, आज कनेडा वालों के बुजुर्ग की बरसी पर नहीं जाना तुमने?''

''हाँ, मुझे भी जाना है, तैयार हूँ,'' निम्मे ने अँगोछा कंधे पर रखा और उठते हुए कहा- ''नंबरदार, हम तो सारे नगर के साँझे आदमी हैं।''

कनेडा वालों के पटरी-फेर इलाके से बहुत लोग पहुँचे हुए थे। कोठी के सामने का खुला मैदान कारों, जीपों व स्कूटरों से भरा पड़ा था। रंग-बिरंगे शामियाने लगे हुए थे। श्री गुरु ग्रंथ साहिब की हजूरी में पंडाल संगत से खचाखच भरा हुआ था। माथा टेकने वालों की कतार लगी हुई थी। प्रसिद्ध

रागी–जत्थे कीर्तन कर रहे थे। कनेडा वाला सरदार शाही लिबास में संगत के बीच विराजमान था।

निम्मा कतार में खड़ा, कल अपने घर पड़े भोग और आज पड़ रहे भोग में फर्क के बारे सोचने लगा। सारी संगत तब हैरान रह गई, जब निम्मे ने गुरु ग्रंथ साहिब को माथा टेक कर फिर कनेडा वाले सरदार को जा माथा टेका। सरदार ने दोनों हाथों से उसे रोकते हुए कहा, ''बाबा, तू तो पुराना अमृतधारी सिंह है, तुझे तो पता है कि गुरु ग्रंथ साहिब से बड़ा कोई नहीं होता। फिर मुझ पर क्यों भार चढ़ाता है?''

जवाब में निम्मे ने दोनों हाथ जोड़ते हुए कहा, ''नहीं सरदार जी, प्रताप तो सारा तुम्हारा ही है। गुरु ग्रंथ साहिब का भोग तो हमारे घर भी पड़ा था। सारे नगर में घर–घर कार्ड भी बाँटे थे, पर मुश्किल से कुछेक लोग ही पहुँचे।''

अनुवाद : अ. भा.

सुखवंत मरवाहा

शेर और आदमी

एक दिन शेर व आदमी में बहस छिड़ गई। दोनों अपने–आपको एक–दूसरे से ज्यादा ताकतवर बता रहे थे।

शेर ने कहा, ''मेरी ताकत का कोई जवाब नहीं। मैं जंगल के किसी भी जानवर को मार सकता हूँ। आदमी भी अपने–आपको शेर जितना बहादुर कहकर फख्र महसूस करता है।''

आदमी बोला, ''यह माना कि तुम बहुत बहादुर हो और जंगल के किसी भी जानवर को मार सकते हो। पर यह बताओ कि तुम आसानी से किसी दूसरे शेर को मार सकते हो?''

''साथी, शेर को मारना तो बहुत मुश्किल काम है।'' शेर ने अपने–आपको कमज़ोर–सा करते हुए कहा।

''पर मेरे लिए यह बड़ा मामूली काम है, चले जा रहे जिस आदमी को कहें, मैं मिनटों में मार दूं।''

अब शेर के पास कोई जवाब नहीं था।

सिमर सदोष

एक और द्रोपदी

मेरी माँ नहीं है! भीड़ के कई चेहरों की आँखें आवाज की ओर उठी थीं, लेकिन किसी आँख में से थोड़ा-सा भी पानी नहीं छलका। लेकिन आवाज के साथ ही उसके अध-फटे कुर्ते का एक और ललार उतर गया था।

मेरा बाप भी नहीं है! उसका कुर्ता तार-तार हो गया था। भीड़ में से कई चेहरे ठिठके थे, लेकिन टेढ़ी नजरों से हवाओं के सन्नाटे को भेदकर अपनी राह चले गए।

मेरा कोई भाई नहीं! उसका बेतरतीब-सा दुपट्टा हवा में उड़ गया-सा लगा। भीड़ में से अनेक आँखें उसके अंग-प्रत्यंगों पर काक्रोचों-सी रेंगने लगीं। अनेक कदम जड़ से हो गए। भीड़ का सैलाब जमने लगा। लेकिन उसकी पनीली आँखों की तपिश कोई महसूस न कर सका।

मेरा कोई खसम नहीं! कोई वारिस नहीं! यह आवाज अबकी मुखर थी।

और हवाएँ मानो थम गयीं। अनेक हाथ उसके जिस्म को नोंच लेने के लिए आगे बढ़ने लगे। उसकी आँखों की तपिश खत्म हो गयी थी, और जमीन से धुँआ-सा रिसने लगा था।

अगले दिन उसके जिस्म पर रेशमी तारों वाले कपड़े थे, लेकिन उस एक रात के बीतने तक उसके पाँच पति हो चुके थे।

पंजाबी पुत्तर

दौर नवाबी था। नवाब का सख्त आदेश था कि शहर में अमन-ओ-अमान को बरकरार रखा जाए। गुंडा तत्वों की शिनाख्त की जाए, और शरारत करने वालों पर कड़ी नज़र रखी जाए। अमीर-ए-शहर नवाब के आदेशों का पालन कराने के लिए स्वयं शाम को बाज़ारों में गश्त करते।

एक दिन एक अमीर-ए-शहर ने देखा कि एक नौजवान सिर के बालों में खुशबूदार तेल लगाकर उन्हें ऊपर की ओर उठाए, इठलाते हुए चला जा रहा था। अमीर-ए-शहर ने उसे रोक कर पांच रुपये जुर्माना ठोंक दिया।

कुछ दिन बाद वही युवक पान चबाते हुए पुनः उसी सड़क से गुज़रा तो अमीर–ए–शहर ने उसे पचास रुपये जुर्माना करते हुए सख्त हिदायत भी दी कि यदि अब उसने हुक्म का उल्लंघन किया तो उसे नवाब के दरबार में पेश किया जाएगा। वहां उसे कैद की सज़ा भी हो सकती है, और जुर्माना तो होगा ही।

अगले कुछ दिन बाद वही युवक जब बाज़ार से गुजरा, तो न केवल उसने खुशबूदार तेल लगा रखा था, अपितु मुंह में पान की गिलोरी भी दबा रखी थी। यहां तक कि उसने गले में रेशमी रूमाल भी बांध रखा था, और चलते–चलते गुनगुना भी रहा था।

अमीर–ए–शहर उसे पकड़ कर नवाब के पास ले गया। नवाब ने उसके खानदान के बारे में पूछताछ करने के बाद उसे पांच सौ रुपये जुर्माना अदा करने का हुक्म देते हुए अमीर–ए–शहर से कहा, यदि अब भी वह ऐसी हरकत करे, तो जेल में डाल दिया जाए। लेकिन अगले कई दिन तक वह, नौजवान बाज़ार में नहीं निकला तो अमीर–ए–शहर ने मूंछों को ताव देते हुए जैसे खुद ही से कहा–हमने तो बड़े–बड़ों को सीधा कर दिया... यह छोकरा क्या चीज़ है।

कई दिन बाद जब वही नौजवान फिर बाज़ार से गुज़रा तो न उसके बालों में तेल था, न गले में रूमाल, और न ही होंठ उसके पान से लाल। मुंह झुकाए बाज़ार से गुजर रहा था, कि अमीर–ए–शहर ने कारिन्दों को हुक्म दिया–लाओ तो मियां, ज़रा इस लड़के को पकड़ कर..... पूछें कि कैसे गुज़री है।

कारिन्दों ने हुक्म का पालन किया। वह नौजवान अमीर–ए–शहर के सामने भी सिर को झुकाए खड़ा था। अमीर–ए–शहर ने अपने गले को खखारते हुए कहा–क्यों मियां, क्या हुआ? क्या बाप–दादा ने पैसे देने से इन्कार कर दिया?

–नहीं हुज़ूर, बाप–दादा की तो जागीर है... बड़ा पैसा है।

–फिर क्या हुआ... क्या हमारी सज़ा का इतना असर हुआ कि सारी हेंकड़ी भूल गये!

–न जनाब, ऐसा भी नहीं। बाप–दादा का बहुत नाम है। वे चाहते तो नवाब को भी ना कर देते, परन्तु....।

–फिर हुआ क्या....बताओ तो! अमीर–ए–शहर ने थोड़ा ख़फा होते हुए पूछा।

नौजवान ने पहली बार सिर को ऊपर उठाया, और अमीर की आंखों में

आंखें डालते हुए कहा– दो ही रात पहले मैं एक लड़की का बाप बन गया हुज़ूर, इसलिए.... !

जाट का बेटा

जाट की फसल कट कर घर में आ गई थी। मानसून समय पर न आने से फसल अच्छी नहीं हुई थी, फिर भी काफी थी। जट्टी खुश थी, कि इस बार वह चूड़ियां जरूर बनाएगी। जाट ने बैलों के गले में बंधे पुराने घुंघरू बदल दिए थे, और अपने लिए सफेद कुर्ता व नया लाचा खरीद लिया था। जाट का बेटा भी लाले की दुकान से रेशमी लुंगी ले आया था।

रात को बाप-बेटे ने अपने ही खेत से निकाली गई शराब पी। अचानक बेटे ने घर में पड़ी फसल की बोरियों की ओर देखते हुए बाप से पूछा- बापू...! आह कतल ते किन्ना कु खर्च आ जांदा ए?

-एही... कोई इक लख दे करीब! इक खेत बिक जांदा ऐ पुत्तर!

-ते बापू, साडी नवीं फसल किन्ने च बिक जाऊ? दोनों ने एक-एक गिलास और सुड़क लिया था।

जाट ने गेंहू की बोरियों की ओर खुशी से ताकते हुए कहा-पच्ची-चाली हजार तां मिल ही जानगे-कट्ट-कटा के।... पर तू एह सब क्यों पुच्छ रिहा एं पुत्तर?

-ऐवें ई बापू, कोई खास गल्ल नहीं!

-हला!.....तां फिर लिआ, इक-इक गलासी होर पा लै फिर! जाट ने मूंछों को संवारा था।

-.....तां फिर बापू!' जाट के बेटे ने एक और गिलास के अंतिम घूंट को गले में उंडेल कर गिलास को स्टूल पर रखते हुए कहा– एदां आं... कि आपां कतल नहीं करदे... किसे दीयां लत्तां ई वड्ड देने आं। उसने किलकारी-सी छोड़ते हुए, जांघ पर हाथ मारा।

इस बीच जाट ने भी आखिरी घूंट डकार लिया था-लै आ पुत्त...तां फिर इक बोतल होर-ढारे च पई आ!

पांच मर्द

बहू के सिर से पानी वार कर पीने के बाद, पड़ोसिनों की ज़िद पर बीस बीघे ज़मीन की मालकिन जट्टी ने जैसे ही बहू के सिर से घूंघट सरकाया, वह

स्वयं उसके चेहरे को देखती रह गई। आंखों ने एक ही बार में बहू के सारे नख–शिख को तौल लिया– गोल–मोटी आंखें! रौबीले होंठ! भरा–पूरा सीना और उभरे हुए स्तन! लम्बा पेट और गठे हुए कूल्हे!

जट्टी को यह ग़म हमेशा सालता रहा था, कि वह पांच मर्दों के परिवार की भरी–तगड़ी बहू होने के बावजूद, केवल दो ही बेटे दे पाई थी। बहू को देख कर, उसने मन ही मन सोच लिया–कम से कम पांच पुत्तर तो देगी ही।

जट्टी ज़िद करके बहू का मुकलावा भी जल्दी ले आई थी। कुछ दिन चाव–मल्हार में ही बीत गए, कि एक दिन उसके छोटे बेटे ने शिकायत की– एह भाबी तां सत्त बगानेयां तो वी गई–गुजरी ए...मां! अन्दर पिच्छों वड़ी दा ए... खान नूं पहलां भज्जी औंदी आ!

जट्टी सुनते ही जैसे सुन्न हो गई। बड़ी देर शून्य में ताकते रहने के बाद उसने बड़े बेटे को बुलाया–आज रातीं अपने खेतां नूं पानी दी वारी तूं भुगताएंगा... बीरे दे लक्क विच रता मोच आ....रात च ठीक हो जाऊ।

शाम को जट्टी ने चूल्हे–चौके को जल्दी से निपटा, बड़े बेटे के लिए खाना भेजते हुए कामे को समझाया– जांदा होया व्हेली चों बोतल लै जाईं... जेहड़ी रातीं कड्डी सी।

रात को खाने आदि से फारिग होकर जट्टी ने बाहर वाले दरवाजे को ताला लगा दिया। भीतर आकर अपने सोने वाले कमरे की देहरी से ही बहू को बीरे वाले पलंग की ओर धकेलते हुए, जट्टी ने उसके जिस्म पर आंखें गाड़ दीं– वारी वंड लै कुड़िए। मैं समझ तां लियै, पर मैं बर्दाश्त नहींऊं करना...।

–मैथों एह नहीं होना बेबे! दोवां जनेयां नूं मैं.....।

बहू को पूरी ताकत के साथ बाजू से पकड़ते हुए जट्टी जैसे बीच में ही फुंकार उठी– एह जवानी तेरी की फूकन नूं ब्याह के लिए आंदी ए मैं!..... मैं अपने वेले पंजां नूं सांभ लिया सी, ते तूं.....तूं दो वी नहीं सांभ सकदी।

जट्टी ने एक झटके से बहू को पलंग पर गिराया, और बाहर से कुंडी लगाने से पहले वह एक बार फिर बहू के पास आ गई–ते इक होर गल याद रखीं कुड़िये.....मैं आई सां, तां इस घर विच पंज मर्द सन!....ते जान तों पहलां मैं एस घर नूं पंजे मर्द दे के जाना ई...! समझीं ए ना!

वीनस का बुत

मेरे कमरे की कोर्निस पर पड़ा वीनस का न्यूड बुत फिर हंस रहा है। बुत्त कल रात को भी हंसा था।

रात का चौथा पहर अभी बाकी है। पहले पहर राजी आई थी। व्हिस्की को दो गिलासों में उंडेलने तक, उसने अपने आधे–अधूरे वस्त्र भी धीरे–धीरे उतार कर एक ओर रख दिए थे। मेरे साथ राजी व्हिस्की पीती रही थी, और मैं जैसे किसी बुत्त के साथ खेलता रहा था। वह नशे में मदहोश होती चली गई थी, और मैं पल–पल मौन होता चला गया था....आखिर तक। फिर मैं थक गया था, और राजी पलंग पर गिर गई थी। लेकिन मेरा अभी सोने को मन नहीं हुआ था।

दूसरा पहर खत्म होने से पहले तक, वह थोड़ा हिली थी। मैंने उसे कपड़े पहना, ड्राइवर को उसे उसके घर छोड़ आने को कहा था, और गाड़ी स्टार्ट हो जाने पर मैंने थूक दिया था– यू डैम! सिली!

मेरी इस गंदी, लिज़लिज़ी–सी गाली को नशे की धुत्त अवस्था में भी, व्हिस्की का एक और घूंट समझ कर निगलते हुए, हल्की–सी आंखें खोल कर मुस्कुराते हुए, उसने दायां हाथ ऊपर उठा कर मुझे विश किया था, और कार की पिछली सीट पर धम् से गिर गई थी।

अंदर कमरे की कोर्निस पर पड़ा वीनस का नंगा बुत रोशनी के बावजूद मुझे कुरूप और भद्दा नज़र आने लगा था।

फिर दूसरे पहर की समाप्ति पर मीता आई थी। बड़े हौले से मेज पर पड़ी व्हिस्की की बोतल उठाकर, आल्मारी में रखते हुए उसने कहा था—लगता है, मेरे पीना शुरू कर देने से पूर्व, तुम शराब को छोड़ोगे नहीं.....!

मैं हंस दिया था। यूं, मुझे नशा था भी, और नहीं भी।

वह पलंग पर लेट गई थी। मैंने आगे बढ़ कर उसे अपने आलिंगन में ले लिया था। वह वैसे की वैसी, मेरी बांहों में, बिना किसी प्रतिरोध के झूल गई थी। फिर बड़ी देर तक मैं उसके चौड़े वक्ष पर अपना सिर टिकाए, उसकेअंग–प्रत्यंग से खेलता रहा था, उसके बालों को चूमता रहा था, लेकिन इस बीच एक बार भी मुझे अपने अंगों में उत्तेजना का रत्ती भर भी अहसास नहीं हुआ था।

फिर भी मैं संतुष्ट था। मुझे अब नींद भी आ रही थी। चौथे पहर की समाप्ति से थोड़ा पहले, उसने उठ कर बालों में कंघी की थी, कपड़ों में पड़ आई सिलवटों को ठीक किया था, और मेरे लरज़ते होठों पर चुम्बन की एक अमिट छाप छोड़, हाथ हिलाते हुए फुदकती–सी वह बाहर निकल गई थी।

मैं बड़ी देर तक, उसके चले जाने के बाद भी, खिड़की में खड़ा उसके कदमों के निशानों को ताकता रहा था। कमरे की कोर्निस पर पड़ा वीनस का का बुत, मुझे अब बहुत भला लगने लगा था। वह अब नंगा नहीं रहा।

सुरिंदर कैले

किराए का मकान

शरनजीत का बचपन से ही एक सपना था–अपना मनपसंद घर। बचपन से जवानी और जवानी में शादी हो जाने पर उसका सपना बार–बार उसके मस्तिष्क में दस्तक देता रहा। वह और उसका पति अपना घर बनाने के लिए एक–एक पैसा जोड़ने की कोशिश करते, पर बैंक–बैंलैंस वहीं का वहीं रहता। बच्चों का पालन–पोषण, पढ़ाई, शादी आदि के खर्चों ने उन के हाथ बांध कर रखे। वे मकान तो बदलते रहे, पर घर नसीब न हुआ। किराए के मकानों में उन्हें तरह–तरह की परेशानियों का सामना करना पड़ता। इसलिए किराए के मकान उन्हें कभी भी घर न लगते।

वह सोचती....अपने घर में मैं मनपंसद रंग करवा सकूंगी। जिस दीवार पर चाहूं कील गाड़ कर तस्वीर टांग सकूंगी। आवश्यकता अनुसार अलमारियां, खुली रसोई व बाथरूम बनवा सकूंगी। और तो और अपने घर में अपनी मर्जी के अनुसार रह सकूंगी, जो चाहे करूंगी। ऊँचा बोलूँगी, शोर और धमाचौकड़ी मचाऊँगी। कोई मुझे रोकने–टोकने वाला नहीं होगा। मकान मालिक की बंदिशों से मुक्त मैं अपनी मर्जी की मालिक होऊँगी।

शरनजीत अपने बनाए नए और सुंदर घर के लॉन में चहल कदमी करती बचपन के सपने को याद कर रही थी। यह घर रिटायरमेंट पर मिले पैसों से ही सम्भव हुआ था। पर वह संतुष्ट नहीं थी। बच्चों की जिद के आगे उसे कई जगह समझौता करना पड़ा था। फिर भी वह खुश है कि नया मकान उसके अपने घर जैसा लगता है। नरम–नरम घास पर चहल कदमी करना उसे अच्छा लगता है। वह मानसिक खुशी में मस्त थी। इसी मस्ती के आलम में उसने एक गीत का मुखड़ा ऊँचे सुर में गाना शुरू कर दिया।

'मम्मी, प्लीज चुप करो!' भीतर से उसके बेटे ने चीखते हुए कहा, 'शोर सुनकर मुन्नी जाग जाएगी।'

वह चुप कर गई। उसके भीतर एक टीस–सी उठी, मेरा गाना भी बच्चों को शोर लगता है।

सबक

दीनदयाल के बेटे रतनपाल की तीसरी सगाई की बात चल रही थी। पहले दो बार सगाई टूट जाने के कारण वह इस बार बहुत चौकस था। पहले जो कुछ हुआ उससे सबक ले पांव फूंक-फूंक कर रख रखा था।

''लड़का पढ़ा-लिखा है और सरकारी नौकरी में भी है। अपने परिवार और लड़के की नौकरी के स्टेटस के अनुसार दहेज जरूर लेना है। हमारे घर टी.वी., फ्रिज, ए.सी., कार वगैरा सब है, इसलिए दहेज में नकद रकम ही चाहिए।'' दीनदयाल ने अपने जीवन-स्तर को बयान करते हुए दहेज की मांग रख दी।

''ठीक है, जैसी आपकी इच्छा। हम सामान न देंगे, नकद पैसे दे देंगे, बात तो एक ही है।''

लड़की वालों ने सोचा—लड़का सुंदर है, पढ़ा लिखा है और अच्छी नौकरी पर भी लगा है। घर भी देखने योग्य है। क्या हुआ अगर लड़के का बाप ज़रा लालची है। एक बार खर्च कर अगर लड़की सुखी रहती है तो नकदी देने में भी कोई हर्ज़ नहीं है।

बातचीत के बाद फैसला हुआ कि लड़की वाले दहेज के रूप में पांच लाख रुपये नकद देंगे।

निश्चित दिन पर दीनदयाल लड़के की बारात लेकर लड़की वालों के घर पहुंच गया।

''जल्दी करो। लड़के को फेरों पर बिठाओ, लग्न का समय निकलता जा रहा है।'' पंडित जल्दी कर रहा था।

''पहले दहेज की रकम, फिर फेरे।''

दीनदयाल पहले नकदी लेने पर अड़ गया। लड़की वालों ने रुपयों का बैग पकड़ाया तब शादी की रस्में शुरू हुईं।

समधियों से बारात की अच्छी खातिरदारी करवा, डोली लेकर मुड़ने लगे तो दीनदयाल ने रूपयों वाला बैग लड़की के पिता को पकड़ाते हुए कहा, ''यह लो अपनी अमानत। आपका माल आपको लौटा रहा हूं।''

लड़की का बाप घबराकर दीनदयाल के मुंह की ओर देखने लगा। वह डर रहा था कि यह लालची व्यक्ति अब कोई और मांग रखना चाहता है! दीनदयाल ने स्थिति को स्पष्ट करते हुए कहा, ''मेरे बेटे की सगाई दो बार टूट चुकी थी। कारण एक ही था कि मैं दहेज रहित शादी करना चाहता था। इससे

सगाई टूट गई। मैं तीसरी बार सगाई टूटने नहीं देना चाहता था। इसलिए ही मजबूरी में मुझे दहेज मांगना पड़ा। अब शादी हो चुकी है, इसलिए मैं दहेज लौटा रहा हूं।''

भयानक बीमारी

''अब क्या हाल है बेटे का?'' घर में घुसते ही मैंने पूछा।

''ठीक है।'' दर्शना को सास ने कह तो दिया, पर कहने के अंदाज और हाव-भाव से उसके ठीक न होने का पता चलता था। मैं और दर्शना एक ही स्कूल में पढ़ती थीं। कुछ दिन पहले उसने अपने बच्चे की भयानक बीमारी के बारे में बताया था। कई दिनों से वह छुट्टी पर है, इसलिए उसके बच्चे की खबर लेने मैं उसके घर आई हूं।

''डॉक्टर कहते हैं कि यह बीमारी लाखों में से एक को होती है। इसका सही इलाज अभी तक नहीं मिला। अमरीका की किसी कंपनी ने इसकी दवा बनाकर प्रयोग के तौर पर हमारे देश में भेजी है। डॉक्टर अंतिम अस्त्र के तौर पर इसे आजमाना चाहते हैं।'' दर्शन ने सारी स्थिति स्पष्ट करते हुए कहा, ''शायद भगवान ही कोई चमत्कार कर दे, अब तो एक यही सहारा है।''

थोड़ा रुककर वह फिर बोली, ''भगवान जब दुःख देता है, तो एक नहीं, चौतरफा घेर लेता है। हमारे साथ धर्म-स्थान वालों ने हमें घर से निकालने के लिए एड़ी-चोटी का ज़ोर लगा रखा है। इस धर्म-स्थल की पीठ कब्रिस्तान से जुड़ी है, उधर तो ये फैल नहीं सकते। अब इधर बढ़ते आ रहे हैं। हमसे आगे के तीन घर तो ये जबरन खरीद चुके हैं। अब इनकी नज़र हमारे घर पर है।''

अब दर्शना के ससुर का दर्द भी फूट पड़ा– ''ऐसे जबरन कैसे खरीद लेंगे? आप की जायदाद है, बेचो न बेचो। कोई जबर्दस्ती है क्या?''

मैं उन्हें दिलासा देती हूं।

''ये जबर्दस्ती ही करते हैं। आओ, मैं आपको दिखाता हूं।''

दर्शना के ससुर ने जो दिखाया है, वह हैरान करने वाला है। धर्म-स्थल के साथ लगती इनकी दीवार उधर की सीलन से इस कदर भर गई है कि कभी भी गिर सकती हैं। गार्डर के नीचे लकड़ी का खंभा लगाकर उसे गिरने से बचाने की कवायद की हुई है।

''इस दीवार के साथ उन्होंने काम-चलाऊ पाखाने बना दिए हैं और पानी की टोंटियां दिन-रात चलती रहती हैं। इन्हें कोई बंद नहीं करवा सकता।'' कहकर दर्शना के ससुर ने बेबसी की सांस ली और नम हो गई आंखें पोंछने

लगा।

दर्शना ने गीली दीवार की तरफ इशारा करते हुए पत्थर-सा सवाल मेरे माथे पर दे मारा—''शारीरिक बीमारी के इलाज के लिए तो खोजें की जा रही हैं, पर इस भयानक बीमारी की दवा कौन खोजेगा?''

अनुवादः अशोक भाटिया

मजदूर

''बसंत कौर, कुछ सुना है तूने? ये तो भगवान ने ज्यादती ही कर दी है।'' भीतर आती पड़ोसन ने बात शुरू करते हुए कहा।

-क्या हुआ बहन?

-होना क्या था, सरपंच ने वीरू सांझी के लड़के को नरमे पर स्प्रे करने को लगाया था। उसे दवाई चढ़ गई और वहीं बेहोश हो गया।

-हाय-हाय, फिर क्या हुआ?

-उस लड़के को सरपंच ट्राली में डालकर शहर ले गया। लेकिन वह रास्ते में ही दम तोड़ गया।

पड़ोसन ने दर्द-भरे मन से बताते और हमदर्दी जताते हुए कहा— बेचारे गरीब के साथ बड़ी ज़्यादती हुई। अकेला लड़का था वीरू का।

-इसीलिए तो मैं अपने गुरिंदर को स्प्रे पर नहीं लगने देती चाहे इसका बापू कितना ही कहे। मैं पीछे पड़ जाती हूं कि स्प्रे के लिए भइये हैं तो सही। भगवान न करे, ऊंच-नीच हो जाए तो....बेटे कौन-सा हज़ारों-लाखों में मिल जाते हैं....। बसंत कौर ने अपनी बात रखी।

दोनों की बात सुनकर आंगन वाली करमो गोबर-कूड़ा करने से रुक गई। उसकी आंखों से छमाछम आंसू बहने लगे। कई साल पहले की घटना फिर ताज़ा हो गई। उसका इकलौता बेटा भी इसी तरह मौत के मुंह में चला गया था। कसकर कलेजा थामे हुए करमो बसंत कौर की बातें सुन तड़प उठी। उसका दु:ख एकदम फूट पड़ा—

''जो मर गया, वो कौन-सा किसी मां का बेटा था, मजदूर ही तो था।''

अनुवादः अशोक भाटिया

सुरेन्द्र मंथन

भीड़ में

रिज के नजदीक, जहां विदेशी सामान बिकता है, वह अकेली खड़ी दिख गई। सफेद चमड़ी से बतियाने का अपना ही लुत्फ है। जब तक मधु खरीददारी से निपटे, मैं उस स्वर-लहरी में एक गोता लगाने की इच्छा को दबा नहीं पाया।

उसे मानो मेरी प्रतीक्षा थी। जल्दी ही खुल गयी। हमने सिगरेट सुलगा लिए और गपशप करने लगे।

''तुम लोग सांप्रदायिक दंगों में औरतों को नंगा क्यों करते हो?'' उसने पूछा।

''उस संप्रदाय को बेइज़्ज़त करने की ख़ातिर।''

''औरत ही क्यों, आदमी को क्यों नहीं?''

''हमारे यहां औरत पूजनीय है। उसे घर की इज्जत समझा जाता है।''

''सुना है, बड़े-बूढ़ों की भी खूब इज्जत होती है तुम्हारे यहाँ।''

''ठीक सुना है आपने।''

''तब उन्हें क्यों नहीं नंगा करते?''

''इसमें वह मज़ा कहां?''

''यह बात। अपने मज़े की खातिर औरत को सरेआम नंगा करते हो।''

''और आप लोग कौन-से कम हैं?'' अचानक मुझे गुस्सा आ गया।, ''आपके यहां औरत शराब पीकर नंगा नाच करती है।''

'' अपनी मर्जी से, अपनी खुशी की खातिर। तुम लोग जो अकेले में करने की हिम्मत नहीं जुटा पाते, भीड़ की आड़ में करके तृप्त होना चाहते हो।''

मैंने देखा, विदेशी सामान से लदी मधु चली आ रही है। सिगरेट का लम्बा कश खींचकर मैंने उसे फेंक दिया और उस विदेशी महिला की तरफ पीठ करके नीचे की सड़क पर तैरती भीड़ का आनन्द लेने लगा।

चोर

''आज क्या प्रोग्राम है, शुक्ला?''

''हुकुम कीजिए, सर!''

''कुछ नमकीन हो जाए।''

शुक्ला ने प्रिंसिपल की मेज़ पर पड़ी घंटी दबा दी। चपरासी हाज़िर हुआ।

''ऐसा करो रामदीन, दस रुपए के पनीर-पकौड़े और कुछ मीठा ले आओ।''

रामदीन के जाते ही शुक्ला ने जेब से एक रसीद निकालते हुए कहा—''इस पर दस्तख़्त कर दें सर, लैब्रोटरी के लिए सैल ख़रीदे थे।''

रसीद को वाउचर में तबदील कर शुक्ला ने जेब के हवाले किया ही था कि महाजन सर एक लड़के को धकेलते हुए कमरे में दाखिल हुए।

''आप ही फ़ैसला करें प्रिंसिपल साहब। ऐसे लड़के को स्कूल में रखने की क्या तुक है? आज इस क्लास में चोरी, कल किसी दूसरी में। आज रंगे हाथों पकड़ा गया, कमीना कहीं का।''

''क्यों बे, की थी चोरी?'' प्रिंसिपल ने दबका मारा।

''सर, फीस जमा कराने का आखिरी दिन था।''

''घर से कयों नहीं लाया? क्या करता है तेरा बाप?''

''मज़दूरी करता है सर। कई दिनों से अस्पताल में दाखिल है।''

''बोलता तो सच है।'' शुक्ला लड़के को पहचानता था।

तभी चपरासी मीठा और नमकीन प्लेटों में सजाने लगा।

''तुम्हीं बताओ, क्या सलूक किया जाए तुम्हारे साथ?''

लड़का आंखें झुकाए खड़ा रहा।

''गलती का एहसास है?'' पनीर-पकौड़ा चबाते हुए प्रिंसिपल ने पूछा।

''मजबूरी थी सर। नहीं तो पाप क्यों चढ़ाता?''

''यानी कि माफ़ी नहीं मांगोगे।'' प्लेट शुक्ला की ओर सरकाते हुए प्रिंसिपल ने कहा।

शुक्ला का हाथ जेब में गया। वाउचर को गोल कर प्रिंसिपल के डस्टबिन के हवाले कर उठ खड़ा हुआ—''आप ही खाइए सर!''

सत्ताधीश

उम्र पिता पर हावी हो रही थी। आवाज का दबदबा कमजोर पड़ता जा रहा था। पहले लड़के डांट खाकर सिर झुका लेते थे; अब मुस्कुरा भर देते। निर्णय पिता की मुट्ठी से फिसलकर मां के आंचल में पसरते जा रहे थे। रसोई से मीठे पकवानों की गन्ध आती। पिता को न पकवान भाते; न चैन की नींद पड़ती। दिन का उजाला भी उन्हें उदास कर जाता।

बड़े पुत्र पर पिता को बहुत आशाएं थीं। बचपन के सुख–भोग के अहसास तले अपने हिस्से की मिठाई छोटों में बांट खुशी महसूस करता। भाई–बहन भी उस पर जान छिड़कते थे।

पिता ने बड़के को अलग ले जाकर समझाया, ''बेटा, मेरे बाद तुमने ही घर संभालना है। वैसे तो तुम्हारी मां समझदार है; लेकिन तुम जानते हो, घर चलाना औरतों के बस की बात नहीं। छोटे भाई–बहनों पर भी नजर रखनी जरूरी है। ऐसा न हो, मेरे आंख मूंदते ही तुम्हें आंखें दिखाने लगें।''

बेटे की आंखों में दायित्वबोध तैर गया।

अब पिता जैसे ही घर लौटते; उनके सम्मुख शिकायतों का ढेर लग जाता।

बड़के ने किसी का कान ऐंठ दिया है, किसी का जेब–खर्च छीन लिया है, तो किसी को घण्टा–भर कड़कती धूप में, एक टांग पर खड़ा रखा है।

पिता आग–बबूला होकर मां को कोसने लगते कि उसने घर को नर्क बना रखा है। बच्चों में प्यार–मोहब्बत है, न तमीज। तब सबको आश्वस्त करते, ''घर आ लेने दो नालायक को। बच्चू की खोपड़ी गंजी न की तो कहना।''

देर रात किए बड़का लौटता तो पिता सो चुके होते। इधर उन्हें फिर से गहरी नींद आने लगी थी।

ईंट–गारे का मकान

परीतम मेरा प्रिय शिष्य रह चुका था, अब सहकर्मी बनकर हमारे ही स्कूल में नियुक्त हो गया। अकेला–अकेला रहता था, शायद मुझसे झेंपता था। एक दिन अर्धावकाश में मैंने उसे अपनी टोली में बुला लिया। हमने टिफिन खोले तो वह थोड़ा पीछे सरक गया।

''आओ, आओ। यहां कोई नहीं मानता छूतछात।''

''लेकिन मैं तो मानता हूं।''

साथियों ने ताली पीट दी। ''ले लो मजा उदारवादी बनने का। चार–पांच

साल बाद तुम्हारा ऑफिसर बनेगा, तब देखना इसके तेवर।''

मैं तैश में आकर बोला, ''तू पिटेगा परीतम। चल उठाकर ला अपना टिफिन और बैठ हम लोगों के बीच।''

''आप जिद्द न करें, मास्टरजी।''

''तुम समझते क्यों नहीं? हम बंटते चले गए तो देश टुकड़े-टुकड़े न हो जाएगा?''

''लेकिन हम ही गारा क्यों बनें? मकान तो ईंट का ही कहलाएगा न, हिन्दोस्तान।''

मैं तैश में आकर आग-बबूला हो गया, ''जेब से खर्च करके पढ़ाने का खूब इनाम दिया तुमने!''

परीतम ने पलटकर जवाब दिया, ''सच बताइए मास्टरजी, जितना आपने दिया उससे ज्यादा आपको मिला कि नहीं?''

''ए! तू लौटाएगा मेरे अहसान?''

''सर, स्कूल में आपकी दानवीरता की चर्चा थी कि नहीं? एक इशारे पर सैकड़ों हाथ हरकत में आ जाते थे।''

मेरा गुस्सा आकाश छू गया, ''नाशुक्रगुजार, वह दिन भी भूल गया जब तेरा बाप आखिरी सांस ले रहा था। कफन तक के पैसे....''

''हां-हां-हां, खूब याद है मास्टर साहब, सब याद है। उन दिनों को भुलाने की कोशिश ही तो करता हूं, दिन-रात। कौन जिम्मेदार है उन हालात का? मेरा बाप या आप लोगों के बाप-दादे-पड़दादे? एक आप लोग हैं जो न बराबरी का हक देते हैं न अलग ही होने देते हैं।''

उसके दर्द को महसूस करते हुए मैंने समझाने के अन्दाज में कहा, ''परीतम, पिटने या पीटने के बीच का रास्ता क्यों नहीं अपनाते तुम लोग? ईंट भी तो गार से ही बनती है न!''

उसने गौर से मेरी तरफ देखा। उसके होठों पर तरलता की हल्की-सी रेखा उभर आई थी।

सुलक्खन मीत

रिश्ता

भेदी ने जंगीरे से कहा, ''आज रूपालों के घर चोरी हो सकती है।''

''कैसे?'' जंगीरे चोर की आंखें फटने को हुईं।

''घरवाला घर नहीं है।'

''ठीक है,'' जंगीरे चोर ने कुतरी हुई मूँछों को ऊपर चढ़ाया।

मुर्गा बोलने से पहले ही जंगीरा चोर भेदी के बताये घर में घुस गया। अगले पल वह ट्रंकों-पेटियों के पास खड़ा था।

तेजी को चोर का शक हुआ। वह चारपाई से उठकर दबे पैरों स्विच के पास पहुंची। बल्ब जला तो सचमुच ही सामने एक आदमी खड़ा था। 'चोर' शब्द जैसे उसके गले में ही अटक गया था। तेजो और जंगीरे ने एक-दूसरे को पहचान लिया था। जंगीरे की आंखें एकदम झुक गयीं। तेजो ने पूछा, ''ओ जंगीरे, तुझे बहन का घर ही मिला था चोरी करने को?''

''मैंने सोचा तो था कि भई हमारे गांव से एक लड़की रूपालों को ब्याही हुई तो है, पर मुझे क्या पता था कि तू इसी घर में है।'' कहकर जंगीरा चोर दहलीज़ पार करने लगा।

''अब किधर जंगीरे?'' तेजो ने उसकी बांह पकड़ते हुए कहा।

''गांव!'' जंगीरे ने तेजो की तरफ़ देखे बिना ही कहा।

''बैठ जा। चाय पी जाइयो अब। मैं चाय रखती हूं।''

जंगीरा तेजो की बात पर हैरान होता हुआ एक बच्चे की चारपाई पर बैठ गया। चाय आने तक वह पछताता ही रहा। चाय पीकर चलते वक्त जंगीरे ने पतलून में से दस का नोट निकाला। उसने वह नोट तेजो के ठंडे हाथ में दबा-सा दिया।

''ओ जंगीरे यह क्या?'' तेजो ने मुड़े हुए नोट को देखते हुए पूछा।

''यह भाई का फ़र्ज बनता है बहन!'' कहकर जंगीरा एकदम दहलीज़ पार कर गया। गांव में अभी शान्ति थी। कहीं भी किसी कुत्ते के भौंकने की आवाज़ नहीं आ रही थी।

पिता

देविन्दर कौर का ब्याह हुआ। उसकी बहुत-सी तरस्वीरें खींची गयीं। पर सबसे अच्छी फोटो उसे एक ही लगी थी, जिसमें वह अपने पिताजी के गले से लगी हुई थी। उसके आंसू लड़ी में बंधकर उसके गालों पर पड़ रहे थे। उसके पिताजी के आंसू उनकी दाढ़ी पर ओस की बूंदों के समान अटके हुए थे।

पर जोगिन्दर सिंह जब भी उस तस्वीर को देखता तो वह एकदम कहता, ''सब पाखण्ड है।''

उस तस्वीर के साथ में अब एक तस्वीर और लगी हुई है। वह देविन्दर कौर और पिशौरा सिंह की तस्वीर की जैसे नकल लगती है। गेगां डोली उठने के वक्त जोगिन्दर सिंह के सीने के साथ लगी सिसक रही होती है। जोगिन्दर सिंह के आंसू उसकी दाढ़ी पर चमक रहे होते हैं।

एक दिन जोगिन्दर सिंह को अकेला पाकर देविन्दर कौर भी ड्राइंग रूम में चली गयी। वे एकटक उन तस्वीरों को देख रहे थे। उन्हें देखते ही देविन्दर कौर के मुंह से अनायास ही निकल गया था, ''अब आप भी पाखण्ड करते होंगे।''

जोगिन्दर सिंह ने सिर्फ़ उसकी तरफ देखा और फिर वह बच्चों की तरह फूट ही पड़ा। देविन्दर कौर कितनी देर तक उसकी आंखों से झर-झर बहते आंसू पोंछती रही थी।

सैली बलजीत

बाज़ार

बस अड्डे के बाहर देखते ही देखते पूरी सड़क के दोनों ओर बूट पॉलिश करने वाले छोकरों की जगह उनकी बहनें और माएं आ बैठी थीं।

दिन भर पॉलिश करवाने वाले ग्राहकों को ढूंढ़ने लगी थीं उनकी निगाहें। लगभग पच्चीस–तीस की उम्र के आसपास की औरतों का यह धन्धा खूब चमकने लगा था।

''क्या कमाई हुई आज दिन की?'' एक जनी का खाविंद पूछता है।

''बीस रुपए ही बने हैं?'' वह उत्तर देती है।

''बस? और तेरे साथ वालियों का पता है। पूरे सौ तक पहुंच जाती हैं और एक तुम हो....'' वह उसे डपटने लगा है।

''तो मैं क्या करूँ फिर...?''

''जो वो करती हैं....''

''क्या करती हैं वे... बताओ तो सही.... मेरी तरह सारा दिन पटरी पर बैठी पॉलिश करती हैं.... और क्या...?''

''तुम्हें क्या पता बुद्धू.... ऐसे धन्धा होता है भला?''

''तुम्हारे कहने पर सवेरे–सवेरे ही सुरखी– पाऊडर थोप लेती हूं चेहरे पर, अब गिराहक ना आएं तो बोलो मैं क्या करूँ?''

''बेवकूफ.... वे भी तो तेरे जैसी ही हैं.... वे कैसे धन्धा बढ़िया कर लेती हैं, नालायक, तुम्हें कैसे समझाऊं?''

''क्यों पहेलियां बुझा रहे हो?''

''तो सुनो, कल से तुम्हें सुरखी–पाउडर चेहरे पर पोतने के अलावा एक और काम भी करना होगा।''

''बोलो ना क्या?''

''जब कोई गिराहक पालिश करवाने के लिए आता दिखे....छाती पर से थोड़ा पल्लू खिसका दिया करना....फिर देखना...कैसे चमकता है तेरा धन्धा भी?''

''बस्स इत्ती सी बात थी?''

''तो कल से याद रहेगा ना?'' खाविंद झूठी हंसी हंस देता है।

हरप्रीत सिंह राणा

खुशी

बहू–बेटे ने बापू की चारपाई पशुओं के बाड़े में डाल दी। एक दिन सुबह–सुबह खुशी में मस्त बेटा मिठाई का डिब्बा ले बापू के पास जाकर बोला, ''बापू! बधाई हो! तेरे पोता हुआ है।''

बापू एकटक बेटे की ओर देखता रहा।

''क्या बात बापू, तुझे खुशी नहीं हुई ?'' बेटा बापू के व्यवहार से झुँझला कर बोला।

''पुत्तर! खुशी तो बहुत है... पर मैं तेरे बारे में सोच रहा हूं....''

''क्या बापू? बेटे ने उत्सुकता से पूछा।''

''अब मेरे बाद इस चारपाई का वारिस तूने ही तो बनना है....''

बापू के आगे बेटा निरुत्तर था।

चौथा महायुद्ध

तीसरा महायुद्ध शुरू हो गया था। संसार का कोई ही ऐसा देश बचा होगा जो इस महायुद्ध के घेरे में न आया हो। संसार के सभी छोटे–छोटे देश इस महायुद्ध में शामिल हो गए। न्युकलियर खतरनाक हथियार खुल कर चलाए जाने लगे। कई किस्म के नए खतरनाक, शक्तिशाली तबाहकारी हथियार, रसायनिक जीवाणु भी। जैनेटिक न्युकलियर और लेज़र गाईडेड इत्यादि ने अपने रंग दिखाने शुरू कर दिए थे। ससांर में तबाही मच गई। पृथ्वी पर सभ्यताओं का अंत होने लगा। मनुष्य, जानवर, पक्षी, वनस्पति इत्यादि सब का विनाश हो गया। पीने वाला पानी जहरीला हो गया। पृथ्वी का सारा पर्यावरण प्रदूषित हो गया। इमारतें मलबे के ढेरों में बदल गईं। पर इसकी खुशकिस्मती समझो अथवा परमात्मा की लीला कि संसार के सभी मनुष्यों में से सभी देशों का एक एक मनुष्य जीवित रह गया। भटकते–भटकते इत्तफाक से वे सभी एक स्थान पर मिले। यद्यपि वे सारे भूख व प्यास से तड़प रहे थे परन्तु ये सोच कर खुश थे कि जीवित बच गए हैं। सभी अपने आप को संसार के सब से

खुशकिस्मत मनुष्य समझ रहे थे। सभी पुराने मतभेद भुला कर गले लगकर मिले। सभी ने एक जगह इकट्ठे हो कर प्रण किया कि वो कभी नहीं लड़ेंगे। मिल के रहेंगे। सभी पुराने मतभेद भुलाकर पृथ्वी पर एक नई सभ्यता का निर्माण करने का प्रयत्न करेंगे। उन सभी ने अमन का नारा लगाया। फिर सभी साथ मिलकर रोटी पानी की तलाश में निकल गए। सभी तरफ पत्थर ही पत्थर दिखाई दे रहे थे। पत्थरों पर चलते-चलते अचानक एक जगह रुक गए। उनकी नज़र रोटी के एक छोटे टुकड़े पर पड़ी। सभी रोटी के टुकड़े पर झपट पड़े। वे थोड़ी देर पहले किए अपने प्रण को भूल गए और रोटी के टुकड़े के कारण उनमें विवाद पैदा हो गया जिसने बाद में लड़ाई का रूप ले लिया। वे एक-दूसरे से भिड़ने लगे। सभी ने पत्थर उठा लिए और एक दूसरो को मारने लगे। पत्थरों के आपसी टकराव से आसमान गूँज उठा। शायद यह चौथे महायुद्ध का आरम्भ था।

अधूरी औरत

मिसेज वंदना की शादी को पांच वर्ष हो चले थे पर उसकी कोख अभी तक खाली थी। कोख के खाली होने का कारण कोई कुदरती नहीं था, बल्कि उसने जान-बूझ कर ऐसा कर रखा था। ''नहीं अभी नहीं...मुझे अभी बच्चा नहीं चाहिए... बच्चे के साथ एक तो शरीर की सुंदरता खराब होती है, दूसरा अपनी मौज-मस्ती में भी बाधा पड़ती है....मिस्टर मेरी इस बात से सहमत हैं....उनके हर बिजनेस टूर के साथ मैं भी देश-विदेश की सैर कर रही हूं।'' मिसेज वंदना बड़े गर्व से किसी पार्टी में अपनी दोस्तों को कह रही थी। ''आप तो मौज कर रही हैं....हम तो बच्चों के पालन पोषण के मसलों में दिन रात फंसी रहती हैं...'' मिसेज गिल के लफ़्जों में मजबूरी झलक रही थी।

अचानक नौकरानी आकर मिसेज वंदना से बोली, ''मैडम मुझे जल्दी घर जाना है...मेरे छोटे बेटे को कल रात से बुखार है।''

''हूँ... यहां पर पार्टी चल रही है.... और तुझे घर जाने की पड़ी है। बुखार से कोई तेरा बेटा मर नहीं चला... पार्टी खत्म होने पर किसी कैमिस्ट शॉप से दवाई लेकर चली जाना...।'' मिसेज वंदना ने बड़े निर्दयी भाव से कहा।

नौकरानी का चेहरा गुस्से से लाल हो गया पर लाचार होकर रसोई की तरफ चल पड़ी।

'ऐक्सक्युज मी... मैं किचन की तरफ जरा हो आऊँ। ये नौकरानियां तो काम से टलने के लिए बहाने ढूंढ़ती रहती हैं। मिसेज वंदना रसोई की तरफ

चल पड़ी। रसोई के पास पहुंचकर उसे नौकरानी के रोने की आवाज़ सुनाई दी। दूसरी नौकरानी कह रही थी....'' चुप कर बहन...मालकिन को क्या पता.... बच्चे की तड़प क्या होती है....वह तो अभी तक अधूरी औरत है....।''

नौकरानी के बोल सुनकर मिसेज वंदना ठिठक गई और अपने आप को संभालते हुए रसोई में पहुंचकर नौकरानियों को खाने के लिए निर्देश देने लगी। वह घबरा कर काम करने लग गईं। मिसेज वंदना लॉबी में से होते हुए ड्राइंग रूम की तरफ चल पड़ी। ड्राइंग रूप से औरतों की हंसी और गपशप की आवाज़ें आ रही थी।

''मिसेज वंदना को अपनी सुन्दरता पर बड़ा गर्व है....।'' मिसेज शर्मा ईर्ष्या से कह रही थी।

''मुझे तो वैसे ही हवाई लगती है... पांच साल हो गए हैं शादी की... अभी तक बच्चा नहीं हुआ....मुझे तो बांझ लगती है बांझ....।'' मिसेज गिल के बोलों में व्यंग्यात्मक मुस्कुराहट थी। चारों तरफ़ हास्य गूंज उठा। मिसेज वंदना लॉबी में रुक गई। उसको लगा जैसे उसके कानों में किसी ने किसी ने पिघला हुआ सिक्का डाल दिया हो। उस रात वह अपने पति से कह रही थी—

''हमने पांच साल बहुत मौज मस्ती कर ली। मैं अब मां बनना चाहती हूं...।'' यह कहते हुए उसकी आंखों में आंसू गिर पड़े।

अनुवादः जगदीश राय कुलरियां

हरभजन खेमकरनी

चिकना घड़ा

'बी.एस. गिल' की नेम-प्लेट पढ़ते ही अमरीक सिंह गिल ने घंटी बजाई तो एक बुजुर्ग ने गेट खोला।

"गिल साहब को मिलना है, दफ़्तर से आया हूं।" बुजुर्ग को उसने आदर सहित कहा।

"आ जाओ, बैठक में बैठे हैं।"

वह बैठक की ओर हुआ तो वह बुजुर्ग भी आ गया। गिल साहिब ने अपने पिता जी से उसकी जान-पहचान करवाई, "बापू जी, ये अमरीक सिंह गिल मेरे साथ ही अफ़सर हैं।"

"फिर तो ये अपने ही हुए!" चेहरे पर मुस्कुराहट लाते हुए बुजुर्ग ने कहा।

दफ्तरी मामलों से फारिग हो वे दो-घूँट पीने लगे तो बुजुर्ग भी उनका साथी बन गया।

धर्मपाल की ओर से हवा में छोड़े गए अधूरे वाक्य "गिल साहब का गोती अफसर आ गया, अब लगेगा पता। कहते हैं न कि एक अकेला और दो ग्यारह..." ने अमरीक सिंह गिल को सुबह से ही परेशान किया हुआ था। इस अधूरे वाक्य में कड़वाहट, ईर्ष्या, डर और न जाने क्या-क्या आ मिला था। शायद गोत्र-भाई समझकर ही मुझे घर बुलाया हो। तीसरे पैग के खत्म होते ही वह नशे की लोर में बोला, "गिल साहब! शायद गोत-भाई होने के कारण ही आपने यह कष्ट किया हो, लेकिन जो बात चार दिन बाद कोई बताएगा, वह मैं आज ही बता देना चाहता हूं कि मैं गिल नहीं हूं। यह तो मेरा गांव 'गिल कलाँ' होने के कारण मेरे नाम के साथ जुड़ गया।"

"छोड़ यार इन बातों को। पचास साल हो गए अपने को आज़ाद हुए, पर इस जात-गोत ने अभी भी हमें पांच सौ साल पहले जितना ही जकड़ा हुआ है। तुम्हारी इस साफगोई ने मेरे दिल में तुम्हारी इज्ज़त और भी बढ़ा दी है। वैसे मुझे पहले से ही पता है कि तुम मज़हबी-गिल हो।"

इतनी बात सुनते ही बुजुर्ग के माथे पर बल पड़ गए। अमरीक सिंह पैग

खाली करता हुआ उठा और इज़ाजत लेकर गेट की ओर बढ़ा। अभी वह स्कूटर स्टार्ट करने ही लगा था कि उसे कांच का गिलास टूटने की आवाज़ इस तरह से सुनाई दी जैसे जानबूझकर दीवार पर मारा गया हो।

फालतू खर्च

पैंसठ को पहुंच रहे बिशन सिंह को घुटनों के दर्द के कारण लाठी लेकर चलना पड़ता था। उसके हम उम्र अकसर उसे घुटनों के दर्द के टोटके बताते रहते। दूर-पास के उन डॉक्टरों के बारे में बताते जिनसे उनके किसी रिश्तेदार को घुटनों के दर्द से आराम मिला। वह सबको कहता कि वह उनके टोटके आज़माएगा तथा उन डॉक्टरों के पास भी जाएगा। लेकिन अपने परिवार के बारे में उन्हें कैसे बतलाता। कैसे कहता कि उसे तो सुबह चाय तक के लिए कई-कई बार लाठी खड़कानी पड़ती है, खांसना पड़ता है। जब दर्द सहन नहीं होता तो वह कोई सस्ती -सी दर्द निवारक गोली ले घर के कामों में लग जाता है। उसके कामों में समय पर पानी, बिजली, टैलीफोन के बिल भरने तथा बच्चों की स्कूल की फीस जमा करवानी शामिल थे।

बिजली का बिल और पैसे लेकर वह धीरे-धीरे लाठी के सहारे चलता बिजली-दफ्तर पहुंच खिड़की के सामने लाइन में लग गया। भीड़ चाहे कम थी तब भी कइयों ने उसे एक ओर बैठने की सलाह दी, फिर भी वह खड़ा अपनी बारी की प्रतीक्षा करने लगा। तभी उसके पड़ोसी सतनाम सिंह ने आ उसका कंधा थपथपाया।

''क्यों? तू भी बिल भरने आया है?'' बिशन सिंह ने मुस्कुराते हुए पूछा।

''तुझे तो पता ही है कि लड़के यही समझते हैं कि बूढ़े इन कामों के लिए फिट हैं।''

और दोनों ठहाका मार कर हंस पड़े।

''ला पकड़ा बिल और पैसे, पर देना पूरे। कई बार बाबू रेज़गारी न होने के कारण बकाया पैसे वापस नहीं देते। घर वाले समझते हैं कि हमने झूठ बोलकर खुद रख लिए।''

''तुम रखने की बात करते हो....दो-दो बार गिनकर पूरे-पूरे पैसे देते हैं और फिर कह भी देंगे कि गिन लो। और सुना, तेरे घुटनों के दर्द में उस दवाई से कुछ फर्क पड़ा जो मैंने लाकर दी थी?''

''अभी दवा शुरू ही कहां की है...तुमने कहा था कि दवा दूध के साथ खानी है... यहां तो चाय का कप भी मुश्किल से नसीब से होता है...दवा कैसे

लूं। रात को लड़के दो-दो बोतलें उड़ा देते हैं, पर मेरे दूध के पैसे फिजूलखर्ची लगती है....कहते हैं, अब कौनसा दौड़ लगानी है!''

उपाय

''भैणजी, कुछ सुना तुमने?'' देवरानी ने जेठानी को संबोधित करते हुए कुछ बताने की उत्सुकता में पूछते हुए कहा।

''क्या कोई खास बात हो गई...आज तो सुबह से चौके में से निकलना ही नहीं हुआ। भाई जो आया हुआ है।'' जेठानी ने देवरानी की ओर उत्सुकता से देखते हुए कहा।

''बाजवियों की दर्शन ने अपनी सास कूट दी।''

''क्या...? चरनो कूट दी...आज सूरज पच्छम से कैसे?''

''उसकी तो ऐसी हड्डियां सेंकी हैं जैसे डंगर को कूटा हो।''

''अति भी बहुत कर रखी थी उसने। बात-बात पर धूं-धूं करके कूट देना। दर्शन बेचारी गरीब गाय, मार खाकर भी कभी आगे से कुछ न बोलती थी। मायका जो कमजोर है। सारा गांव त्राहि-त्राहि करता है। कइयों ने समझाया, पर चरनो पर कोई असर ही न होता था। क्या यह कूटने वाली बात सच है?''

''ले, और क्या। अपनी गुलाबो बता कर गई है। वह उस वक्त उनके घर में गोबर-कूड़ा उठा रही थी। कहती थी कि दर्शन में कोई ऊपरी शै आ गई है।''

''कहीं चरनों की सास ही न हो।''

''हाय री, तेरी बात सच्ची ही न हो जाए। चरनों को तो उसकी सास सुना है, बड़ा मारती थी। वह भूतनी बनकर दर्शन को चिपटी हुई है, नहीं तो दर्शन में इतनी हिम्मत कहां है?''

''अगर बात अपने तक रखे तो एक बात बताऊँ?'' जेठानी ने देवरानी के और करीब होते हुए भेदभरी मुस्कान चेहरे पर लाकर कहा।

''ले, मैंने पहले कभी बात की है भला!''

''दर्शन के ऊपर शै-वै कुछ नहीं है। परसों गली में से गुजरते हुए परमजी मास्टरनी को दर्शन से कहते सुना था कि दर्शन भैन यूं रोज-रोज हड्डु तुड़वाने अच्छे नहीं कि आगे तुझे भी....

''हूँ.... भैण.... सच्ची?''

फिर दोनों एक दूसरे को देखकर मुस्कुराई और अपने-अपने चौकों में जा घुसीं।

हरमनजीत

दीमक

''यह कौन था?'' कमल ने अपनी सहेली रेशम को कॉलेज के गेट पर किसी अजनबी से बातें करते हुए देखकर पूछा।

''तुझे नहीं पता?...यह अजीत है! सीनीयर स्टूडैंट है अपने कॉलेज का।'' रेशम ने बेफ्रिकी से जवाब देते हुए कहा।

''क्या कहता था?''

''कहना क्या है! कह रहा था 12 बजे मिलना होटल डॉलफिन में।''

''क्यों ?''

''कहता तेरे साथ प्यार हो गया...।'' रेशमा हंसी।''

''तूने उसे बताया नहीं कि तू किसी और से प्यार करती है?''

'' मैं ... और प्यार?... मैं किसी से प्यार व्यार नहीं करती... बल्कि सभी मुझे प्यार करते हैं।'' रेशम खिलखिला कर हंसी।

''तो फिर वह पहला...?...मुझे लगता है कि तू ठीक नहीं कर रही रेशम।''

''ले यार कमला....तू भी...? इट इज़ जस्ट टाइमपास बेबी,....खाओ पीओ....ऐश करो! ज़िदगी की इन्जुआए करो बेबी।'' रेशम ने आंख दबाते हुए इशारा किया और उंगली में स्कूटी की चाबी घुमाते हुए पार्किंग की तरफ बढ़ गई।

लेखकों के बारे में

सुलक्खन मीत– जन्म 15.5.1938 (मिंटगुमरी, पाकिस्तान)। शिक्षा: एम.ए. (इतिहास), पंजाबी ऑनर्स। लेखन: लघुकथा, कविता, गजल, बाल–साहित्य, जीवनी। चालीस से अधिक पुस्तकें प्रकाशित जिनमें 'इज्जतां वाले' और 'सुलगदी बर्फ' लघुकथा संग्रह शामिल हैं। संपर्क: दशमेश नगर, संगरूर (पंजाब)

दर्शन सिंह बरेटा—जन्म 15.3.1966 बरेटा (पंजाब)। शिक्षा: एम.ए. (पंजाबी, अंग्रेजी), एम.कॉम. एम.एड. पंजाबी ऑनर्स। लेखन–विधाएं: लघुकथा, निबंध, बाल कहानियां, कविता। 'पंजाबी मिन्नी कहानी दा वर्तमान' (सह संपादन) लघुकथा–संग्रह प्रकाशित। संप्रति: अध्यापक। संपर्क: दर्शन सिंह बरेटा, प्रीत भवन, बरेटा, जिला मानसा (पंजाब)–151501

जगदीश राय कुलरियां–जन्म 22.5.1978, कुलरियां (मानसा)। शिक्षा: एम.ए. (हिंदी, पंजाबी, जनसंचार), एम. फिल (हिंदी), एम.पी.डब्ल्यू.। लेखन विधाएं: लघुकथा, व्यंग्य, निबन्ध, साक्षात्कार। प्रकाशन: 'रिश्तयां दी नींह' (लघुकथा–संग्रह) के अलावा–संवाद और सृजन (दो भाग) नाम से लघुकथाकारों से साक्षात्कार व 'पंजाबी मिन्नी कहानी दा वर्तमान' (सह संपादन), संप्रति: सेहत विभाग पंजाब में। संपर्क: 46, इम्प्लाईज़ कालोनी, बरेटा–151501, जिला मानसा (पंजाब)

हरप्रीत सिंह राणा– जन्म 15.4.1973 पटियाला। शिक्षा: एम.ए. पंजाबी, एम.फिल्, पत्रकारिता व जनसंचार में स्नातकोत्तर डिप्लोमा। प्रकाशन: 'चौथा महायुद्ध' लघुकथा–संग्रह के अलावा पंजाबी मिन्नी कहानी: एक अध्ययन' आदि चार पुस्तकों का सह–संपादन। 'मिन्नी कहानी' और 'छिण' आदि पत्रिकाओं का प्रकाशन। संपर्क: 713, गली नं. 1, तृप्ति टाउन, पटियाला– 147004।

भुवनेश कुमार– जन्म 27.3.1945, मुहल्ला अनारकली बाजार, लाहौर। शिक्षा: स्नातक (बीकानेर, खन्ना और जोधपुर में)। प्रकाशन: एक उपन्यास, दो बाल पुस्तकों के अलावा 'रहना चुप मांओं का' ग़जल–संग्रह। संपर्क: 220, सैक्टर 16, फरीदाबाद–121002

प्रेम सिंह बरनालवी– जन्म 29.10.1945, गांव बरनाला, जिला अम्बाला (हरियाणा)। शिक्षा : बी.ए.। प्रकाशन: दो कहानी संग्रह, एक उपन्यास के अलावा हिन्दी में 'बहुत बड़ा सवाल' और 'देवता बीमार है' लघुकथा–संग्रह। जालंधर दूरदर्शन से प्रोग्राम एग्जीक्यूटिव के रूप में सेवा–निवृत्त। निधन : 2015। परिवार–संपर्क: गांव बरनाला, डाकघर धनकौर, जिला अम्बाला–134007 (हरियाणा)

सतीशराज पुष्करणा– जन्म 5.10.1946 लाहौर (पाकिस्तान)। शिक्षा: बी.एस-सी, विशारद, एम.डी.एच. (होम्योपैथिक), पटकथा-लेखन में डिप्लोमा। छह लघुकथा-संग्रहों के अतिरिक्त साहित्य की विभिन्न विधाओं की पचास से अधिक तथा लघुकथा से जुड़ी तीस से अधिक संपादित पुस्तकें प्रकाशित। संपर्क : द्वारा पुष्करणा ट्रेडर्स, महेन्द्रू, पटना-800006 (बिहार)।

जोगेन्दर पाल– जन्म 5.9.1925 (पंजाब, पाकिस्तान)। शिक्षा: एम.ए. अंग्रेजी। कृतियाँ: धरती का अकाल, मैं क्यों सोचूँ, रसाई, मट्टी का इद्राक, सिलवटें, लेकिन मुहावरा, बेइरादा, कथानगर (कहानी-संग्रह), एक बूंद लहू की, बयानात, आमद-ओ-रफ्त तथा नादीद (उपन्यास), संप्रति: स्वतंत्र लेखन।

उपेन्द्रनाथ अश्क– जन्म 14.12.1910 जालंधर (पंजाब)में। हिंदी के प्रतिष्ठित साहित्यकार। हिंदी के साथ उर्दू में भी निरंतर लेखन। लगभग एक सौ पुस्तकें प्रकाशित, जिनमें बारह उपन्यास, सात एकांकी-संग्रह, ग्यारह नाटक, ग्यारह कहानी-संग्रह, ग्यारह काव्य-संग्रह और तीन खंड-काव्य शामिल हैं। 18.1.1996 को मृत्यु।

सआदत हसन मंटो– जन्म 11.5.1912, समराला, जिला लुधियाना (पंजाब)। उर्दू के ख्यातिप्राप्त कहानीकार। एक दर्जन से अधिक कहानी संग्रह। काली-सलवार, बू, ठंडा गोश्त, धुआं, खोल दो, ऊपर बीच और दरम्यान कहानियों पर मुकदमे चले व सबमें बरी हुए। मृत्यु: 18.1.1955

निरंजन बोहा– जन्म 06.09.1956 बोहा (जिला, मानसा, पंजाब)। शिक्षा: स्नातक। लेखन: लघुकथा, कहानी, आलोचना। प्रकाशन, एक कहानी-संग्रह, लघुकथा पर आलोचना पुस्तक के अलावा 'हड़ताल जारी है' संपादित लघुकथा संकलन। संप्रति: पत्रकारिता। संपर्क: कक्कड़ कॉटेज मॉडल, टाउन, बोहा-151503, जिला मानसा (पंजाब)

हरभजन खेमकरनी– जन्म 10.11.1941 खेमकरण (अमृतसर, अब तरनतारन)। शिक्षा: एम.ए. पंजाबी। लेखन क्षेत्र: लघुकथा, कहानी, कविता। प्रकाशन: दो कहानी संग्रह, एक कविता संग्रह के अलावा, 'थिंदा घड़ा' (2002), 'चानण' (2012), दो लघुकथा संग्रह। संपर्क: 4381-ए, पुतलीघर, अमृतसर (पंजाब)-143002

नूर संतोखपुरी– जन्म 8-10-1959, चक हुसैना, लम्मा पिंड, जालंधर। शिक्षा: प्रभाकर, स्नातक। लेखन-क्षेत्र:लघुकथा, कविता, कहानी, व्यंग्य। संपर्क: बी.एक्स. 925, संतोखपुरा, विजयनगर कालोनी, जालंधर-144004.

हरजिन्दर पाल कौर कंग– जन्म 26.12.1966 गांव मरड़, जिला गुरुदासपुर (पंजाब)। शिक्षा: एम.ए. पंजाबी, एम. एस-सी. नर्सिंग, एम.बी.ए., पीएच.डी.,

एल.एल.बी.। लेखन-क्षेत्र: लघुकथा, कविता। प्रकाशन: मेरी सरघी (लघुकथा संग्रह)। संपर्क : मैनेजिंग डायरेक्टर, श्री गुरु रामदास ग्रुप ऑफ इंस्टीट्यूट्स गुरु-सागर पब्लिक स्कूल, पंधेर, जिला अमृतसर (पंजाब)।

अश्वनी खुडाल- जन्म 04.09.1970, खुडालकलां, जिला मानसा। शिक्षा: एम.ए. पंजाबी, राजनीति शास्त्र। लेखन क्षेत्र: कविता, लघुकथा, लेख। विभिन्न पत्रिकाओं में रचनाएं प्रकाशित। संपर्क: 84 इम्प्लाइज़ कालोनी, बरेटा-151501, जिला मानसा (पंजाब)

कुलविंदर कौशल- जन्म 07.05.1981, फतेहगढ़ पंजगराईयां (संगरूर, पं.) शिक्षा: स्नातक, डिप्लोमा वैटरनरी फार्मासिस्ट। लेखन: लघुकथा, कविता, गज़ल। प्रकाशन: 'अभिमन्यु' लघुकथा-संग्रह। संपर्क: गांव व डाक. फतेहगढ़ पंजगराइयां, तह. धूरी, जिला संगरूर- 148020 (पंजाब)

जोगिंदर सिंह निराला- जन्म 10.10.1945, बरनाला (पंजाब)। शिक्षा: पी-एच.डी.। लेखन: कहानी, आलोचना। प्रकाशन: आठ कहानी संग्रह, तीन आलोचना पुस्तकों के अलावा हिंदी में दो कहानी संग्रह तथा 'दायरे' लघुकथा संग्रह का संयुक्त संपादन। संप्रति: स्वतंत्र लेखन। संपर्क: साहित्य मार्ग, निकट पुराना सिनेमा, बरनाला-148101(पंजाब)

जसबीर ढंड- जन्म 26.10.1944 मोगा (पंजाब)। सेवा-निवृत्त स्कूल अध्यापक। एक कहानी संग्रह प्रकाशित। संपर्क: गली नं. 3, गुरु गोबिंद सिंह नगर, कोर्ट रोड, मानसा (पंजाब) 151501

रघबीर सिंह महमी- जन्म 09.02.1949। शिक्षा: एम.ए. पंजाबी। तीन लघुकथा संग्रह 'गगन में थाल (2004), चंगेर (2007) और तिड़क (2012) प्रकाशित। संपर्क: 220, ग्रीन पार्क, सरहिंद रोड, पटियाला-147004

अनवंत कौर- जन्म 04.04.1935 रावलपिंडी (पाकिस्तान)। शिक्षा: बी.ए.। एक संपादित तथा एक मौलिक लघुकथा संग्रह 'किणका किणका कायनात' प्रकाशित। 1969 से 1985 तक पंजाबी मासिक पत्र 'कंवल' का संपादन। संपर्क: 139, गोल्डन एवेन्यू, अमृतसर।

मंगत कुलजिंद- जन्म 18.06.1956 सरदारगढ़ (बठिंडा, पंजाब)। शिक्षा: एम.ए., डी.फार्मा। लेखन क्षेत्र: लघुकथा, हास्य-व्यंग्य।'शब्द त्रिंजण' (त्रैमासिक) का संपादन। प्रकाशन: 'समझौता' लघुकथा संग्रह सहित छह पुस्तकें प्रकाशित। संपर्क: 17205, अग्रवाल कॉलोनी, बठिंडा (पंजाब)

सुखचरन सिंह सिद्धू- जन्म 13.3.1946 लाहौर (पाकिस्तान), शिक्षा: एम.ए., एम.फिल्, एम. एड.। लेखन-क्षेत्र: कविता, लघुकथा। दो काव्य-संग्रह प्रकाशित। रिटायर्ड प्रिंसिपल। संपर्क: 69/6, घोड़ मुहल्ला, जीरा, जिला फिरोजपुर (पंजाब)

पृथ्वीराज अरोड़ा– जन्म 10.10.1939 बुचेकी, ननकाना साहिब (अब पाकिस्तान में)। शिक्षाः एम.ए., बी.एड.। प्रकाशनः एक उपन्यास और एक कहानी-संग्रह के आलावा 'तीन न तेरह', 'आओ इन्सान बनाएं' दो लघुकथा-संग्रह। संप्रतिः स्वतंत्र लेखन, संपर्कः 307, ग्राउण्ड फ्लोर, सी एच डी सिटी, करनाल-132001

सुरेन्द्र मंथन– जन्म 04.04.1937, अमृतसर (पंजाब)। शिक्षाः एम.ए. (हिंदी) पी-एच.डी., बी.एड.। प्रकाशनः एक कहानी-संग्रह, जीवनी व शोध-प्रबंध के अलावा दो लघुकथा-संग्रह 'घायल आदमी' और 'भीड़ में' प्रकाशित। निधनः 25.05.2012

राजेन्द्र सिंह 'साहिल'– जन्म 28.5.68 सितारगंज (उत्तराखंड)। शिक्षाः एम.ए. हिंदी, पी-एच.डी.। कार्य-क्षेत्र : एसोसिएट प्रोफेसर। प्रकाशनः आलोचना, दोहा, जीवनी ,गज़ल आदि की सत्रह पुस्तकें 'आगमित' और 'सृज्यमान' वार्षिक पत्रिकाओं का संपादन। संपर्क 1/338, स्वप्नलोक, दशमेश नगर, मंडी मुल्लापुर दाखा, जिला लुधियाना-141101

श्याम सुन्दर अग्रवाल– जन्म 8.02.1950 कोटकपूरा (पंजाब)। शिक्षाः बी.ए.। प्रकाशनः पंजाबी। 'मिन्नी' त्रैमासिक के संपादन के जरिए 1988 से मिन्नी कहानी आंदोलन से सम्बद्ध, हिंदी व पंजाबी में 27 लघुकथा संकलनों का संपादन चार लघुकथा संग्रहों का हिंदी से पंजाबी में अनुवाद, दो पंजाबी लघुकथा-संग्रह और हिंदी में 'बेटी का हिस्सा' लघुकथा-संग्रह प्रकाशित। संपर्कः बी-1/575, गली नं. 5, प्रतापसिंह नगर, कोटकपूरा-151204 (पंजाब)

श्यामसुन्दर दीप्ति– जन्म 30.4.1954 अबोहर, जिला फिरोजपुर (पंजाब), शिक्षाः एम.बी.बी.एस., एम.डी. (कम्यूनिटी मैडिसन), एम.ए. (समाज विज्ञान व पंजाबी) एम.एस-सी (एप्लाइड साइकॉलोजी)। प्रकाशनः सेहत व सामाजिक मुद्दों पर 33 पुस्तकों के अलावा दो पंजाबी लघुकथा-संग्रह तथा 'रिश्ता गैरहाजिर' हिंदी लघुकथा संग्रह। हिंदी व पंजाबी में 28 लघुकथा-संकलन तथा 10 अन्य संपादित पुस्तकें। 'मिन्नी पंजाबी' त्रैमासिक के संपादन के जरिए 1988 से मिन्नी कहानी आंदोलन से सम्बद्ध। कार्य-क्षेत्रः एसोसिएट प्रोफेसर, मैडिकल कॉलेज, अमृतसर (पंजाब)। संपर्क : 97, गुरुनानक एवेन्यू, मजीठाा रोड, अमृतसर-143004

इब्न-ए-इंशा– वास्तविक नाम शेर मुहम्मद खान, जन्मः 15.6.1927, फिल्लौर, जिला जालंधर (पंजाब)। शिक्षाः एम.ए.। उर्दू के सुप्रसिद्ध वामपंथी शायर, यात्रा संस्मरणकार। तीन कविता-संग्रह, पांच यात्रा-संस्मरण और चार व्यंग्य की पुस्तकें। 'आवारागर्द की डायरी' (यात्रा-संस्मरण) और 'उर्दू की आखिरी किताब' व्यंग्य विशेष चर्चित।

जंग बहादुर सिंह घुम्मण– जन्म 05.08.1951, माड़ी बुच्चियाँ, जिला गुरदासपुर (पंजाब)। शिक्षा: एम.ए., बी.एड.। लेखन–क्षेत्र: कविता, लघुकथा, गजल, निबन्ध। 'सुबासरू' (त्रै.) का संपादन। प्रकाशन : तीन काव्य–संग्रह, एक रेखाचित्र संग्रह आदि। संपर्क: बी–12/42, मालरोड, निकट आयकर विभाग दफ़्तर, कपूरथला–144601 (पंजाब).

अमृत मन्नण – जन्म 01.07.1951, गांव संघा, जिला तरनतारन (पंजाब)। लेखन–क्षेत्र : लघुकथा, कविता। प्रकाशन: तीन काव्य–संग्रह। संपर्क: ए 2/104 ए, हास्टसल रोड, उत्तम नगर, नई दिल्ली–110059.

कर्मजीत सिंह नडाला– जन्म 16.10.1969 गाँव नडाला, जिला कपूरथला। शिक्षा: बी.ए.एम.एस.। कार्यक्षेत्र: डॉक्टर। प्रकाशन: चार कथा–संग्रह, जिनमें 'निक्के वड्डे हिटलर' मिन्नी कहानी–संग्रह है। संपर्क: डॉ. कर्मजीत सिंह नडाला, वालिया अस्पताल, कपूरथला–144624 (पंजाब)

दर्शन जोगा– जन्म 01.08.1956, गाँव जोगा (मानसा), पंजाब। शिक्षा: मैट्रिक, डॉफ्ट्समैन (सिविल) डिप्लोमा। कार्य–क्षेत्र: हैड ड्राफ्ट्समैन। प्रकाशन: एक कहानी संग्रह। संपर्क: गली नं 5, लिंक रोड, मानसा–151505

कर्मवीर सिंह– जन्म 21–06–1954, अमृतसर। शिक्षा: एम.ए.। आलोचना, कहानी, संपादन व अनुवाद की पांच पुस्तकों के अलावा 'निक्कीयां गल्लां, वडीयां गल्लां' और 'माया जाल' मिन्नी कहानी संग्रह प्रकाशित। संपर्क: 48, रतन नगर एक्सटेंशन, पटियाला–147001 (पंजाब)

अजमेर सिंह औलख– जन्म 19.08.1942 कुंभडवाल, जिला बरनाला, पंजाब। सुप्रसिद्ध पंजाबी नाटककार। शिक्षा: एम.ए. पंजाबी। पूर्व पंजाबी प्राध्यापक। प्रकाशन: अब तक 21 पुस्तकें प्रकाशित, साहित्य अकादमी और भारतीय संगीत नाटक अकादमी से पुरस्कृत। संप्रति: लेखन और मंचन। संपर्क: लोक कला मंच, मानसा–151505 (पंजाब)

जगदीश अरमानी– जन्म 10.11.1936 होठी मरदान (पाकिस्तान)। शिक्षा: एम.ए. इतिहास, बी एड.। स्कूल प्राध्यापक रहे। प्रकाशन: कहानी, आलोचना की सात पुस्तकों के अलावा दो मिन्नी कहानी संग्रह 'कूड़ फिरे परधान' और 'इक्कीसवीं सदी' प्रकाशित। 1989 से 1999 तक मिन्नी कहानी पर केंद्रित पत्रिका 'खुशबू' का संपादन। 08.07.1999 को निधन।

मित्रसेन मीत– जन्म 20.10.1952, गांव भोतना (बरनाला) पंजाब। शिक्षा: बी.ए.आनर्स, एल.एल.बी.। कार्य–क्षेत्र: सेवा–मुक्त सरकारी वकील। प्रकाशन: छह उपन्यास और तीन कहानी–संग्रह। संपर्क: 297, गली नं 5, उपकार नगर, सिविल लाइन्स, लुधियाना–141001

त्रिपत भट्टी– जन्म 16.05.1938, चक नं 45, गिल सेखूपुरा (अब पाकिस्तान। शिक्षा: बी.ए., बी.एड., एम. एड.। पूर्व उप जिला शिक्षा अधिकारी। प्रकाशन: दो कविता–संग्रह, तीन कहानी–संग्रह और छह मिन्नी कहानी संग्रह प्रकाशित। संपर्क: 2994, SCOON CT, TULARE, CA-93274, USA

सुखवंत मरवाहा– जन्म 04.03.1949, गांव पुरहीरा, जिला होशियारपुर (पंजाब)। शिक्षा: बी.ए.। पूर्व हैड ड्राफ्टमैन। प्रकाशन: मिन्नी कहानी और हास्य–व्यंग्य की छह–छह पुस्तकें प्रकाशित। निधन: 21.12.2013

सत्यपाल खुल्लर– जन्म 12.03.1950 तलवंडीभाई, जिला फिरोजपुर (पंजाब)। शिक्षा: बी.एस.सी., एम.ए. पंजाबी। रिटार्यड लैक्चरर। प्रकाशन: कविता और निबंधों की एक–एक पुस्तक के अलावा 'टूटे हुए पत्ते' मिन्नी कहानी संग्रह प्रकाशित। संपर्क: गाँव तलवंडीभाई, जिला फिरोजपुर–142050 (पंजाब)

सुखचैन थांदेवाला– जन्म: 20.04.1957, गाँव थांदेवाला, जिला फरीदकोट। शिक्षा: बी.ए., आर्ट एंड क्राफ्ट का डिप्लोमा। कार्य–क्षेत्र: सरकारी अध्यापक। संपर्क: 7 नबंर चुंगी वाली गली, गुरु अर्जुन देव नगर, निकट पुराना कैंट रोड, फरीदकोट (पंजाब)–151204

लाल सिंह कलसी– जन्म 26.06.1944 गांव ढुड्डी, जिला फरीदकोट (पं.)। शिक्षा: एम. ए. पंजाबी, टैक्नीकल डिप्लोमा। प्रकाशन: उपन्यास, कविता, कहानी व निबन्ध की एक–एक पुस्तक के अलावा 'यादों के मनके' मिन्नी कहानी–संग्रह। संपर्क: 88, आदर्शनगर, टिकट लायन्ज़ भवन, फरीदकोट–151203 (पं.).

गुरुचरण चौहान– जन्म 07.07.1957 गाँव दानेवाल (मुक्तसर, पं.) शिक्षा बी.ए.। कार्यक्षेत्र: पत्रकारिता व खेतीबाड़ी। प्रकाशन : एक मिन्नी कहानी संग्रह 'कलरी धरती नवें सिआड़' प्रकाशित। निधन, 23.03.2009.

दलीप सिंह वासन– जन्म 04.05.1937 गांव बोदना, तह. ऐबटाबाद, जिला हजारा (पाकिस्तान)। शिक्षा: बी.ए., एल.एल.बी.। व्यवसाय: सहायक रोजगार अफसर से रिटायर होकर अब वकालत। प्रकाशन: कई निबंध संग्रह प्रकाशित। संपर्क: 101–सी, विकास कॉलोनी, पटियाला (पं.).

बलबीर परवाना– जन्म 07.07.1959 गांव चनौर, जिला होशियारपुर (पं.)। शिक्षा: एम.ए.। प्रकाशन : पांच कविता संग्रह, चार लघु उपन्यास, दो कहानी संग्रह, तीन उपन्यास के अलावा 'जमीन ते जवानी' मिन्नी कहानी संग्रह प्रकाशित। लगभग एक दर्जन पुस्तकों का संपादन। संपर्क: साहित्य संपादक– 'नवां जमाना' (पंजाबी दैनिक), नेहरू गार्डन रोड, जालंधर (पं.).

गुरमेल मडाहड़– जन्म: 01.07.1945 गांव उभावाल, जिला संगरूर (पं.)। शिक्षा: एम.ए. पंजाबी। प्रकाशन: 11 कहानी संग्रह, 3 उपन्यास, 2 शब्द–चित्र एक

कविता संग्रह व एक सफरनामा के अलावा 'जुगनुआं दी तलाश विच' मिन्नी कहानी संग्रह। अनेक पुस्तकों का अनुवाद व संपादन। 2011 में निधन।

बिक्रमजीत नूर– जन्म 08.08.1952, निंबुआं (अब मोहाली, पंजाब), शिक्षा: एम.ए. (पंजाबी, राजनीति शास्त्र), बी. एड., उर्दू अरूज़। कार्य-क्षेत्र: पूर्व लेक्चरर, अब स्वतंत्र लेखन। प्रकाशन: छह मिन्नी कहानी संग्रह–कातरां, शिनाखत, अनकहा, मूक शब्दों की वापसी, दस साल और, आदि प्रकाशित। तीन उपन्यास एक-एक काव्य, गजल व वार्ता पुस्तकें, दो अनूदित पुस्तकें और करीब दो दर्जन मिन्नी-कहानी संग्रहों का साझा संपादन। 'मिन्नी' त्रैमासिक के सह संपादक। संपर्क: गुरुनानक नगर, गिद्दड़बाहा–152101, जिला मुक्तसर (पंजाब)।

बलवंत कौर चांद– जन्म 04.11.1940, लीला, जिला जेहलम (पाकिस्तान)। शिक्षा: मैट्रिक। निधन: 22.01.2014.

रामसरुप अणखी– जन्म 28.08.1932 गाँव धौला, जिला बरनाला (पंजाब)। शिक्षा: एम.ए., रिटायर्ड अध्यापक। सुप्रसिद्ध कथाकार। प्रकाशन: 11 उपन्यास, 13 कहानी-संग्रह, 2 काव्य-संग्रह, अनेक पुस्तकें अनूदित व संपादित। 1933 से कहानी पंजाब' (त्रै.) शुरू की, जो आज भी जारी है। 'कोठे खड़क सिंह' उपन्यास पर 1987 में भारतीय साहित्य अकादमी पुरस्कार। निधन: 14.02.2010.

हरमनजीत– जन्म 29.04.1981 मुकेरियां (होशियारपुर), पंजाब। शिक्षा: एम.ए. (समाजशास्त्र) एम.सी.ए.। 'विधा' इंटरनेट पत्रिका का सह संपादन। संपर्क: गाँव व डाक महताबपुर तह., मुकेरियाँ–144306, जिला होशियारपुर (पंजाब).

प्रीत नीतपुर– जन्म 15.04.1955, गांव चंदबाजा, जिला फरीदकोट (पं.)। शिक्षा: मैट्रिक। प्रकाशन: एक कहानी संग्रह के अलावा, एक पंजाबी लघुकथा पुस्तक। संपर्क: गांव नीतपुर, डाक. बागड़ियां कलां, जिला होशियारपुर (पंजाब).

प्रीतम बराड़ लंडे– जन्म 15.08.1940 गांव लंडे (फरीदकोट, पं.)। प्रकाशन: कई कहानी-संग्रहों के अलावा 'बर्फ दे फुल' मिन्नी कहानी संग्रह प्रकाशित। 2009 में निधन।

भूपिन्दर सिंह पी.सी.एस. जन्म 01.07.1937, वारासऊनी (मध्य प्रदेश)। आई.ए.एस. रहे। प्रकाशन: कई कहानी-संग्रहों के अलावा 'सौ पत मछली दें' मिन्नी कहानी संग्रह प्रकाशित। 2000 में निधन।

शरन मक्कड़– जन्म 18.03.1939 अमृतसर (पं.)। प्रकाशन : लगभग पंद्रह पुस्तकों के अलावा 'खुंडी धार' और 'अब जूझन को दाओ' मिन्नी कहानी संग्रह प्रकाशित। 2009 में निधन।

सुरिंदर कैले– जन्म: 15.11.1947, गाँव बुटाहारी (लुधियाना)। शिक्षा: बी.कॉम। प्रकाशन: मिन्नी कहानी, नाटक, कविता की आठ संपादित पुस्तकों के अलावा एक

कहानी–संग्रह और चार मिन्नी कहानी संग्रह–बेकार घोड़ा, कूजां दी डार, पूरब दी लौ (2009) और कदम–दर–कदम (2014) प्रकाशित। रंगमंच से लंबे समय तक जुड़े रहे। 1972 से 'अणु' त्रैमासिक पत्रिका का संपादन। संपर्क: 234–एफ, शहीद भगत सिंह नगर, पखेवाल रोड, लुधियाना (पं.)–141013

कमलेश भारतीय– जन्म 17.01.1952 (होशियारपुर पं.) शिक्षा: एम.ए. हिंदी। कार्यक्षेत्र: पत्रिकारिता। दैनिक ट्रिब्यून' में वरिष्ठ संवाददाता रहे। प्रकाशन: चार कहानी–संग्रहों के अलावा चार लघुकथा संग्रह–मस्तराम जिंदाबाद, इस बार, ऐसे थे तुम, इतनी–सी बात–प्रकाशित। संपर्क: 1034बी, अरबन इस्टेट–2, हिसार–125005 (हरियाणा)।

सिमर सदोष– (मूल नाम सिमर सिंह), जन्म: 02.04.1943 गांव खन्ना लुबाना, जिला शेखूपुरा (पाकिस्तान)। कार्यक्षेत्र: पत्रकारिता। संप्रति: 'अजीत समाचार' जालंधर के संपादक। प्रकाशन: दो उपन्यास, एक कविता संग्रह एक कहानी संग्रह के अलावा 'एक मुट्ठी आसमां' लघुकथा–संग्रह प्रकाशित। संपर्क: 186/डब्ल्यू.बी., बाज़ार शेखां, सफरी मार्ग, जालंधर शहर–144001.

प्रेम विज– जन्म 15.11.1947 जालंधर। शिक्षा: एम.ए. हिंदी, एल.एल.बी.। प्रकाशन: कविता, कहानी, व्यंग्य की 14 पुस्तकें प्रकाशित। पंजाब की 'जागृति' पत्रिका के 30 वर्ष तक संपादक रहे। संपर्क: 1284, सैक्टर 37 बी, चंडीगढ़–160036।

वरयाम सिंह– जन्म 10.9.1945 चविंडा कलां, अमृतसर (पं.)। शिक्षा: एम.ए.पंजाबी, एम. फिल् पी–एच.डी.। रिटायर्ड अध्यापक। प्रकाशन: कहानी, आलोचना, जीवनी की लगभग एक दर्जन पुस्तकें प्रकाशित। पंजाबी के सुप्रसिद्ध कहानीकार। भारतीय साहित्य अकादमी से पुरस्कृत। संपर्क: 153, गोल्डन एवेन्यू, गढ़ा, जालंधर–144022(पं.)

तलविंदर सिंह– जन्म 14.02.1955 बटाला (गुरदासपुर, पं.)। शिक्षा: एम.ए. अर्थशास्त्र। प्रकाशन: कहानी, उपन्यास और संपादन–कार्य। निधन: नवंबर 2013।

महिन्द्र फारग– जन्म 07.09.1955 टौजी, साउदर्न सान स्टेट्स, बर्मा। शिक्षा: मैट्रिक, रेडियो इंजीनियरिंग डिप्लोमा। प्रकाशन: पंजाबी और हिंदी में चार–चार कहानी–संग्रह। निधन: 1996।

तरसेम गुजराल– जन्म 10.06.1950 जालंधर (पं.)। प्रकाशन: पंजाबी और हिंदी में अनेक कहानियां व लघुकथाएं प्रकाशित। संपर्क: डब्ल्यू जी, 42–बी इस्लामगंज, जालंधर (पं.)।

पांधी ननकानवी– (मूल नाम मनोहर सिंह साहनी), जन्म 06.12.1929 गांव गहिया, तह. चसवाल, जिला जेहलम (पाकिस्तान)। शिक्षा: ज्ञानी, बी.ए.। कहानी,

उपन्यास, नाटक, एकांकी, संपादन क्षेत्रों में लगभग 80 पुस्तकें प्रकाशित। निधन, फरवरी 1998।

सैली बलजीत– जन्म 07.01.49 बटाला (पं.)। शिक्षा: विद्युत इंजी. डिप्लोमा। प्रकाशन: 14 कहानी संग्रह 3 संस्मरण संग्रह, एक-एक उपन्यास, कहानी संग्रह व नाटक संग्रह के अलावा एक लघुकथा संग्रह 'आज के देवता'। संपर्क: 1288, लेन नं 4,श्री रामशरणम् कॉलोनी, डलहौजी रोड, पठानकोट-145001।

जसबीर चावला– जन्म 07.09.1953 इटावा (उ.प्र.)। शिक्षा: बी. टेक, एम.बी.ए., एम.ई. रूसी भाषा में एडवांस डिप्लोमा। प्रकाशन: आठ कविता-संग्रह, दो निबंध-संग्रह के अलावा हिंदी में छह लघुकथा संग्रह—नीचे वाली चिटखनी, सच के सिवा, आतंकवादी, कोमा में मछलियां, तैंतीसवी पुतली, शरीफ जसबीर—प्रकाशित। सपर्क: 123/1,सेक्टर 55 चंडीगढ़-160055।

कमल चोपड़ा– जन्म 21.9.1955 जगरांव, जिला लुधियाना (पं.)। शिक्षा: चिकित्सा स्नातक। प्रकाशन: चार लघुकथा संग्रह– 'अभिप्राय', 'फंगस', 'अन्यथा' (2001), 'अनर्थ' (2015) के अलावा एक कहानी संग्रह, एक बाल उपन्यास और पांच संपादित लघुकथा संकलन प्रकाशित। 'संरचना' (लघुकथा वार्षिकी) का 2008 से संपादन। संपर्क: 1600/114, त्रिनगर, दिल्ली-110035.

बलदेव सिंह खहरा— जन्म 15.8.1946 गांव ठेठर कलां, जिला फिरोजपुर (पं.)। शिक्षा: एम.बी.बी.एस., डी.ओ. एम.एस. (नेत्र विशेषज्ञ)। प्रकाशन: दो मिन्नी कहानी संग्रह– 'दो नंबर का बूट' और 'बोहरां दे सिरनावें' प्रकाशित। संपर्क: 658-फेज 3, बी-1, मोहाली- 160059

आशा शैली– जन्म 02.08.1942 अस्मान खट्टड़ (रावलपिंडी, पाकिस्तान)। शिक्षा: विद्याविनोदिनी, कहानी लेखन और पत्रकारिता के कोर्स। प्रकाशन: उपन्यास, कहानी, काव्य, उर्दू गज़ल, बाल-कविता, लोककथा आदि की पन्द्रह पुस्तकों के अलावा एक लघुकथा संग्रह-प्रभात की उर्मियाँ। 2007 से 'शैल-सूत्र' की संपादक। संपर्क: कार रोड, बिन्दुखत्ता, पो.आ. लालकुआं, जिला नैनीताल-262402।

अमरजीत सिंह— जन्म 14.11.1943 पेशावर (पाकिस्तान)। शिक्षा: एम.ए. (पंजाबी), पीएच.डी.। पूर्व प्राध्यापक व प्रशासक। लेखन-क्षेत्र: कविता, कहानी, लघुकथा। प्रकाशन: कविता-संग्रह 'रिसदे जखम'। संपर्क: ए- 17-ई, डी.डी., ए. फ्लैट्स, मुनीरका, नई दिल्ली-110067.

भीमसिंह गरचा— जन्म 13.12.1957 गाँव ढंडारी कलां (लुधियाना)। शिक्षा: बी.ए.। व्यवसाय : खेती-बाड़ी। प्रकाशन : एक गीत-संग्रह के अलावा दो मिन्नी कहानी संग्रह 'रोजगार की कसम' और 'आटे का रंग'। संपर्क : गाँव रायपुर, डाक. बीजा, तह. खन्ना-141401, जिला लुधियाना (पं.)